सरल प्रेम

है नाम प्रेम जिस जौहर का, वह जौहर सबसे निराला है।
दुनियां तो अकल से अँधी है, यहां कौन परखने वाला है।।
जो प्रेम का मोल परखते हैं, वही सच्चे जौहरी तुम जानो।
उन जौहरियों की आँख को ही बस देखने वाली तुम जानो।।
दुनियाँ में यों तो बड़े बड़े ही चतुर सयाने होते हैं।
लेकिन जो प्रेम से खाली हैं, वे मुफ्त में आयु खोते हैं।।
नहीं जिसने प्रेम का हीरा परखा, और खरीदा दुनियां में।
उसने कुछ लाभ नहीं पाया अपने जीने का दुनियां में।।
है प्रेम को पाना ही इन्सान की ज़िन्दगी का मकसद असली।
जहाँ प्रेम नहीं वह दुनियां क्याऔर क्या उस दुनियाँ की ज़िन्दगी।।
चतुराई चालाकी धोखा है आज की दुनियाँ के ज़ेवर।
शायद है यही सबब जो दुनियां रहती है दुःख में अकसर।।
जहाँ प्रेम नहीं है सच्चाई नहीं, क्यों वहाँ न हो दुःख की बरखा।
छल कपट फरेब जहाँ बसते हैं, दुःख का घर भी वहीं होता।।
गर आज की दुनियां प्रेम का जौहर परखने वाली हो जाये।
दुःख दूर हो दुनियां के सारे, हर सूँ खुशहाली हो जाये।।
हम अपने पाठक प्यारे को, इक प्रेम की कथा सुनाते हैं।
जीवन चरित्र प्रेमियों के ही, प्रेमी के मन को भाते हैं।।
यह बात पुरानी है गरचे, लेकिन सच्ची और प्यारी है।
इस कथा से जाहिर होता है, प्रेमियों का पलड़ा भारी है।।
जप तप साधन और बरत नेम, जिस दर्ज़े को नहीं पा सकते।
वहाँ प्रेमी के ही पाँव फकत बे-रोक-टोक हैं जा सकते।।
यह कथा पढ़ायेगी सबको, इक प्रेम का पाठ अनोखा ही।
और रंग चढ़ायेगी मन पर प्रेमाभक्ति का चोखा ही।।

सतयुग त्रेता और द्वापर की यह बात नहीं, कलियुग की है।
है चर्चा इसी जमाने की और, कथा इसी ही युग की है।।
ब्रजभूमि के किसी एक ग्राम में एक ब्राह्मणी रहती थी।
विधवा नारी थी निर्धन थी, कंगाली के दुःख सहती थी।।
जाकर पड़ोस के घरों में वह, चौका बर्तन कर आती थी।
मज़दूरी की सूरत में उससे, कुछ अनाज पा जाती थी।।
इस तरह वह अपना और अपने, नन्हे का गुज़र चलाती थी।
मोहन नन्हा सा बालक था, जी जान से उसको चाहती थी।।
धन दौलत कुछ नहीं रखती लेकिन प्रेम से मालामाल थी वह।
सच्ची दौलत से दौलतमन्द थी, ज़ाहिर में अगर कंगाल थी वह।।
दुनियाँ की नज़रों में बेशक, दुनियावी दौलत सब कुछ है।
प्रेमी की नज़रों में लेकिन प्रभु की ही मुहब्बत सब कुछ है।।
इस तरह वह अपने प्रभु के प्रेम में मगन हमेशा रहा करती ।
कंगाली की सब तकलीफें हँसते हँसते ही सहा करती ।।
छः बरस का मोहन हुआ, तो माता के दिल में यह ख्याल आया।
अब विद्या पढ़ने सीखने के लायक हो गया मेरा बेटा।।
अब इसे किसी विद्यालय में पढ़ने को बिठा देना चाहिये।
किसी पण्डित के हाथों में हाथ इसका पकड़ा देना चाहिये।।
उस गाँव में बच्चों के पढ़ने का बन्दोबस्त कहीं नहीं था।
छः कोस दूर उस गाँव से लेकिन इक पण्डित रहता था।।
ले गई उसी के पास वह बच्चे को माँ दुःख की मारी हुई।
कुछ पास नहीं क्या दे पण्डित को, हाये मुश्किल भारी हुई।।
बेचारी ने मिन्नत करके पण्डित को राज़ी कर ही लिया।
पण्डित ने वहाँ बगैर फीस बच्चे को भरती कर ही लिया।।
पण्डित के इस एहसान का दिल से शुक्रबजाती हुई माता।

बालक को दाखिल करके चली आनन्द मनाती हुई माता।।
मोहन रोज़ाना पढ़ने को, शाला में आने जाने लगा।
जी जान से वह पढ़ने में लगकर अपनी जी बहलाने लगा।।
बच्चा विद्या पढ़ने में लगा है देख देख माता खुश थी।
लेकिन फिर एक बढ़ी कठिनाई बीच में आन के टपक पड़ी।।
जाता था सुबह को घर से मोहन, शाम को वापिस आता था।
रस्ते में एक घना जंगल था, जिससे वह घबराता था।।
घर तक आते आते वापिस, अन्धेरा बढ़ने लगता था।
बीहड़ जंगल में अकेले बालक को डर लगने लगता था।।
आखिर इक दिन रो रोकर बच्चे ने, माँ से सब बात कही।
बोला, माता जंगल हैं भयानक, मैं होता हूँ अकेला ही।।
रह रहकर उस जंगल से गुज़रते काँप कांप दिल जाता है।
साथी कोई पास नही होता, भर भरकर रोना आता है।।
जितने भी दूसरे बच्चे हैं, विद्यालय में पढ़ने वाले।
वे सब के सब हैं दूसरे ही ग्रामों के बस रहने वाले।।
उन सब के चाचा ताया मामा, बाप या भाई आते हैं।
विद्यालय में पहुँचाते हैं और शाम को घर ले जाते हैं।।
क्या मेरा कोई नहीं माता जो मुझको लेने आया करे।
कम से कम जंगल से तो मुझे घर तक कोई पहुँचाया करे।।
इतना कह कर माता की गोद में दुबक के रोने लगा मोहन।
अपने भोले भाले मुख को आंसुओं से धोने लगा मोहन।।
देखा जब रोते बालक को माँ के भी आँसूं निकल आये।
जज़बात जो दिल में भरे हुये थे, पानी बनकर ढल आये।।
इस भोले भाले बालक को किस तरह वह हाये समझाये।
किस तरह तस्सली दे उसको कैसे उसका जी बहलाये।।

किस मुँह से कहे बेटा बेटा दुनियाँ में तेरा कोई नहीं।
तुझको सीने से लगाने वाला तेरा प्यारा कोई नहीं।।
तू है अनाथ और बेसहारा यह बात भी कह नहीं सकती थी।
नन्हा सा टूट न जाये दिल, बच्चे का माता डरती थी।।
रोकर बोली बेटे तेरा गोपाल ही है कोई और नहीं।
गोपाल वही दुखियों की जिसके बगैर और कोई ठौर नहीं।।
गोपाल है कौन, क्या मेरा लगे, कहाँ रहता है बतला माता।
कैसा रंग-रूप है भेस है क्या, मैने तो नहीं देखा माता।।
बच्चे ने इतना पूछा तो माता रो रोकर कहने लगी।
कुर्बान मैं तुझपर अच्छे बेटे, सब कुछ तेरा लगे वही।।
गोपाल पिता भी है तेरा, बन्धु भाई और मीत सखा।
जिस नाते से समझे कोई, बन जाता है झटपट वैसा।।
हर जा रहता है वह हाज़िर, ज़र्रे ज़र्रे में समाया हुआ।
जंगल में गौएँ चराता है, इससे गोपाल है नाम पड़ा।।
हर भेस में है, हर रंग में है, हर रुप में वह नटखट रहता।
जिस भावना से जिसने भी पुकारा, उसी रूप में वह आता।।
ज्ञान और योग की बात भला बच्चे की समझ में क्या आती।
वह तो बस इतना समझ सका, है उसका कोई भाई भी।
गोपाल है जिसका नाम और जो जंगल में गौएं चराता है।
पूछा, माता वह भैय्या हमारे घर क्यों कभी न आता है।।
क्या तूने उसे कभी मारा या मुझसे रूठ गया है वह।
मैंने तो बिगाड़ा कुछ भी नहीं, फिर मुझपर क्यों बिगड़ा है वह।।
कभी एक भी दिन गोपाल भाई मुझसे नहीं खेलने को आया।
कैसा भाई है जिसने कभी गले से भी नहीं चिमटाया।।
माँ बोली, देख अच्छे बेटे ऐसी बातें न किया करते।

वह तुझसे बड़ा है,तू छोटा, नहीं बड़ों से बस मचला करते।।
तूने कभी उसे बुलाया नहीं, इसलिये कभी वह आया नहीं।
सच्ची पुकार करने के सिवा, किसी शख्स ने उसको पाया नहीं।।
जब किसी पे कोई बने मुश्किल, मुश्किल में उसे जो याद करे।
वह हाथ पकड़ता है फौरन, ज्योंही कोई फरियाद करे।।
जंगल में से आते जाते जब तुझको खौफ लगे बेटा।
गोपाल का नाम पुकारोगे, तो आकर मदद करे बेटा।।
जीती रहो अम्माँ यह तुमने गुर क्या उमदा सिखलाया है।
मैं ऐसा ही अब करूँगा, तेरा कहना दिल पे लगाया है।।
इतना कहते हुये मोहन के चेहरे पर खुशी झलक आई।
बच्चे के डरे हुये दिल ने कुछ कदर तस्सली अब पाई।।
दूसरे ही दिन जब लौट रहा था, घर की तरफ पढ़कर मोहन।
पहुँचा नज़दीक उसी जंगल के कदम कदम बढ़कर मोहन।।
अन्धेरा चारों तरफ से बहुत ही घिर घिर कर छा जाने लगा।
हर दिन की तरह अकेला बालक आज भी फिर घबराने लगा।।
जब बहुत उसे डर लगने लगा, तो बात माता की याद आई।
वह जोर जोर से लगा पुकारने, आ जाओ गोपाल भाई।
दो तीन लगाई आवाज़ें, कुछ भी न जवाब आया बिल्कुल।
बच्चा समझा, शायद मेरा भाई नहीं सुन पाया बिल्कुल।।
तब और भी ऊँचे सुर से लगा पुकारने, औ गोपाल मेरे।
मैं कब से तुम्हें बुलाता हूँ, तुम कहाँ हो, क्यों नहीं आ जाते।
देखो मुझको डर लगता है, आ भी जाओ अच्छे भैय्या।
घर तक मुझको पहुँचाओगे, कल मुझसे कहती थी मैय्या।।
लेकिन इतना सब होने पर भी जब गोपाल नहीं आये।
बेचैन हुआ नन्हा मोहन, रो रो कर कहने लगा, हाये।

क्या तुमने भैय्या सुना नहीं, शायद कुछ ऊँचा सुनते हो।
या सुनते हुये भी नहीं आते, क्या बात जो दिल में गुनते हो।।
या माँ का कहना झूठा है, या फिर तू भैय्या रूठा है।
आ देख मेरा रोते रोते आँसुओं का तार भी टूटा है।।
यों कहते हुये बस फूट फूट कर वह रोने चिल्लाने लगा।
रोते रोते वह सुबकने लगा,जंगल को सिर पे उठाने लगा।।
मोहन रोया, इतना रोया, रो रो कर हिचकी बँधी उसकी।
जंगल का कलेजा दहल गया, थर थर काँपी हर इक झाड़ी।।
पौधे पौधे पै उदासी मायूसी की रंगत छाने लगी।
गमगीन हवा भरकर सिसकी पेड़ों को गले लगाने लगी।।
छाया वह समाँ गमगीनी का, कुछ जिसका नहीं ब्याँ होता।
कोना कोना उस जंगल का, मोहन के दर्द से तड़प गया।।
तब एक तरफ से अचानक मीठी मीठी मुरली बज उठी।
और मुरली के पर्दों में से घनघोर आवाज़ गरज़ उठी।।
आता हूँ आता हूँ भैय्या मत डर मोहन भैय्या मेरे।
मैं दूर कहाँ हूँ तुझसे भोले देख खड़ा हूँ पास तेरे।।
और तभी किसी ने मोहन के नन्हें से हाथ को थाम लिया।
मोहन ने आँख उठाई, सामने देखा है गोपाल खड़ा।।
साँवली सुहानी रंगत थी, पीताम्बर तन पर ओढ़ा हुआ।
इक नूर का हाला सा रौशन माथे पर खूब झलकता हुआ।।
हाथों में मुरली थी उसके, घुँघराले बाल थे कन्धों पर।
मीठी मीठी दिल खींचनेवाली हल्की हँसी थी होठों पर।।
रोता हुआ और सुबकता हुआ, मोहन गोपाल से लिपट गया।
भैय्या भैय्या मेरे भैय्या आ गये आखिर अच्छे भैय्या।।
पुचकारते और मुस्काते हुये बोला गोपाल, मेरे भैय्या।

जब दिल से पुकारा था तूने, फिर कैसे भला मैं नहीं आता।
लो नन्हें मुन्ने लाल मेरे पहले थोड़ा माखन खा लो।
मैं तेरे लिये ले आया हूँ, भाई की बात को मत टालो।
यह कहकर मक्खन का पेड़ा मोहन के मुख में भरने लगा।
लीलाधारी नटनागर यों बच्चे से लीला करने लगा।।
जहां दिल की सच्ची पुकार हो तो गोकुल का ग्वाला आता है।
भक्तों के कष्ट मिटाने भक्तों का रखवाला आता है।।
गोपाल भाई हो रखवाला जिसका, फिर उसे किसी का डर कैसा।
खुद शेर की मिले पनाह जिसे, गीदड़ से उसे खतरा कैसा।।
जमदूत तो क्या खुद जम-राजा और महाकाल की ताब कहाँ।
भक्तों को दुःख दे सके कोई, दुश्मन में इतना आब कहाँ।।
उँगली से पकड़कर मोहन को, गोपाल ने अपने साथ लिया।
खुश होकर मोहन ने भी थाम, अपने भैय्या का हाथ लिया।।
मीठी मीठी बातें करते, हाथों में हाथ डाले दोनों।
मस्ती में गाँव की तरफ चले, वे प्रेम के मतवाले दोनों।।
गोपाल प्यार की बातें भी, मोहन को सुनाता जाता था।
पुरलुत्फ कहानियों से नन्हें बालक को हँसाता जाता था।।
यह जोड़ी लगती थी मानो राम और लक्ष्मण की जोड़ी।
या जैसे बनाई विधाता ने है प्राण और तन की जोड़ी।।
इस सुन्दर फूल सी जोड़ी पर जब फूलों की वर्षा करने लगे।
मोहन की ऊँची किस्मत पर देवता भी ईर्ष्या करने लगे।।
बातों बातों में वक्त गुज़रने का कुछ पता न चला उन्हें।
कब पहुँच गये गाँव के निकट, महसूस न कुछ हो सका उन्हें।।
बाहर गाँव के मन्दिर था, उस तक गोपाल ने पहुँचाया।
फिर बोला,अब मैं चलता हूँ, वह देख तेरा घर दिखलाया।।

बस इसी तरह रोज़ाना भैय्या साथ तेरे मैं आऊँगा।
जंगल से लेकर इस मन्दिर, तक तुझको मैं पहुँचाऊँगा।।
अब डरने की कुछ बात नहीं, है सामने घर तेरा मोहन।
जाकर अपनी माता से कह देना प्रणाम मेरा मोहन।।
यह कहकर बालक मोहन से रुखसत हो गया गोपाल भाई।
मोहन ने बहुत कहा, घर तक भी चलो ज़रा गोपाल भाई।।
गौएं बन में चर रहीं हैं, कोई उन्हें न चुराकर ले जाये।
या जंगल का ही कोई पशु, नुकसान न उनको पहुँचाये।।
उनकी रखवाली ज़रूरी है, इसलिये मुझे अब जाने दो।
कल फिर हम मिलेंगे,बस इतना कहकर गोपाल चले गये।।
घर पहुँचा मोहन तो माता उसका ही रास्ता देखती थी।
हो चुकी थी चूँकि देर आज, इसलिये वह सोच में डूबी थी।।
देखा बालक को आते हुये, दौड़ी और गले लगाया उसे।
लीं उसकी बलायें, मुख चूमा, और गोदी में बिठलाया उसे।।
फिर पूछा प्यार से, इतनी देर लगाई क्यों बेटा मोहन।
क्या भूल गया था आज तू अपने ही घर का रस्ता मोहन।।
या देर से छुट्टी मिली तुझे या रस्ते में कहीं बैठ रहा।
या आज अनोखी बात कोई तुझपर, गुज़री बेटा बतला।।
हाँ बात अनोखी ही गुज़री, तू ठीक ही कहती है माता।
मिल गया था आज गोपाल भैय्या,मैं उसी के साथ ही घर पहुँचा।।
यह सुना जो मोहन के मुख से, माता की आँखें चमक उठीं।
चेहरे की झुर्रियाँ मोतीं लड़ियाँ बन गई, दमक उठी।।
बोली खुश होकर क्या सचमुच गोपाल भाई मिल गया तुझे।
मोहन बोला, और क्या तू समझती है मैं झूठ कहूँगा तुझे।।
वह मेरे साथ खेला भी था, माखन भी मुझे खिलाया था।

और हाथ पकड़कर जंगल से मन्दिर तक मुझको लाया था।।
वह कहता था, मैं इसी तरह रोज़ाना आऊँगा भैय्या।
अब मुझे नहीं डर लगने का, गोपाल के साथ सुनो मैय्या।।
बच्चे की भोली बातें सुनकर खुशी से माता झूम गई।
उसके दिल की दुनियाँ मानो इक नये मोड़ पर घूम गई।।
तू धन्य है बेटा, धन्य है तू और कूख भी मेरी धन्य हुई।
तूने पाया है आज उसे, नहीं जिसको पा सकते योगी।।
लाखों ही पड़े तप करते और करोड़ सयाने भटकते हैं।
उस अगम अपार अगोचर का, पर भेद नहीं पा सकते हैं।।
इक सरल प्रेम के बन्धन में है उसी को तूने बाँध लिया।
मैं लाख बार वारी तुझपर, बलिहारी बलिहारी बेटा।।
इतना कहते कहते माँ की आँखों से आँसूं बरसने लगे।
दिल में जो प्रेम के भाव भरे थे आँख की राह छलकने लगे।।
भाई के रूप में मोहन ने, उस दीनबन्धु को यों पाया।
बच्चे ने पकड़ा उसे जो शहजोरों के हाथ नहीं आया।।
क्या अजब प्रेम की लीला है, क्या खूब यह प्रेम की दुनियाँ है।
कोई इसका ब्यान करे कैसे, यह एक अनोखी रचना है।।
उस दिन के बाद रोज़ाना ही, मोहन गोपाल मिला करते।
दोनों भाई जंगल में मीठी प्यार की बातें किया करते।।
अकसर गोपाल मिठाई मेवा और खिलौने लाता था।
छोटे भाई को बड़े प्यार से अपने हाथों खिलाता था।।
बस गाँव के बाहर मन्दिर तक, रोज़ाना उसको पहुँचाकर।
जंगल की तरफ वापिस हो जाता, वह मनमोहन नटनागर।।
एक बार पण्डित के घर में श्राद्ध था उसकी माता का।
धूम-धाम से श्राद्ध मनाने का वह इरादा रखता था।।

विद्यालय के सब बच्चों को, पण्डित ने दी आज्ञा ऐसी।
सब ही समिधा लेकर आये, श्रद्धा जिस जिस की हो जैसी।।
घी,दूध,अनाज,चावल,आटा,जो कुछ भी जिस जिस के घर हो।
ले आये शुभ कारज में हिस्सा, सबका ताकि बराबर हो।।
मोहन ने अर्ज़ किया, पण्डित जी मैं भी कल कुछ ले आऊँ।
हूँ तो गरीब माँ का बेटा, लेकिन कुछ पुण्य भी मैं पाऊँ।।
पण्डित बोले, जा जा कंगले तुझसे यह किसने कहा मूर्ख।
घर में तेरे रखा ही क्या, जो लेकर आयेगा मूर्ख।।
यह डाँट सुनी जब तो दिल बच्चे का दुःख से भरपूर हुआ।
खामोश रहा करता भी क्या, किस्मत से था मज़बूर हुआ।।
घर जाकर माँ से बात कही, माँ बोली, सच ही तो है बेटा।
पण्डित के श्राद्ध में देने को अपने घर में है धरा ही क्या।
लेकिन माता खाली जाते तो, नयन मेरे शरमायेंगे।
विद्यार्थी सब वहाँ बड़ी बड़ी उमदा चीज़ें ले आयेंगे।।
मुझे और नहीं तो इक लुटिया भर दूध ही बस ला दे माता।
माँ बोली रोकर, कौन हमें लौटा भर दूध देगा बेटा।।
हाँ लेकिन जंगल में बेटे तेरा गोपाल भाई जो है।
लेकर ही तूझे गर जाना है, भैय्या से जाकर माँग ही ले।।
अगले दिन सुबह को पाठशाला जाने जंगल में जब पहुँचा।
गोपाल भाई को मोहन ने आवाज़ लगाना शुरु किया।
आया जवाब, क्या बात है मोहन किसलिये मुझे बुलाते हो।
इस वक्त तो दिन है रात नहीं, जंगल से खौफ क्यों खाते हो।।
मोहन बोला, डरने की बात नहीं, मेरे अच्छे भैय्या।
लेकिन इक काम ज़रूरी है, आ भी जाओ झट से भैय्या।।
मोहन ने इतना कहने पर गोपाल तुरन्त वहाँ आया।

सब बात कही बच्चे ने और इक लोटा दूध का मँगवाया।।
मैं पहले ही ले आया हूँ तेरे लिये लौटा दूध भरा।
ले जा इसको और अपने पण्डित जी के पास इसे पहुँचा।।
यह कहकर पीछे वाला हाथ गोपाल ने अपना किया आगे।
छोटी सी लुटिया दूध भरी जिसमें पकड़ी हुई थी उसने।।
खुश होकर दूध की लुटिया को मोहन हाथों में थाम चला।
और इधर उसी जंगल में वापिस गोकुल का घनश्याम चला।।
भैय्या से पाकर दुध का लौटा और खुशी से उछलता हुआ।
पण्डित के पास मोहन पहुँचा फूला न समाया मचलता हुआ।।
मसरूफ बहुत थे पण्डित जी करने थे उनको काम बड़े।
गुज़री कितनी ही देर उधर मोहन को वहाँ पे खड़े खड़े।।
इधर से उधर गुज़र जाते पण्डित जी जल्दी जल्दी से।
मोहन हर बार यह कहता था पण्डित जी दूध मेरा लीजे।।
पण्डित जी सुनते मगर कहाँ लेनी थी भेंट उन्हे सब की।
धनवान घरों के बड़े घरों के लाये थे शागिर्द सभी।।
मोहन को किसने पूछना था उन बड़े बड़ों के हुल्लड़ में।
तोते की कौन सुने बोली नक्कारों को धम-धुक्कड़ में।।
बार बार जब मोहन पण्डित को अर्ज़ सुनाने लगा।
पण्डित जी खफा होकर बोले, क्यों अरे मगज़ है खाने लगा।।
दूध इसका भी डलवा लो कहीं, ले जाओ इसे कोई भाई।
चाटे है दिमाग ऐसे जैसे लाया है कोई सौगात बड़ी।।
पण्डित की अकल कहाँ समझे, क्या लेकर मोहन आया था।
क्या खबर उन्हें इक दूध का सागर इस लुटिया में समाया था।।
शागिर्द बढ़ा इक पण्डित का, मोहन को उसने साथ लिया।
भण्डार में ले जाकर इक बर्तन में जब लोटा को उलटा।

भर गया वह बर्तन और अभी तक लोटा भरा भरा ही रहा।
कितने ही कड़ाहे और भरे, कितनी ही देगों में डाला।।
हैरान हुये सब देख देख, भण्डार के बर्तन भरे सभी।
मोहन की लुटिया लेकिन खाली हो न सकी अब भी तब भी।।
इस बात की खबर मिली पण्डित को, उसकी अकल भी चकराई।
जो प्रेम की अदभुत महिमा थी वह फिर भी समझ नहीं पाई।।
पूछा मोहन से, दूध यह जादू भरा कहाँ से लाया था।
वह बोला, पण्डित जी मेरा गोपाल भाई ले आया था।।
तेरा तो कोई भाई नहीं तेरी माँ मुझसे कहती थी।
फिर कौन है यह गोपाल भाई यो कहने लगे तब पण्डित जी।।
गोपाल वही जो जंगल में रहता है मोहन ने यह कहा।
जो गोएँ चराया करता है, जो मुझको घर तक ले जाता।।
कुछ कुछ अब आँखें खुलीं पण्डित की मोहन की बातें सुनकर।
समझे, गोपाल भाई इसका है वही निराला जादूगर।
तब बोले खुशामद से पण्डित जी, ऐ मेरे अच्छे बेटे।
तेरे गोपाल के देखने को, मैं आज चलूंगा साथ तेरे।।
यह तेरी मेहरबानी होगी, मुझको दर्शन भी करा देना।
मोहन बोला, वाह पण्डित जी, इस बात में है मुश्किल ही क्या।।
वह बड़ा ही अच्छा है मेरा जंगल वाला गोपाल भाई।
आ जाता है फौरन, ज्यों ही आवाज़ मेरी बस सुन पाई।।
जब शाम हुई, तो घर की तरफ मोहन लौटा छुट्टी पाकर।
और साथ में उसके चले पण्डित जी,प्रभु के दर्शन की खातिर।।
जंगल में पहुँचे दोनों तो, मोहन आवाज़ लगाने लगा।
आ जाओ मेरे गोपाल भाई. मैं घर की तरफ हूँ जाने लगा।।
आवाज़ यह जंगल से आई, मेरे आने की ज़रूरत क्या।

तू आज अकेला नहीं मोहन, फिर डरने की है सूरत क्या।।
होता तू अकेला मेरे भैय्या, मैं आ जाता झटपट फौरन।
लाया है साथ पण्डित को तू मैं आ नहीं सकता मजबूरन।।
मोहन लेकिन हठ करने लगा, बच्चा था रोने मचलने लगा।
आ जाओ मेरे भैय्या, मेरा कौल है झूठा पड़ने लगा।।
पण्डित जी कहेंगे इसका कहना झूठ ही था, गप थी कोरी।
तुम्हें मेरी कसम आओ भैय्या बस मुझपे दया करदे थोड़ी।।
ले देख हठीले भोले भैय्या, मैं हूँ तेरे पास खड़ा।
इतना कहकर गोपाल ने फौरन, मोहन का पंजा पकड़ा।।
आहा भैय्या, अच्छे भैय्या, देखा, पण्डित जी कैसी रही।
खुश होकर मोहन चिल्लाया, क्यों हुई न बात मेरी सच्ची।।
मैं कहता नहीं था, मेरा भैय्या झटपट ही आ जाता है।
देखो यह कितना अच्छा है, मेरी बात नहीं पलटाता है।।
दोनों हाथों से ताली बजाकर, मोहन खुशी जताने लगा।
लेकिन पण्डित बेचारा तो, दिल ही दिल में घबराने लगा।।
उसको दर्शन नहीं होता था, आवाज़ मगर सुनता था वह।
मोहन का उछलना देख देख, बस अपना सिर धुनता था वह।।
गुज़री थी उमर जो इतनी, विद्या ही के पढ़ाने-पढ़ने में।
इक प्रेम की विद्या आई नहीं थी लेकिन उसके समझने में।।
यह प्रेम की अदभुत लीला थी, हाँ सरल प्रेम की माया थी।
पण्डित के तो मन पर लेकिन, अभिमान की गहरी छाया थी।।
दर्शन प्रभु का कैसे हो जब तक, मन में सरलता आई नहीं।
दिल से अपने अभिमान की जब तक,मैल किसी ने हटाई नहीं।।
बोले पण्डित तेरा भैय्या मुझको तो नज़र न आता है।
आवाज़ सुनी बेशक लेकिन, मुखड़ा क्यों नहीं दिखलाता है।।

मैं समझता हूँ इस बात को भी, दर्शन का मैं अधिकारी नहीं।
लेकिन मोहन, तेरा भैय्या, क्या दीनों का हितकारी नहीं।।
मुझको भी मोहन अपने भैय्या का दीदार करा दे ज़रा।
यह मान ले अर्ज़ मेरी, जन्मों के मेरे पाप कटा दे ज़रा।।
पण्डित की देख के दीन दशा, बच्चे के दिल में दया आई।
अपने भैय्या से मचल के बोला, देख मेरे गोपाल भाई।।
मेरे अच्छे प्यारे भैय्या, अब इतनी दया कीजै।
मेरा पण्डित से वादा था, दर्शन इनको दिखला दीजै।।
मोहन की बात को झुठलाना, गोपाल से कैसे मुमकिन था।
फौरन ही पण्डित जी को भी, दर्शन अपना बस दिखलाया।।
हो गया निहाल दर्शन पाकर पण्डित, सब पाप मिटे उसके।
मन की सब मैल धुली पल भर में भाग्य जाग उठे उसके।।
इस तरह साथ साथ तीनों, मोहन के घर की तरफ चले।
उस रोज न गाँव के मन्दिर से, गोपाल भाई वापिस पलटे।।
घर तक मोहन के चले आये, वे हँसते बातें करते हुये।
दोनों घर अपने प्रेम की मीठी सी बरसातें करते हुये।।
घर पहुँचे, मोहन चिल्लाया, देखो देखो मेरी मैय्या।
देखो मेरे साथ आये हैं, यह आज मेरे गोपाल भैय्या।।
यह कहकर हाथ पकड़ गोपाल को, माँ की गोद में बिठलाया।
हो गई धन्य दर्शन पाकर, विधवा ने जन्म का फल पाया।।
यह प्रेम की ऊँची महिमा है, यह प्रेम की अदभुत माया है।
जिसने छल-कपट को त्याग दिया, उसने भगवान को पाया है।।

नाम का महिमा

एक बार श्री अवधपुरी में गुरु-पूजा का त्यौहार हुआ।
सब ऋषि मुनि एकत्र हुये, शुभ दिन यह मगंलाचार हुआ।।
स्वर्ग से देवता आये थे और देव ऋषि श्री नारद भी।
उत्तम ब्राह्मण बुलवाये गये, राजा महाराजा आये सभी।।
सबकी पदवी के योग्य वहाँ थे सुन्दर आसन बने हुये।
दर्ज़ों के मुताबिक जुदा जुदा हर एक ढंग से सजे हुये।।
सबसे ऊँचे दो अलग सिंहासन थे दो महापुरुषों के लिये।
श्री मुनि-वसिष्ठ श्री विश्वामित्र, श्री राम के पुज्य ये दोनों थे।।
दोनों ब्रह्म-ऋषि महा तेजस्वी, राम के गुरु कहाये थे।
थे एक रुहानी गुरु, तो दूसरे ने शस्त्र सिखलाये थे।।
इन दोनों से कुछ नीचे हटकर दीगर ऋषियों-मुनियों के।
और विद्वानों पण्डितों की खातिर यथायोग्य सब आसन थे।।
फिर उनसे कुछ नीचे थे छत्रपति राजाओं के आसन।
सबके सब सुन्दर सजे हुये और सब में जड़े रतन-आभूषण।।
औरों से अलैहदा कोने में श्री रामचन्द्र जी के कारण।
राजाओं में सबसे उज्जवल सबसे उत्तम था सिहांसन।।
आकाश में दिव्य विमानों ने झिलमिल झिलमिल झलकाई थी।
यह शोभा देख अवध की स्वर्गपुरी भी आज लज्जाई थी।।
सबसे पहले मुनि वसिष्ठ जी आन पधारे आसन पर।
श्री विश्वामित्र भी हुये विराजमान अपने सिंहासन पर।।
ऋषियों मुनियों ने आ आकर आसन अपने सँभाल लिये।
जो जिस पदवी के योग्य हुये, अपनी जगहों पर जा बैठे।।
राजा महाराजा सब देशों के तभी सभा में आने लगे।
ऋषियों मुनियों को नमस्कार बारी बारी करते जाते।।

बस उसी समय वहाँ आन पधारे देव मुनि श्री नारद जी।
वीणा को मधुर बजाते हुये, मुख से गाते हुये नाम हरि।।
सब सभा ने उठकर आदर से नारद जी को प्रणाम किया।
श्री नारद ने उत्तम सिंहासन पर जाकर विश्राम किया।।
उनको सिंहासन दिया गया सब ऋषियों मुनियों से आगे।
क्योंकि वे देव मुनी थे और सबही के पूजनीय भी थे।।
राजा महाराजा आते थे और सबको सीस नवाते थे।
एक एक मुनी को नमस्कार कर कर सब बैठते जाते थे।।
नारद जी के मन में आई, कुछ कौतुक आज रचा जाये।
गुरु पूजा के इस अवसर पर, इक नया खेल खेला जाये।।
थे सबके आगे देव-मुनि, पहले वहाँ आते सब राजा।
इनको कर नमस्कार सबका, तब आगे बढ़ना होता था।।
इक राजा था स्वास्तिक नाम, सबसे आया था जो आखिर।
जब शीश नवाया उसने श्री नारद जी के चरणों में आकर।।
फूँका तब कान में उसके श्री नारद जी ने मन्त्र निराला ही।
बोले राजन, यह जितनी भी ऋषियों मुनियों की सभा लगी।।
हैं सभी तुम्हारे पूजनीय, सबको प्रणाम करते जाना।
श्री विश्वामित्र मुनी को लेकिन ख्याल रहे छोड़े जाना।।
ऋषियों में अगरचे बैठे हैं परन्तु वास्तव में क्षत्रि हैं।
वे भी क्षत्री तुम भी क्षत्री, मत नमस्कार तुम करो उन्हें।
झुके जो क्षत्री दूसरे क्षत्री के आगे, यह नीति नहीं।
राजा के राजा करे दण्डवत, यह तो शास्त्र की रीति नहीं।।
स्वास्तिक जी झाँसे में आये, वह पट्टी पढ़ाई नारद ने।
बैठे बिठलाये सभा में सोती जगाई नारद ने।।
राजा स्वास्तिक ने वही किया,जो नारद जी ने सिखलाया।

नहीं विश्वामित्र के आगे झुका, सबको प्रणाम वह कर आया।।
जब कि सभा में सब राजाओं ने किया पूजन और नमस्कार।
दिल से श्री विश्वामित्र मुनी का, किया विधी के अनुसार।।
केवल राजा स्वास्तिक का जो, आचरण न सबके समान हुआ।
यह भारी सभा में खुल्लम खुल्ला ही उनका अपमान हुआ।।
तब गुस्से में भरकर श्री विश्वामित्र मुनी ने वचन कहा।
ऐ राम हमें क्या इसीलिये बस सभा बीच बुलवाया था।।
ताकि तुम भरी सभा में यों, अपमान हमारा कराओगे।
आते न यहाँ हम हरगिज़ जो यह जानते यों पेश आओगे।।
या तो अब इस अभिमानी राजा का सिर तन से जुदा करो।
वरना हम यहाँ से जाते हैं बस फौरन हमको विदा करो।।
दुविधा में बड़ गये रामचन्द्र, यह बना धर्मसंकट भारी।
है एक तरफ अपमान मुनी का, एक तरफ शास्त्र नीति।।
ऋषि के अपमान को सह जाऊँ, यह भी तो मुझसे होगा नहीं।
घर आये अतिथि को मारूँ, यह भी शास्त्र की मर्यादा नहीं।।
कुछ देर सोच में मगन रहे, मन ही मन में कुछ निर्णय किया।
तब हाथ जोड़कर मुनिवर के चरणों में ऐसा विनय किया।।
महाराज सभा में बुलाये हुये, राजा को मारना ठीक नहीं।
पूजा के यज्ञ में विघ्न पड़े, मर्यादा की यह लीक नहीं।।
बस विघ्न बिना इस यज्ञ को नाथ, समाप्त हो जाने दीजै।
हाँ तीन दिनों की मुहलत केवल, सेवक को पाने दीजै।।
वचन रहा मेरा चौथे दिन इसका सीस उड़ाऊँगा।
ब्रह्म-ऋषि जी के अपमान का बस,स्वास्तिक को मज़ा चखाऊँगा।।
बोले विश्वामित्र, मैं कैसे मानूँ बात निभाओगे।
तुम ठहरे राजा महाराजा,दो दिन में बात भुलाओगे।।

हो जाये मुझे विश्वास अगर तुम दृढ़ प्रतिज्ञा कर डालो।
सौगन्ध किसी की खाओ अगर, जो सबसे बढ़कर प्यारा हो।।
बोले तब श्री रामचन्द्र, ऐ मुनिवर करूँ प्रतिज्ञा मैं।
जिसके मन में, जिसके चित्र में जिसके हर भाव में बसता मैं।।
तीनों लोकों में जिसका केवल मैं ही एक सहारा हूँ।
जो प्राणों से प्रिय मेरा, मैं जिसका प्राणों से प्यारा हूँ।।
जिस सेवक के हृदय में मैं, रहता हूँ सदा ही बसा हुआ।
जिस प्रेमी के मैं रोम रोम में, रहूँ हमेशा रमा हुआ।।
उस महाभाग हनुमन्त से बढ़कर, मेरा प्यारा कोई नहीं।
तीनों लोकों में मेरा सचमुच और सहारा कोई नहीं।।
उस हनुमान की सौगन्ध है, मैं अपना वचन निभाऊंगा।
बदला अपमान तुम्हारे का, मैं ऋषि जी अवश्य चुकाऊँगा।।
आज से चौथे दिन जब धनुष पे मेरे बाण चढ़ा होगा।
मस्तक अभिमानी स्वास्तिक का, पल भर में तन से जुदा होगा।।
है खाई कसम जो प्यारे की, अब मुझको कौन हटा सकता।
सृष्टि में ऐसा कोई नहीं, जो उसके प्राण बचा सकता।।
आपस में यह बात हुई, सभा सकी नहीं जान।
यों प्रतिज्ञा से रहे, नावाकिफ, हनुमान।।
परन्तु स्वास्तिक ने लिया, सुन सारा वृतान्त।
सिर से पाँव तक उठा, डर के मारे काँप।।
तब गया पास वह नारद के, ऐ मुनिवर, अब रक्षा कीजै।
जिस तरह कि मुझे फँसाया है, वैसे ही छुटकारा कीजै।।
भगवान राम ने मेरे मारने की है कठिन प्रतिज्ञा की।
और अपने प्राणसखा हनुमन्त की, खाई उन्होंने सौगन्ध भी।।
श्री नारद बोले, राजा अगर श्री राम ने किया है प्रण ऐसा।

तब मृत्यु तुम्हारी निश्चित है, नहीं कोई तुम्हें बचा सकता।।
शिव और ब्रह्मा के लोकों में भी राजन चाहे चले जाओ।
बचने की जगह न पाओगे, चाहे त्रैलोकी में फिर आओ।।
राजा ने कहा ऐसा न कहो मुनिवर, हरगिज़ ऐसा न कहो।
इस सारे उपद्रव का कारण भी देव ऋषि जी आप ही हो।।
ऋषि का मुझसे अपमान हुआ, तो हुआ आपके कहने से।
वरना क्या लाभ मुझे था मुफ्त का झगड़ा मोल ले लेने से।।
अब देव ऋषि जी आशा है, इस आई बला को टालोगे।
फँसने का ढँग निकाला था, बचने का उपाय निकालोगे।।
नारद बोले, हाँ एक उपाय है, जो काम में लाओ तुम।
बस आरति-भाव से महावीर, की शरण में फौरन जाओ तुम।।
श्री राम का नाम न बतलाना, कहना है एक बड़ा राजा।
जो मुझ निर्दोष के प्राणों का, है मुफ्त में गाहक बना हुआ।।
वह बलशाली राजा है उससे, मुझ निर्बल को बचा लीजै।
तुम संकट-हरन कहलाते हो, संकट से मुझे छुड़ा लीजै।।
हनुमान बचावें तो सम्भव,वरना बच सकना असम्भव है।
जो राम ने ठानी है मन में, वह बात बदलना असम्भव है।।
यह सुनकर स्वास्तिक गया, श्री हनुमन्त के पास।
त्राहि त्राहि ऐ महाबली, शरण पड़ा यह दास।।
संकट मोचन दुःख हरन, संकट दीजै टारि।
जाकी तुम रक्षा करो, कोई सके नहीं मारि।।
ऐ महावीर ऐ पराक्रमी, मझ दीन पै आई विपदा है।
मेरे प्राणों के पीछे पड़ा, इक तेजस्वी महाराजा है।।
उस राजा ने यह प्रण ठाना, मारूँगा आज से चौथे दिन।
मेरे अब प्राण बचा लीजै, ए दीननाथ दुःख दर्द हरन।।

शरणागत देख के हनुमान जी, शीघ्र दया में आते हैं।
आगे से राजा स्वास्तिक को, यों निर्भय वचन सुनाते हैं।।
ऐ राजा मत घबराओ तुम, चाहे महाकाल भी आ जाये।
ज़िम्मा है मेरा, बाल भी बाँका, नहीं तुम्हारा कर पाये।।
स्वास्तिक बोला, जब तुम ही बने रक्षक, तो भय फिर किसका है।
परन्तु कहीं तुम्हीं न छोड़ जाओ,इस बात का मनमें खटका है।।
हो जाये मुझे विश्वास जो दृढ़ प्रतिज्ञा करो, ना टल जाओ।
सबसे बढ़कर जो प्यारा हो, उसकी सौगन्ध अगर खाओ।।
हनुमान जी कहने लगे, सुन राजन यह मेरी प्रतिज्ञा है।
जिन प्रभु के एक संकल्प से हो, यह जग की सारी रचना है।।
जिनकी किरपा का पात्र हूँ मैं, जिनका मैं सेवक खास हुआ।
जिनके श्री चरणों के दासों के दासों का मैं दास हुआ।।
जो भक्तों के रखवाले हैं दीनों दुखियों के सहारे हैं।
वे जानकीनाथ श्री रामचन्द्र ही, मेरे प्राण प्यारे हैं।।
खाता हूँ सौगन्ध उन्हीं की, राजन तुझे बचाऊँगा।
जो वचन निकाला है मुख से, उसे पूरा कर दिखलाऊँगा।।
दोनों तरफ से ठन गई, बीच भगत भगवन्त।
उधर राम ने और इधर, प्रण कीन्हा हनुमन्त।।
नारद जी ने यों रचा, कौतुक अदभुत आन।
देखें अब कैसे लड़ें, भक्त से श्री भगवान।।
यज्ञ समाप्त जब हुआ, सुनो आगे की बात।
दोनों प्रतिज्ञाओं को बीते तीन दिन-रात।।
चौथे दिन प्रातःकाल से ही, श्री राम ने धनुष सँभाल लिया।
और अपने तरकश में से एक करारा बाण निकाल लिया।।
यह बाण वह था जिससे श्री राम ने, वन में ताड़का मारी थी।

इस बाण पे बहुत भरोसा था, ज़रब इसकी निहायत कारी थी।।
इस अति प्रचण्ड जब बाण को देखा, धनुष के ऊपर चढ़ा हुआ।
स्वास्तिक राजा के रोम रोम में, मानो लर्ज़ा खड़ा हुआ।।
आता हुआ बाण दिखाई दिया, हनुमान बोले, मत घबराओ।
हम नाम राम का गाते हैं, तुम मेरे साथ मिलकर गाओ।।
इतना कहकर महावीर ने स्वास्तिक को कन्धे पर लिया उठा।
दोनों ने मिलकर नाम राम का, मुख से बारम्बार जपा।।
निर्मल मन से जब भक्त द्वारा, नाम का जाप अचूक किया हुआ।
वह बाण भयंकर आता हुआ, रसते में ही दो टूक हुआ।।
अपने बाण को बीच राह में, कटते देखा रघुवर ने।
हैरानी में पड़ गये कि इसको काटा किस जादूगर ने।।
तब और ही एक प्रचण्ड बाण, चुनकर तरकश से निकाल लिया।
जिसके द्वारा लंका की लड़ाई में कुम्भकर्ण को मारा था।।
टंकार धनुष की घोर हुई और बड़े जोश से बाण चला।
इस बाण की देख के ज्वाला को,स्वास्तिक का डूबने प्राण चला।।
घबरा के पुकारा, महावीर जी अब मेरा दिल डरता है।
इस दूसरे बाण से बच सकना, अब कठिन दिखाई पड़ता है।।
राजा की व्याकुल देख दशा, बोले हनुमान न भय खाओ।
पहले से बढ़कर चुसती से, बस नाम का जाप किये जाओ।।
है शक्ति प्रभु के नाम में ऐसी, कोई बिगाड़ कर सकता नहीं।
जो नाम का दृढ़ अभ्यासी है, वह मारे से मर सकता नहीं।।
यह बाण भी आया निशाने पर, जोरों से शोर मचाता हुआ।
अधबीच में टूट गया, लेकिन लहरा के गिरा बल खाता हुआ।।
दूसरा बाण भी जब प्रभु ने, देखा अपना बेकार गया।
हैरान हुये क्यों वार हमारा, खाली दूसरी बार गया।।

रावण को जिससे मारा था, अब तीसरा बाण लिया प्रभु ने।
जिस तरह भी हो स्वास्तिक को मार गिराना ठान लिया प्रभु ने।।
मच गई हाहाकार त्रैलोकी, में जब शर-सन्धान हुआ।
स्वास्तिक चीखा, अब बच सकना नामुमकिन ऐ हनुमान हुआ।।
महावीर गम्भीर वाणी में बोले, मत घबरा राजा।
तन मन का सारा ज़ोर लगाकर, नाम की टेर लगा राजा।।
एक तरफ वह घातक बाण ज़हरीला और जोशीला था।
एक तरफ श्री राम नाम का कीर्तन मधुर रसीला था।।
तेज़ी से, जोश से भरा हुआ, जो बाण उधर से आता था।
वह नाम प्रताप से रसते में ही, कट कर गिरता जाता था।।
श्री राम ने सोचा, क्यों ये बाण निशाने पर जाते ही नहीं।
क्या कारण है स्वास्तिक राजा का मस्तक छू पाते ही नहीं।।
देखा जब रघुवीर ने बात पड़ी सब जान।
लिये राजा के कन्धे पर, आगे खड़े हनुमान।।
देखा उधर हनुमन्त ने, धनुष धरे रघुवीर।
राजा के वध के लिये, खड़े चलावें तीर।।
प्रभु बोले, ऐ हनुमान, क्यों ठानी तकरार।
अपने कन्धे से इसे, दीजै शीघ्र उतार।।
हाथ जोड़ हनुमान जी, बोले श्री महाराज।
अपने सेवक का करो, नाथ क्षमा अपराध।।
कन्धे से राजा स्वास्तिक को, हरगिज़ नहीं आज उतारूँगा।
मैं वचन में बाँधा गया स्वामी, इसके मैं प्राण उबारूँगा।।
प्रभु बोले, प्रण है मेरा भी, मैं अवश्य प्राण इसके लूँगा।
मुनि का अपमान किया इसने, अपमान का बदला ले लूँगा।।
जो वचन दे चुका हूँ मुनि को, उस वचन का बँधा हुआ हूँ मैं।

यही कारण है जो इसे दण्ड, देने पर तुला हुआ हूँ मैं।।
उचित यही है हनुमान जी तुम आगे से हट जाओ।
मैं इसे न छोड़ूँगा हरगिज़, बस बीच हमारे मत आओ।।
सीस झुकाया हनुमान ने, आज्ञा नाथ,सिर आँखों पर।
मैं इसी घड़ी हट जाऊं लेकिन, बात और कुछ है रघुवर।।
स्वास्तिक का प्राण रहे या जाये, मुझे न कोई फिकर होती।
हे नाथ, आप के चरणों की सौगन्ध न खाई अगर होती।।
सौगन्ध आपकी टाल नहीं सकता, इसलिये क्षमा कीजै।
अपराध मेरा और राजा का, ऐ प्रभुवर बख्शो दया कीजै।।
बोले रघुवर , कहने से तुम्हारे प्राण मैं इसके बख्श भी दूँ।
सौगन्ध तुम्हारी खाई है, मज़बूर हैं, कैसे क्षमा करुँ।।
ऐ हनुमान, सौगन्ध तुम्हारी खाकर प्रण न किया होता।
तो एक भी बाण न मेरे, तरकश से हरगिज़ निकला होता।।
भगवान भगत दोनों अपने अपने प्रण से टल सकते नहीं।
है उलझन बनी अजीब कि जिससे दोनों ही निकल सकते नहीं।।
नारद ने देखा जब, बात बिगड़ती जाय।
बढ़ते बढ़ते कलह कहीं, और न बढ़ ही जाय।।
तब स्वास्तिक से यों कहा, सुनो भूप इक बात।
लड़ें भगत भगवंत जब, कहाँ रहे कुशलात।।
अब इस झगड़े को मिटाने को, बस एक उपाय है राजा।
इस एक उपाय में ही अब, कुशलात दिखाये है राजा।।
विश्वामित्र मुनि जी के, चरणों में जाकर गिर जाओ।
होते हैं सन्त दयालू बड़े, अपना अपराध बख्शवाओ।।
मुनि जी से क्षमा दिलाऊं तुम्हें, और वे श्री राम को समझायें।
आज्ञा पाकर मुनि जी की अपने, प्रण से रघुवर टल जायें।।

नारद के कहने से राजा, जा मुनि जी के चरणों में गिरा।
श्री विश्वामित्र जी ने राजा का क्षमा सकल अपराध किया।।
जब अपराधी को दण्ड दिये, मुनिवर ने ही छोड़ दिया।
कहने से विश्वामित्र के तब, श्री राम ने प्रण को तोड़ दिय।।
हुई सभा प्रसन्न सब, मिटी जो यह हड़बौंग।
देव मुनि राजा सभी, सुखी हुये सब लोग।।
कथाकार कहता है यों, हुआ यह झगड़ा शाँति।
सब सृष्टी में सुख हुआ, मिट गई सबकी भ्राँति।।
नारद जी से जब पूछा गया, क्या हाथ तुम्हारे आया है।
यह झगड़ा मुफ्त का फैलाकर, क्या मुनिवर तुमने पाया है।।
क्या लाभ हुआ इस खटपट का, यह अदभुत खेल रचाया क्यों।
भगवान को अपने भगत से नारद जी, तुमने लड़वाया क्यों।।
नारद बोले, तुम समझे नहीं, इक बात खास जो काम की है।
इस झगड़े से यह सिद्ध हुआ, महिमा अदभुत हरि नाम की है।।
है राम से बढ़कर नाम उनका, इस खेल में बात यह प्रगट हुई।
जहाँ राम मारना चाहते थे, वहाँ नाम ने भूप की रक्षा की।।
जो अदभुत शक्ति नाम में है, मुख से नहीं कोई गा सकता।
आधार नाम का जिसने लिया, महाकाल भी उसे न खा सकता।।
इसलिये उपस्थित गण, मन चित्त से एक बार हरिनाम कहो।
मिलकर बोलो, भगवान का नाम जपने वालों की जय जय हो।।

निन्यानवें का फेर

हरगिज़ न करना यकीं इस पर, यह ज़िन्दगी बुलबुला पानी है।
रहना न यहाँ दायम हरगिज़, दिन चार की यह ज़िन्दगानी है।।
दिन-रात मगन रहना जग में, यह जीव की सख्त नादानी है।
न धन-दौलत ही रहे कायम, न सुन्दर रुप जवानी है।।
तू नाहक माया क्यों जोड़े, यह माया आखिर फानी है।
मत चाकरी कर इस छलनी की, नहीं कौड़ी साथ में जानी है।।
नहीं यहाँ पे तेरा कुछ अपना, सब झूठा जगत पसारा है।
हासिल न किसी को कुछ भी हुआ, न चलता किसी का चारा है।।
माया में सरासर दुःख है भरा, कईयों ने जीवन हारा है।
इस ठगनी माया ने छल-बल कर, लाखों को ही मारा है।।
मत कर तू अपनी बरबादी, अनमोल जन्म का लाभ उठा।
सन्तों की ओट पकड़ ले तू, मत माया के हाथों जन्म गँवा।।
आम तौर पर कहते हैं माया इक भयंकर डायन है।
यह जग जीवों को खाये सदा, सब सदग्रन्थों का गायन है।।
इसने खा डाले तीन लोक, जो सामने आया सो मरता है।
पी डाले इसने सात समुन्द्र कभी इसका पेट न भरता है।।
जब तक यह तृष्णा दुष्ट बला, जीवों के मन में बसती है।
चहुँ ओर अशान्ति का घेरा, शान्ति को दुनियाँ तरसती है।।
यह निन्नानवें का फेर है, इस पर दृष्टान्त सुनाते हैं।
उनकी दुर्गति क्या होती है, जो इसके फेर में आते हैं।।
किसी एक गाँव में प्रभु प्यारा, था गरीब हज्जाम रहा करता।
एक धर्मात्मा सज्जन पुरुष से, थी उसकी भारी मित्रता।।
मत लालच लोभ में आना तुम, उस मित्र से शिक्षा मिलती थी।
सन्तोष प्रिय बनने की सदा, दिन रात ही दीक्षा मिलती थी।।

हज्जाम बहुत ही निर्धन था, पर हरि का नाम सुमिरता था।
अपने कुनबे का निर्वाह उसे, कठिनाई से करना पड़ता था।।
कुन्बा था उसका बहुत बड़ा, पर आय बहुत कम होती थी।
सन्तोष प्रिय होने से ही, गुज़रान भली ही होती थी।।
निर्वाह करता था सुख पूर्वक, गुणवाद प्रभु के गाता था।
रहता था प्रसन्नचित्त हरदम, मन में न कभी घबराता था।।
इक बार उसे कहीं जाना पड़ा, जब उधर से वापिस लौट रहा।
था थका हुआ वह गरीब, इक वृक्ष के नीचे बैठ रहा।।
सन्ध्या का समय हो रहा था जब, और रात का भी अब आना था।
हज्जाम को था मालूम नहीं, कि यहाँ भूतों का ठिकाना था।।
उस वृक्ष के नीचे बैठते ही, आवाज़ सुनाई दी उसको।
अरे ओ हज्ज़ाम ज़रा सुन तो, क्या अशर्फियां चाहियें तुझको।।
आवाज़ तो थी यह भूतों की, सुन कर के खुश हज्जाम हुआ।
मन में लोभ ने प्रवेश किया, आगे सुनो क्या अंजाम हुआ।।
दिल में सोचा धन हाथ लगा, अब इसको क्यों छोड़ा जाये।
क्यों दरिद्रता से पीड़ित रहूं, घर आई लक्ष्मी को क्यों मोड़ा जाये।।
क्यों न यह भर लूं कनस्तर में, क्यों अशर्फियों को छोड़ा जाये।
सुख पूर्वक जीवन बसर करूं,दुःख दरिद्रता से नाता तोड़ा जाये।।
यह सोच के उसने कह डाला, तू कौन जो मुझ पर कीन्हीं दया।
या ला दे भरा कनस्तर वो, या धरा कहाँ यह शीघ्र बता।।
फिर भूत ने उत्तर दिया उसे, इस वृक्ष की जड़ में पावेगा।
दो गज पृथ्वी के खोदने से, वो कनस्तर हाथ में आवेगा।।
सुन कर हज्जाम तो झूम उठा, नहीं खुशी का पारावार कोई।
पर प्रातःकाल ले जाऊँगा, इस समय नहीं हथियार कोई।।
घर पहुँच उसे था चैन कहाँ, कब पौ फटे तो जाऊं मैं।

नींद न रात्रि भर कीन्ही, कब उस जंगल में जाऊं मैं।।
उस धरती को खोद-खाद के, कनस्तर उठा के लाऊं मैं।
कोई गैर उठा न ले जाये, वहाँ सब से पहले जाऊँ मैं।।
अशर्फियाँ खोज के ले आया, आश्चर्य की सीमा टूट गई।
लेकिन उसे यह ध्यान कहाँ, सुख-चैन की हाँडी फूट गई।।
घर पहुँच लगा करने गिनती, अशर्फियों का सामने ढेर लगा।
ये तो निन्नानवें निकली हैं, कहीं गिनने में तो नहीं फेर हुआ।।
लगा बार बार गिनने उनको, हर बार निन्नानवें बनती थी।
वो चाहता था सौ बन जायें, वो हरगिज़ सौ न बनती थी।।
पल में खुशी काफूर हई, दिल गम से चकनाचूर हुआ।
उदास हुआ वो मन ही मन, दिल में गम भरपूर हुआ।।
यही निन्नानवें का चक्र है, जिसमें वो गिरफ्तार हुआ।
जो इसमें फँसा इक बारी, निकलना उसका दुश्वार हुआ।।
अब सुनो ज़रा क्या होता है, उसे नींद न रात को आती है।
कब सौ अशर्फियाँ पूरी हों, दिन-रात यह चिन्ता खाती है।।
रख लिया सिरहाने कनस्तर वो, न किसी को हाल सुनाता है।
न घर वालों को, पता है कुछ, बस गम में डूबा जाता है।।
घर के खर्चे से पाई पाई, करके वह लगा बचाने अब।
सौ पूरी अशर्फियाँ करने की, लगा दिल को बीमारी लगाने अब।।
इक ओर तो चिन्ता थी उसको, कोई लूट न ले धन मेरा।
यह दूसरी चिन्ता लगी उसे, कि काम भी जाये बन मेरा।।
रात को नींद न आती है, न दिन को चैन करार आये।
कितना शान्तमय जीवन था,अबसुख का सांस न इकबार आये।।
दो चार रुपयों के जुड़ने पर, कब काम यह बनने वाला था।
आय उसकी दस आने था, और कुनबा खाने वाला था।।

अशर्फी के रुपयों का जमा करना, यह हँसी का कोई खेल न था।
दो चार रुपयों से अशर्फी के, बनने का कोई मेल न था।।
इस चिन्ता में खाना और पीना, सब काम ही उसका बिगड़ गया।
इसी गममें घुलघुल कर सारा,अब स्वास्थ्य भी उसका बिगड़ गया।।
पाचन शक्ति भी क्षीण हुई, हो दुर्बल उसका शरीर गया।
अब शक्ल-सूरत भी बदल गई, ज़ारी हो अखियों से नीर गया।।
मनमें बस यही मनोरथ था, ये विचार न अब खाली जाये।
जैसे भी हो कनस्तर में, अशर्फी एक और डाली जाये।।
इसी ख्याल में वो बाज़ार गया, इतफाकन मित्र से मेल हुआ।
हज्जाम का हुलिया बिगड़ा देख, न समझ सका क्या खेल हुआ।।
बड़े स्नेह से पूछा क्यों भाई, यह हालत कैसी बनाई है।
क्यों बहुत दिनों से मिले नहीं, ये बात समझ नहीं आई है।।
हज्जाम के मुख से उत्तर में, नहीं एक शब्द भी निकल सका।
अब उसे कहे भी तो क्या कहे, आँखों से पानी बह निकला।।
मुख से कुछ कहने की बजाय, वो फूट फूट कर रोने लगा।
अपने प्यारे की दशा देख, मित्र भी दुःखी होने लगा।
अरे, कुछ तो कहो प्यारे भाई, क्या कोई विपदा आन पड़ी।
रो रो कर हाल बेहाल किया, नहीं बात तुम्हारी जान पड़ी।।
इतना तो बताओ मित्र हमें लिया भूतों ने तो घेर नहीं।
कहीं तुम पर तो नहीं आके पड़ा, निन्यानवे का फेर नहीं।।
यह सुनते ही हैरान हुआ, और मित्र का मुँह तकने लगा।
सच सच कहो ऐ मित्र मेरे, किस ने यह दिया तुम्हें बतला।।
हँस कर के बोला मित्र उससे, यह बात खूब अज़माई है।
नहीं चैन कभी है वह पाता, जिस भूत से माया पाई है।।
जो माया को स्वीकार करे, गति उसकी मन्द हो जाती है।

जब तक न माया त्याग करे, हरगिज़ न सुधरने पाती है।।
ये अशर्फियां जो तुम्हें मिलीं, किसी काम न आती हैं।
न पूरी सौ हो पाती हैं, पर जीव को खूब भरमाती हैं।।
यदि ले आया है तो सच बतला, इसी में ही तेरी भलाई है।
उन्हें वापिस फेंक के आ वरना, नहीं तो फिर तेरी तबाही है।।
इस चिन्ता में घुल घुल करके, इक रोज़ तू मारा जायेगा।
मानुष तन से हाथ भी धो लेगा, और हाथ भी कुछ न आयेगा।।
खुल गया भेद हज्जाम का अब, सब कुछ उसने स्वीकार किया।
जो घटना उस पे गुज़री थी, उसका पूरा विस्तार किया।।
फिर लगा प्रार्थना करने वो, विनती मेरी स्वीकार करो।
बस एक अशर्फी ला दो मुझे, इतना मुझ पर उपकार करो।।
यह सब वृतान्त जब सुना मित्र ने, जोरों से अट्टहास किया।
अरे क्यों पागल हुआ जाता है, निन्नानवें ने है वास किया।।
ये फेर है बस निन्नानवें का, जो खतम न होने वाला है।
फंसने वालों को इस कुचक्र ने, खपा खपा कर मारा है।।
अरे क्यों तू अपनी जान को बेमतलब, भारी रोग लगाता है।
अब मान हमारी बात को तू, यह मित्र तुझे समझाता है।।
इसको तू वापिस लौटा के, और अपनी जान बचा ले तू।
इससे छुटकारा पाकर के, जीवन को सुखी बना ले तू।।
लेकिन हज्जाम के सिर पर तो, इक लोभ का भूत सवार हुआ।
तेरा कहना है उचित मित्र, लेकिन मैं तो हूँ ख्वार हुआ।।
बस एक अशर्फी मिल जाये, तो पौं बारह फिर हो जाये।
निन्नानवे अशर्फियाँ एक बार, मेरी पूरी सौ हो जाये।।
क्या आशा पूरी करने का, तुमको कोई अधिकार नहीं।
दुःख में गर साथ न दोगे फिर मित्र कहाने के हकदार नहीं।

हज्जाम की बातें सुन सुन के, उस भद्र पुरुष को दया भाई।
फिर उसे समझाने की चेष्टा, हद से ज्यादा ही भाई।।
मैं तो हूँ तेरी भलाई में, और भले की बात बताता हूँ।
इस धुन को कर दे दिल से दूर, तुझे गम से छुड़ाना चाहता हूँ।।
यह तो माया का कुचक्र है इक, इसने लाखों को तबाह किया।
सुख चैन जीवन में उड़ जाता, इसने लाखों को दगा दिया।।
गर माल जुटाने में लगा रहा, सुख का नहीं साँस कभी लेगा।
इक कौड़ी काम न आयेगी, जब अन्त समय यम घेरेगा।।
तू ने तो काम किया है वो, गया जकड़ लोभ ज़ंज़ीरों में।।
इतना पा कर भी तृप्त नहीं, जैसे कि कहा फकीरों ने।।
जब एक हुआ तो दस होते, दस हुये तो सौ की इच्छा है।
सौ पाकर भी सन्तोष नहीं, सहस्र होयें तो अच्छा है।।
बस इसी तरह बढ़ते बढ़ते, राजा के पद पर पहुँचा है।
पद पाकर भी नहीं चैन उसे, ऐसी यह डायन तृष्णा है।।
जब तक मन में तृष्णा है, तब तक प्रकाश नहीं होता।
आयु का नाश हो जाता है, तृष्णा का नाश नहीं होता।।
उन दिनों को प्यारे याद तो कर, जब तेरे मन में लोभ न था।
प्रभु सुमिरण में अलमस्त था तू, तुझ में अशान्ति का रोग न था।।
सूखा टुकड़ा खा कर भी तू, गुणवाद प्रभु के गाता था।
प्रसन्नता का चमकार तेरे, मुख मँडल पर लहराता था।।
अब तो तृष्णा की बीमारी ने, तेरी दुर्गति कर डाली।
मत भूल तू उस परमात्मा को, फिर से पी ले अमृत प्याली।।
कहाँ पर तू बात बात में ही, भगवान का सुमिरण करता था।
जाग्रत स्वप्न सुषुप्ति में, चैन की झोलियां भरता था।।
ऐ भले मनुष्य अब मान मेरी, जिसने तुझे भरमाया था।

इसको तू गाड़ वहीं पे आ, जहां से खोद के लाया था।।
झट मान गया उसका कहना, बुद्धि में मित्र की बात आई।
उन्हें वृक्ष के नीचे दाब दिया, फिर से सुख चैन की रात आई।
उसी दरिद्र अवस्था में आकर, वह प्रभु का सुमिरन करने लगा।
हरि नाम भजन में मस्त रह, जीवन में सौरभ भरने लगा।।
दुर्बलता उस की भाग गई, मुख मंडल पर फिर तेज आया।
माया की धुन जो नष्ट हुई,अब उससे उसको परहेज़ आया।।
फिर मिला मित्र इक दिन उसको, पूछा क्या हाल अरे भाई।
किस चक्की का आटा खाते हो, जो दशा तुम्हारी बदल आई।।
हज्जाम ने झट से पाँव पकड़ कर, कहा कि अच्छा काम किया।
यह आपका ही प्रताप है सब, सदगुण को पल्ले बाँध लिया।।
जीवन-पर्यन्त न भूलूँगा, ऐ मित्र उपकार तुम्हारे को।
धन्यवाद हृदय से देता हूँ, ऐ प्यारे मित्र तुम्हारे को।।
यह माया बुरी बला सचमुच, सुख-चैन किसी को दे नहीं।
भक्ति सब सुख की खानी है इसमें तो तनिक सन्देह नहीं।
वो भले ही दरिद्रि कहलायें, दर-असल तो धनवान हैं वे।
जो भक्ति के अभिलाषी हैं, सम्राटों के सम्राट हैं वे।।

नारद जी का माया वश होना

यह जोत सच्चे सतपुरुषों की, भव पातक हरने आती है।
जग जीवों के कल्याण हेतु, बहु रूप धार कर आती है।।
कभी राम रूप कभी कृष्ण रूप, कभी गुरु नानक रूप में आती है।
हर युग में समय समय पर आ, जीवों के कष्ट मिटाती है।।
जन्मों से जो रूहें बिछुड़ी, वह अपने संग मिलाती है।
सतसंग देकर रूहानियत का, रास्ता उन्हें दिखलाती है।।
दरबार सन्त सतपुरुषों का, रूहानी तख्त चमकता है।
है महिमा इसकी अगम अथाह, इसे कौन ब्यान कर सकता है।।
सन्तों की संगत में वचनामृत के, भर भर के प्याले मिलते हैं।
जिज्ञासु जनों के सामने ही, सब राज़ हकीकी खुलते हैं।।
अन्धों को आँखें मिलती हैं, और अमली जीवन बनते हैं।
असली कार्यवाही कराने को, सतगुरु हमराही मिलते हैं।।
भक्ति क्या है और माया क्या, सब खोल बताया जाता है।
किस कारण जीव यहाँ आया, यह राज़ समझाया जाता है।।
ऐ जीव यहाँ क्यों चित्त जोड़ा, यह अपना नहीं बेगाना है।
इसमें मत अपना वक्त गँवा, इसे छोड़ के इक दिन जाना है।।
यह समय अमोलक हाथ लगा, अब अपना काम बना ले तू।
है अवसर लाभ उठाने का, कुछ नाम का धन कमा ले तू।।
बस सोच सोच में ही सारा, जीवन अपना बरबाद न कर।
यह हीरा जन्म अमोलक है, यह मिला नहीं विषयों खातिर।
इस हीरे को कभी भूले से भी, खाक में नहीं रुलाना है।
सेवा भक्ति के अर्थ लगा, नहीं विषयों में उलझाना है।
ये काम क्रोध और लोभ सभी, जन्मों के पीछे पड़े तेरे।
तुझको मग से थुड़काने को, ये हरदम पीछे खड़े तेरे।।

सन्तों की राहनुमाई से, इन सब को वश में लाना है।
नहीं इनके शिकंजे में आना, इस सब पर काबू पाना है।।
ये ऐसे दुष्ट शिकारी हैं, पल भर में कर देते हैं घात।
न जीव का पल्ला छोड़ें कभी, दिन रात ये करते हैं उत्पात।।
इन सब पर काबू पाने का, बस फकत तरीका है ये ही।
जो सन्त-शरण में आते हैं, रहते हैं जग में सुखी वे ही।।
ये पाँचों बलशाली इतने, जिनका हो सके ब्यान नहीं।
जहाँ काम क्रोध ने वास किया, वहाँ पर रह सके ईमान नहीं।।
इन ज़ालिमों के जब हाथ लगा, तो बच सकता इन्सान नहीं।
नारद जी का यह हाल किया, कि छोड़ा तनिक ज्ञान नहीं।।
जब काम ने गर्दन आ पकड़ी, तब धर्म ईमान गँवा बैठे।
अहंकार ने जब मारा पंजा, तो बचे हुये प्राण गँवा बैठे।।
इक सन्त दयालु होते हैं, जो राह सही बतलाते हैं।
संसार में आकर कैसे रहो, सरल युक्ति बतलाते हैं।।
नारद जी जब गंगा तट पर, घोर तपस्या में बैठे।
तब इन्द्र ने मन में भय खाया, इन्द्रासन मेरा छीन न ले।।
जैसा अपना मन होता है, उसे वही दिखाई देता है।
काले चश्मे वाले को सब कुछ, काला दिखाई देता है।।
इन्द्र बुलाया कामदेव, नारद को जा कर भरमावो।
अपनी शक्ति से नारद जी की, समाधी खंडन कर आवो।।
तब कामदेव जी ज़ोरों से, ऐसी माया दौड़ाने लगे।
भाँति भाँति की क्रीड़ा कर, नारद जी को भरमाने लगे।।
स्वर्गलोक की कई अप्सरायें, ला कर वहां नचाने लगे।
कुछ पेश चली न कामदेव की, तो क्षमा याचना चाहने लगे।।
नारद जी की जब आँख खुली, तो सम्मुख कामदेव पाया।

और देखी उनकी माया भी, नहीं तनिक क्रोध मन में आया।।
रम्भा आदि अप्सरायें सब, आज्ञा पाकर के चली गईं।
अपनी करनी पर पछता कर, वे शीश नवा कर चली गईं।।
इन्द्र की सभा में जा करके, सब हाल सुनाया कामदेव।
आश्चर्य हुआ उसके मन में, नारद जी की सुशीलता देख।।
अब नारद जी का हाल सुनो, माया ने कैसे वार किया।
जीत लिया हमने कामदेव, इस अहंकार ने उनको ख्वार किया।।
उठकर समाधि से नारद, शिवजी को हाल सुनाया तब।
कामदेव को जीत लिया जैसे, खोलकर वृतान्त सुनाया सब।।
शिवजी ने कहा ऐ मुनिदेव कहीं प्रभु को यह न बता देना।
कहीं बातों में गर बात चले, तो भी यह बात छुपा लेना।।
इसमें ही है तुम्हारा हित, जो तुमको हमने समझाया।
पर शिवजी का उपदेश कहाँ, है नारद जी के मन भाया।।
जब ब्रह्मा जी के पास गये, सब हाल सुनाया उनको भी।
फिर अन्त में घूम घुमाते हुये, जा पहुँचे बैकुण्ठ में भी।।
भगवान ने कहा ऐ मुनिराज इतने दिन तक तुम कहां रहे।
है जीत लिया मैंने कामदेव, यह सुनकर प्रभु मुस्काने लगे।।
प्रभु बोले तुम ब्रह्मचारी, वैरागी और ज्ञानी हो।
तुम धीर मति और बुद्धिमान, और मानुष निराभिमानी हो।।
अहंकार में नारद जी ने कहा, सब कृपा आपकी है भारी।
पर जान गये प्रभु मन ही मन, यहाँ हालत बिगड़ गई सारी।।
करुणासागर प्रभु ने सोचा, है इसे बचाना चाहिये अब।
अभिमान में डूबा भक्त मेरा, इसे पार लगाना चाहिये अब।।
हमारा तो होगा खेल एक, और भक्त का हो जायेगा कल्याण।
मैं निश्चय करूँगा कार्य यह, और हर लूंगा इसका अभिमान।।

क्योंकि है मेरा प्रण तो यह, मैं भक्त के कारण आता हूँ।
अहंकार का वृक्ष जो पलने लगे, मैं उसे उखाड़ गिराता हूँ।।
भगवान को सीस निवा करके, नारद जी वापिस चलने लगे।
अहंकार के अंकुर नारद जी के, मन के अन्दर पलने लगे।।
भगवान की करनी को सुनिये, वह कैसी लीला रचाते हैं।
नारद जी के कल्याण हेतु, अपनी माया फैलाते हैं।।
भक्ति के मार्ग में जहाँ, भक्ति वहां माया-काल भी है।
भक्ति मे कदम बढ़ाये भक्त, तो माया खेले चाल भी है।।
ये काम क्रोध अहंकार सभी, इस जीव के भारी शत्रु हैं।
पल भर में इसे हड़पने को, तैयार खड़े ये शत्रु हैं।।
ये एक के पीछे एक लगे, और घात जीव का करते हैं।
है केवल सन्तों की शक्ति, जो जीव के पातक हरते हैं।।
अब हरि ने क्या खेल रचा, इक नगरी ऐसी रचा डाली।
उसकी रचना बैकुण्ठ से भी, अति शोभाशाली बना डाली।।
उस नगर के राजा का प्रताप, नहीं इन्द्र मुकाबला करता था।
ऐश्वर्य था उसका इतना अधिक, कुबेर भी पानी भरता था।।
उसकी कन्या थी विश्वमोहिनी, जो सुन्दर सदगुणों वाली थी।
उसकी सुन्दरता लक्ष्मी को भी, मोहित करने वाली थी।।
वास्तव में थी वह खान गुणों की, प्रभु की मोहिनी माया थी।
थी राजकन्या अति रूपवति, बहुत सुन्दर उसकी काया थी।।
नारद जी के मार्ग में वह, राजा था स्वयंवर रचाये हुये।
देशान्तरों से अनगिनत राजा, स्वयंवर में थे आये हुये।।
नारद जी गये उस नगरी में, वृतान्त पूछने लगे वहाँ।
सब नगर वासियों से सुनकर, गये राजा जी का घर था जहाँ।।
राजा ने सम्मान किया उनका, पूजा कर के फिर बैठाया।

कन्या अपनी को बुलवा कर, उसकी हस्त रेखा को जंचवाया।।
हृदय से विचार के सब कहिये, कैसा वर होगा प्राप्त इसे।
कन्या को देख के मुग्ध हुये, क्यों न कर लूँ मैं प्राप्त इसे।।
इक टक होकर देखे ही गये, मुनिराज भेद कुछ खोले नहीं।
मन में थे अति प्रसन्न हुये, लेकिन मुख से कुछ बोले नहीं।।
माया के वश नारद जी की, मति उल्टी प्रतीत हो रही थी अब।
हर बात उन्हें सीधी भी अब, उल्टी प्रतीत हो रही थी सब।।
कन्या की रेखा तो यह थी, कि जो अजर अमर अविनाशी हैं।
वे ही इसके पति होंगे, जो सकल सुखों की राशी हैं।।
लेकिन नारद जी समझे ये, जिसकी यह धर्म पत्नी होगी।
वह पति हो जायेगा अजर अमर, यह पत्नी सुलक्षणी होगी।।
नारद जी के मन में लोभ हुआ, वर के गुण दिल में छिपा लिये।
यूँ ही कुछ कह कर टाल दिया, इक दो गुण उसके बता दिये।।
है कन्या यह आपकी सुलक्षणी, और बहुत ही भाग्यवती होगी।
फिर चिन्ता मन में करने लगे, अब बात मेरी कैसे होगी।।
ऐसा उपाय होना चाहिये, यह कन्या जी मुझ को वर लें।
अब समय अति ही थोड़ा था, जो नारद जी कुछ तप कर लें।।
नारद जी ने मन में सोचा, यहाँ रूप सुन्दर होना चाहिये।
दिलकश सूरत दिखला करके, कन्या का मन मोहना चाहिये।।
जिससे वह होकर प्रसन्न,जयमाला मुझको पहना दे।
बेहतर यह है कि आज प्रभु, अपना ही रुप मुझे दे दे।।
इस भारी विपदा में भगवान,अवश्य ही सहायता कर देंगे।
अति दीन हीन पुकारूँ मैं, वह कारज मेरा कर देंगे।।
लेकिन अब समय भी थोड़ा है, जाने से देर बहुत होगी।
यहीं पर से प्रार्थना करता हूँ, मेरी कूक प्रभु के दर होगी।।

फिर लगा बेनती करने वो, शीघ्र करो प्रभु शीघ्र करो।
मैं दीन पुकारूँ चरणन में, प्रभु आकर मेरा काज करो।।
भगवान तो अन्तर्यामी थे, खुद ही तो खेल रचाया था।
बन राजकुमार वे प्रकट हुये, जहां नारद मन घबराया था।।
भगवान को आया देख वहां, दिल नारद का अति शान्त हुआ।
अब कारज सिद्ध अवश्य होगा, प्रसन्न हो कर वह बोल उठा।।
प्रभु बोले ऐ नारद जी, कहो क्या हाल तुम्हारा है।
अति व्याकुल हो नारद बोले, बस आप का ही तो सहारा है।।
कुछ समय के लिये प्रभु मेरे, मुझे अपना रुप दे दीजियेगा।
किसी भाँति से मिल जाये कन्या,बस यही सहायता कीजियेगा।।
नारद जी ने मन में सोचा, भगवान जो मेरे आये हैं।
मेरा विवाह कराने को, तशरीफ यहां पर लाये हैं।।
बार बार लगे विनती करने, अब मुझ पे दया कीजियेगा।
प्रभु दास आप का हूँ, यह कन्या दिलवा दीजियेगा।।
नारद जी के मन पर ऐसा, माया ने परदा डाल दिया।
इस में ही है कल्याण मेरा, इस विचार को दिल में पाल लिया।।
फरमाया मुस्करा प्रभुवर ने, नारद जी काम वही होगा।
जिससे कल्याण तुम्हारा हो, हमें करना काम वही होगा।।
नारद जी माया के वश थे, समझे न प्रभु की मौज है क्या।
फिर दिल में खूब प्रसन्न हुये, अब कारज मेरा सिद्ध हुआ।।
अब तुरन्त गये उस नगरी में, जहां स्वयंवर भूमि बनाई थी।
अपने अपने आसन पर बैठे, राजाओं ने आस लगाई थी।।
नारद थे मन में अति प्रसन्न, मुझ सा न कोई सुन्दर होगा।
मुझे छोड़ किसी को बरेगी न, यह कन्या, आज ऐसा ही होगा।।
अब सुनो प्रभु की लीला को, वह कौतुक क्या रचाते हैं।

उसे तीन रुप प्रदान किये, पर नारद समझ न पाते हैं।।
खुद को नारद ने विष्णु देखा, लोगों को नारद भासते हैं।
लेकिन बूढ़े बन्दर की तरह, कन्या को दृष्टि आते हैं।।
वहाँ पर थे शिवजी के गण भी, जिन्हें शिवजी ने बात बताई थी।
माया वश होकर नारद ने, मेरी बात ठुकराई थी।।
वे भेष धार कर ब्राह्मण का, कौतुक देख रहे थे सब।
इनको न नारद ने पहचाना, वे देख के हँस रहे थे अब।।
वाह वाह भगवान ने खूब किया, बड़ी अच्छी सुन्दरताई दी।
पर नारद जी ने भी अपनी, दृष्टि उस ओर जमा ही दी।।
शिवजी के गण तो हँस रहे थे, यह चरित्र न किसे दिखाई दिया।
नारद जी को उसी एक ख्याल ने, सचमुच था सौदाई किया।।
अब कन्या सहेलियों सहित, हाथ में जयमाला लेकर आई।
बन्दर का अदभुत रूप देख, वह कन्या मन में मुस्काई।।
वह सभी राजकुमारों को, मस्ती से देखती जाती थी।
जहाँ बैठे हुये थे नारद जी, उस तरफ न दृष्टि उठाती थी।।
नारद थे घमण्ड में फूले हुये, मुँह उठा-उठा कर देखते हैं।
व्याकुल होकर बार बार, अपना मुँह आगे करते हैं।।
कन्या ने देख के बन्दर को, नाक अपना खूब सिकोड़ लिया।
जिस ओर विराजे थे भगवन उस ओर ही रुख को मोड़ लिया।।
कन्या ने मन में प्रसन्न होकर, जयमाला डाल दी उनके गले।
भगवान उसे फिर संग लेकर, फौरन ही वहाँ से गये चले।।
नारद जी व्याकुल हुये बहुत, क्योंकि वे माया के वश थे।
तब मुस्काते हुये वे बोल उठे, जो महादेव जी के गण थे।।
अरे नारद जी महाराज ज़रा, अपना मुख दर्पण में देखो।
इतना कह कर वे डर के मारे, आपस में कहा कि भाग चलो।।

नारद जी ने अपने मुख को, जब जल के अन्दर देख लिया।
बन्दर की शक्ल नज़र आई, तब मन में अत्यन्त क्रोध किया।।
ऐसा कहते हुये नारद जी, भगवान के पीछे भाग चले।
मैं भी नहीं इसको छोड़ूँगा, मेरी जग मे हँसी कराई भले।।
किस तरह ले गये कन्या को, मैं भी अब पता लगाता हूँ।
उनको भी मज़ा चखाऊंगा, मैं भी नारद कहलाता हूँ।।
मार्ग में मिल भगवान गये, वह कन्या भी उनके संग में थी ।
आपे से बाहर थे नारद जी, मति माया ने उनकी हर ली थी।।
वे क्रोध के वश में हो करके, भगवान से ऐसा कहने लगे।
परधन पर कब्ज़ा कर के तुम ऐश्वर्यपति कहलाने लगे।।
क्या अच्छे लगते हो प्रभु, तुम ईर्ष्या और कपट करते।
तुमरे सिर पर कोई बड़ा नहीं, इसलिये किसी से नहीं डरते।।
तुम स्वतंत्रता के मद में आ, जो चाहते हो कर लेते हो।
नहीं शिक्षा देने वाला कोई, नहीं किसी का भय तुम रखते हो।।
रुष्ट होकर कहा नारद ने, अपने किये का फल पाओगे।
जिस रूप को धर कर ठगा मुझे, वही रूप धर कर आओगो।।
बन्दर का रूप दिया मुझको, बन्दरों की सहायता चाहोगे।
ज्योंकर व्याकुलता हुई मुझको, बिन स्त्री तुम अकुलाओगे।।
तुमने जो वियोग दिया मुझको, इसलिये ही मैंने शाप दिया।
मन ही मन मुस्काये प्रभु, नारद के शाप को सीस चढ़ा।।
नारद के वचनों को सुन कर, भगवान के मन में दया आई।
व्याकुलता देखी नारद की, नहीं सहन प्रभु से हो पाई।।
झट खींचा अपनी माया को, तो आँख खुली तब नारद की।
देखा भगवान खड़े हैं वहाँ , न वह कन्या थी न माया थी।।
भयभीत हुये अति नारद जी, मन ही मन में वे डरते हैं।

और काँपते हुये श्री प्रभुवर के, श्री चरण कमलों में पड़ते हैं।।
ऐ दीनों के दुःखहरण प्रभो, रक्षा करो मेरी रक्षा करो।
मैंने है बड़ा अपराध किया, हे दयानिधे मुझे क्षमा करो।।
हैं बार बार चरणों पड़ते, कब पाप मेरा निवृत होगा।
ऐ दयामय तुम कृपा करो, तो शान्त मेरा यह चित्त होगा।।
भगवान दया में आ करके, नारद जी से फरमाते हैं।
यह जो कुछ हुआ कौतुक सारा, नारद को समझाते हैं।।
मत चिन्ता कर ऐ नारद जी, हमने खुद खेल रचाया था ।
कल्याण तुम्हारा सोचा था, तो माया को फैलाया था।।
अभिमान के वश में होकर के, तुम भक्ति से दूर थे जाने लगे।
तुम्हें राह पे लाना ज़रूरी था, मन माया थे भटकाने लगे।।
जैसे माँ बच्चे का फोड़ा, हाथों से खुद चिरवाती है।
बच्चे को दर्द भले ही हो, लेकिन उसका हित चाहती है।।
बच्चा जब दर्द में रोता है, माँ तनिक नहीं परवाह करती।
ज़हरीला फोड़ा चिरवा कर, उसके ही सुख की चाह करती।।
तुमरा भी हो उपचार गया। अब चिन्ता की कोई बात नहीं।
अब नाम भजो तुम मालिक का, रहे कोई भी आफात नहीं।।
दिल भर आया अब नारद का, नेत्रों से अश्रु बहने लगे।
भगवान प्रसन्नचित्त हो करके, नारद जी से यूँ कहने लगे।।
सीने से लगाकर श्री प्रभु ने, उनकी सब ही पीड़ा हरली।
मुस्काकर प्रभु ने फरमाया, घबराओ मत अब नारद जी।।
शत्रु हैं काम क्रोध आदि, जो अकसर दाँव चलाते हैं।
कुल मालिक जीव के रक्षक हैं, जो कदम कदम पे बचाते हैं।।
जो सतगुरु की शरण में आकर, दरबार की सेव कमाते हैं।
निष्काम भाव मन में रख कर, प्रभु की प्रसन्नता पाते हैं।।
सतगुरु ने बनाया नाम जहाज़, भवसागर से तर जाने को।
ऐ दासनदास तू भी चढ़ जा, यह जीवन सफल बनाने को।।

वास्तविकता से प्रेम करो

दौड़ दौड़ माया के पीछे, क्यों तू हुआ दीवाना है।
कभी न सोचा मन में यह, प्रभु से नेह लगाना है।।
उलझ रहा माया के फँदे, बनता फिरे सयाना है।
सच्चे गुरु का ध्यान जमा ले, गर राहत को पाना है।।
सच्चा साहिब मालिक तेरा, दुई दूर हटा ले तू।
बिना नाम निस्तार नहीं है, मोह अज्ञान मिटा ले तू।।
क्या नफा कमाया जग में आकर, झाँक ज़रा मन अन्दर तू।
रैन दिवस गलतान मोह में, गुरु न भजा मन मन्दिर तू।।
असत से प्रीत लगाई नाहक, सत से प्यार बढ़ाया न।
निशदिन करे उपद्रव जो, मन-मूर्ख को समझाया न।।
नफस पलीत के पीछे लग कर, छल बल से घबराया न।
मानुष चोला मिला कीमती, इस का लाभ उठाया न।।
गफलत में सब समय गुज़ारा, गुरु का शब्द कमाया न।
सतपुरुषों की शरण में जाकर, रूह का काम बनाया न।।
मिथ्या संयोग बनाये मन से, ये नहीं साथ निभावेंगे।
याद रख संतों की वाणी, इक दिन छोड़ के जावेंगे।।
गुरु इष्टदेव की मूर्ति को,अपने हृदय बिठा ले तू।
इस असार संसार में आकर, सच्चा लाभ कमा ले तू।।
एक अनोखी बात निराली, अब जो तुम्हे सुनानी है।
धनुर्दास पहलवान एक था, जिसकी यह कहानी है।।
त्रिचनापल्ली का पहलवान, श्री रंगम तीर्थ को जाता था।
सरल स्वभाव का था यह मानुष, प्रभु दर्शन को चाहता था।।
मार्ग में हेम्माबा नाम की, स्त्री एक मिल गई उसे।
उसके रूप पर मुग्ध हुआ, होश न बिल्कुल रही उसे।।

सुन्दर रूप का था मतवाला, भूल गया प्रभु दर्शन को।
स्त्री की धुन में भूल गया, मैं जाता था प्रभु दर्शन को।।
प्यार बढ़ गया सीमा से भी, घर में ले आया उसको वह।
ध्यान जमा कर उसका पक्का, लेने लगा अब सपने वह।।
लोगों ने फटकारा उसको, पर एक किसी की मानी न।
मोह में हुई जो हालत उसकी, हरगिज़ जाये बखानी न।।
ज्यों-ज्यों लोग मना करते, प्यार ज्यादा बढ़ता था।
उस स्त्री के प्यार का रंग, दिनों दिन उस पर चढ़ता था।।
जहाँ जाये संग में रखता, पीठ कभी न करता था।
मुँह रखता था तरफ स्त्री, उल्टे पाँव चलता था।।
पत्नी के संग प्यार घना था, पल भर न बिछुड़ता था।
उसको सदा साथ ही रखता, जहाँ कहीं विचरता था।।
हँसी उड़ाते थे सब उसकी, भला बुरा भी कहते थे।
एक किसी की सुनता न था, कितना ज़ोर लगाते थे।।
हरगिज़ शौक से बाज़ न आता, स्त्री हो परेशान गई।
इस कदर दीवाने पन से, बहुत ही हो हैरान गई।।
कितनी बार ही टोका उसने, किन्तु बाज़ न आता था।
इतना प्यार बढ़ा पत्नी से, उसको खूब सताता था।।
एक बार श्री रंगम तीर्थ में, उत्सव होने वाला था।
हेम्माबा का मन देखने के लिये, बहुत मतवाला था।।
उसने किया विचार हृदय में आयु खोई जाती है।
नफसानी धन्धों में ही सारी, उम्र खत्म हुई जाती है।।
ज़िन्दगी में गर हम से कोई, शुभ कर्म हो पाया न।
अन्त समय पछताना होगा, जो प्रभु का नाम ध्याया न।।
दुनियाँ में आ करके हम ने, सच्चा लाभ उठाया न।

कहाँ की होगी अकलमन्दी, गर जीवन सफल बनाया न।।
अशुभ कर्म करते करते, आयु समाप्त होय चली।
शुभ कर्म किये न लेशमात्र, जीवन पूँजी खोय चली।।
पशुओं की भाँति दुनियां में, गर यूँही जन्म गँवाऊँगी।
कौन सा मुख मैं ले करके, मालिक के हुज़ूर में जाऊंगी।।
जीवन का उद्देश्य नहीं है, विषय विकार में खो जाना।
कुछ तो कमा लूँ शुभ कर्म, जो अन्त समय संग में जाना।।
साथ ही सोचा यह भी मन में, ये क्या मुँह दिखायेंगे।
नश्वर तन पर लट्टू हैं, इससे क्या लाभ उठायेंगे।।
कहा पति से मेरे तन से, क्यों विरथा मोह बढ़ाते हो।
प्रभु चरणों से प्यार करो, सदा का सुख जो चाहते हो।।
भक्ति करो केवल प्रभु की, तो दोनों लोक सँवर जायें।
लेकिन ये शब्द हेम्माबा के, नहीं धनुर्दास के मन भाये।।
कुछ देर चुप रह कर बोली, बीत चुकी को जाने दो।
बाकी का जो समय बचा है, मुझ को लाभ उठाने दो।।
मन में सोचा हेम्माबा ने, तीर्थ-स्नान को जाऊं मैं।
पता नहीं है जीवन का, कुछ तो लाभ उठाऊँ मैं।।
मैं जाऊँगी तो पतिदेव भी, साथ न छोड़ेंगे मेरा।
सोच समझ कर कहती हूँ, कहा न मोड़ेंगे मेरा।।
शायद हमको रूहानी कोई, सन्त सज्जन ही मिल जायें।
मेरे और मेरे पतिदेव के, सोये मुकद्दर खुल जायें।।
भेंट हो जाये सन्तों से तो, जन्म हमारा सुधर जाये।
हम पापी दुष्टों का निश्चय, परलोक सँवर जाये।।
शेख फरीद जी फरमाते हैं, दुनियाँ देखन जा।
मत कोई बख्शिया मिल जाये, तो तू भी बख्शिया जा।।

सतसंग में जाकर उनसे, सच्चा लाभ उठा ले तू।
मालिक के दरबार में जाकर, भूल सभी बख्शा ले तू।।
इतना सोच के हेम्माबा के, खूब विचार यह मन आया।
तीर्थ यात्रा को जाने का, पक्का इरादा बन आया।।
मन विचार कर हेम्माबा ने, पति को बात सुनाई है।
तीर्थ स्नान को जाना मैंने, मन में बात यह आई है।।
कर न सका इनकार पहलवान, अपनी प्राण प्यारी को।
देने को आराम सभी, करने लगा तैयारी वो।।
तीर्थ को भी निकले जब, आदत से था मज़बूर वो।
भीड़ भड़ाके में भी वैसा, उसी प्यार में चूर था वो।।
था प्यार में ऐसा मतवाला, जिसका कोई ओर न छोर।
मुख पत्नी की ओर था उसका, पीठ थी उस तीर्थ की ओर।।
खूब ज़ोर की गर्मी थी, कलेजा मुँह को आता था।
पत्नी का मुख देखे बिन, चैन न हरगिज़ पाता था।।
छाता लेकर हाथ में छाया, हेम्माबा पर करता था।
ज़रा शर्म न करता था, न लोक लाज से डरता था।।
चिलचिलाती धूप के भी, कष्ट सभी वो सहता था।
सराबोर पसीने में था, पर पंखा उसको करता था।।
ऊँचे नीचे मार्ग का वह, ज़रा ध्यान न करता था।
सुध-बुध तनिक नहीं थी तन की, उल्टे पाँव धरता था।।
इतने पर भी खुश था वो, सुन्दरता का रस पीता था।
मुख मोहिनी का निरख निरख कर, वो दीवाना जीता था।।
यह था एक निराला कौतुक, ठठ्ठा लोग उड़ाते थे।
हैरत से वो तकते थे, जो तीर्थ को जाते थे।।
इस प्रकार से वो आखिर, श्री रंगम तीर्थ जा पहुँचे।

इतफाकन इन के सुधारक बन, स्वामी रामानुज भी आ पहुँचे।।
उनके मत के प्रचारक ने, जब यह अजब दृश्य देखा।
मानवता से गिरा हुआ यह, उसे बड़ा अदभुत सा लगा।।
पूछा लोगों से उसने, यह कौन बेसमझ दीवाना है।
स्त्री रूपी शमां पर, जो बना हुआ परवाना है।।
लोगों ने तब धनुर्दास का, सब वृतान्त सुना डाला।
किस प्रकार यह हुआ दीवाना, पत्नी पर बतला डाला।।
दया आई सन्तों के दिल में, तत्क्षण उसे बुलवा डाला।
सन्ध्या समय हमें मिलना मठ में, यह सन्देश भिजवा डाला।।
धनुर्दास को मिला सन्देशा, हक्का बक्का रह गया वो।
संस्कारों ने पलटा खाया, दिल में सहम कर रह गया वो।।
अपने दिल के आईने पर, सब दोष दिखाई देने लगे।
सन्तों की है नज़र पड़ी, पाप अंगड़ाई लेने लगे।।
मन में किया विचार कि वैष्णव, मुझ पर रोब जमायेंगे।
इस हरकत पर खफा वो होंगे, अब क्योंकर माफी पावेंगे।।
बात तो उल्टी की है मैंने, सब श्रद्धा से जाते हैं।
भक्ति भाव से श्री भगवान का, दर्शन जाकर पाते हैं।।
एक मैं ऐसा मूर्ख हूँ स्त्री का हुआ दीवाना ।
ऐसे शुभ स्थान पर आकर, भी दर्शन का लाभ लिया न।।
जाऊँ तो किस मुँह से जाऊँ, मुझ पर डाँट लगावेंगे।
न जाऊँ तो उचित नहीं है, वैष्णव बुरा मनावेंगे।।
पत्नी ने जब सुना तो मन में, अति प्रसन्न हो जाती है।
पति के सुधार का समय देख, मन में हर्ष मनाती है।।
सन्तों के दरबार में जाकर, जो भक्ति वर पाता है।
कैसा ही अपराधी हो, निश्चय वह तर जाता है।।

सन्तों की संगत को पाकर, शठ भी लाभ उठाता है।
जैसे पारस को छूकर, लौह कंचन बन जाता है।।
उधर भी सीधे वैष्णव जी, श्री प्रभु चरणों में जाते हैं।
श्री चरणों में उपस्थित होकर, विनती एक सुनाते हैं।।
दयासिन्धु आज एक मैं, कौतुक देख के आया हूँ।
एक भक्ति से विमुख जीव की, विनती ले कर आया हूँ।।
स्त्री की सुन्दरता पर वो, इस कदर है मुग्ध हुआ।
उसके सिवा इस दुनियाँ में, उसको कुछ नहीं सूझ रहा।।
देख के उसकी दीन अवस्था, उस पर रहम किया जाये।
श्री चरणों के प्रेम अमृत से, उस पर करम किया जाये।।
आप प्रभु कुल मालिक हैं, अग-जग के तारनहारे हैं।
आपसे कुछ भी छुपा नहीं, घट-घट की जाननहारे हैं।।
वो है सुन्दरता का लोभी, उसका जीवन सुधर जाये।
आपके सुन्दर दिव्य दर्शन की, उसे झलक जो मिल जाये।
कदाचित झूठी सुन्दरता से, उसका मन चित्त उठ जाये।
जैसे मिठाई पाकर बच्चा, मिट्टी खाने से हट जाये।।
माया की नश्वर सुन्दरता में, जीव अज्ञानी सुख माने।
प्रभु के सुन्दर दिव्य दर्शन के, आनन्द को वह क्या जाने।।
श्री आज्ञा हो तो उस अधम को, श्री चरणों में ले आऊँ।
उस भूले भटके को राह पे ला, मैं मन में अति ही सुख पाऊं।।
महिमा सतपुरुषों की भारी, पर मनमुख जीव नहीं जाने।
रहमदिल होते हैं सतगुरु दिल में सबका हित माने।।
हर एक प्राणी के प्रति, निस्वार्थ प्यार वो रखते हैं।
हमदर्दी और मुहब्बत, प्राणी मात्र से रखते हैं।।
उनका तो अनुमान सच्चे, प्रेमी, ही लगा पाते हैं।

सन्तों की संगत में रहने, का जो सुअवसर पाते हैं।।
जिनको मंगलकारी और, मोक्षदायक सतसंग मिला।
लाभ उठाते हैं जीवन का, उन्हें भक्ति का रंग मिला।।
अन्य जीव जो अज्ञानी हैं, भक्ति रस वो क्या जाने।
जिसने मीठे फलों को चाखा, उसका आनन्द वो ही जाने।।
लाभ जो सन्तों से होता, भली भाँति वो जानते हैं।
दुनियाँ भर के भोग पदार्थ, सभी को मिथ्या मानते हैं।।
दुनियावी जीवों पर भी जब, कृपा-दृष्टि हो जाती है।
उनके पाप धुल जाते हैं, बुद्धि निर्मल हो जाती है।।
माया में धंसा देख जीव को, मन में खेद मनाते हैं।
जिस तरह बच जाये जीव, वही भेद बतलाते हैं।।
जैसे भी हो उनके उद्धार की, कोशिश ही में रहते हैं।
जीवों के कल्याण की खातिर, कष्ट सदा ही सहते हैं।।
सन्तों की कृपा-दृष्टि से, जीव जो राह पर आता है।
सही मार्ग पर चला देख उसे, मन सन्तों का हर्षाता है।।
यद्यपि लाभ तो जीवों का है, जीवन सफल बनाते हैं।
कल्याण मार्ग पर चलता देख सन्त खुश हो जाते हैं।।
आज्ञा पाकर तब सतगुरु का, वैष्णव मन में हर्षाया।
सन्त हृदय माखन से बढ़कर, कोमल हमने है पाया।।
खाना खा चुकने के बाद, धनुर्दास जी आते हैं।
डरते और काँपते हुये, हृदय में सकुचाते हैं।।
एक एक पग पर उनका, हृदय बैठता जाता था।
जाने क्या फटकार मिलेगी, दिल में वह भय खाता था।।
कभी किसी मन्दिर में जाकर,दर्शन भी तो किये नहीं।
प्रेम भक्ति के उसने उर में, कभी जलाये दीये नहीं।।

उसकी पूजा का स्थान तो, हेम्माबा का मुख ही था।
वही मन्दिर भगवान वही, वो ही उसका सब कुछ था।।
किन्तु खेद मनाता है, अब अपनी नादानी पर।
आज तलक न सतसंग किया, पछताये अब ज़िन्दगानी पर।।
हाज़िर होकर चरणों में, श्रद्धा से प्रणाम किया।
तत्क्षण बोले वैष्णव जी, तुमने बहुत हैरान किया।।
हमें तुम्हारे इस व्यवहार पर, बड़ा अफसोस हो आया है।
इसका कारण तो बतलाओ, इसलिये तुम्हें बुलाया है।।
क्यों स्त्री पर लट्टू होकर, मानवता को भूल रहे।
अपने लक्ष्य से गिर कर भी, क्यों मन में हो तुम फूल रहे।।
धनुर्दास बोला सुन्दरता का, मैं तो रसिक दीवाना हूँ।
उसका सुन्दर रूप है शमाँ, जिसका मैं परवाना हूँ।।
जब से इस सुन्दरी को देखा, पागल सा हुआ जाता हूँ।
बिन देखे उसके ऐ प्रभुवर, क्षणभर रह न पाता हूँ।।
छोड़ नहीं सकता हूँ इसको, दशा अपनी बता दी है।
मज़बूर हूँ मैं लाचार हूँ मैं, आदत अपनी जतला दी है।।
इससे बढ़कर रूप सुन्दर, जब तुमको दिखलाया जाये।
भूल जाओगे इस सुन्दरता को, सच सच तुमसे बतलाया जाये।।
धनुर्दास ने कहा आपका, मैं आभारी बन जाऊँगा।
इसे त्याग कर उस रूप का, मैं पुजारी बन जाऊँगा।।
किन्तु इससे बढ़कर कोई, सुन्दर रुप होना चाहिये।
वह रूप दिखा कर वैष्णव जी, मेरे मन को मोहना चाहिये।।
आज तलक इस जैसा सुन्दर, रूप कहीं भी पाया नहीं।
मेरे देखने में तो कोई, आज तलक भी आया नहीं।।
धनुर्दास जी सुनो, जगत यह, मोह माया का पसारा है।

इसकी स्थिरता तनिक नहीं है, जोकि तुम्हें प्यारा है।।
यह वास्तविक सौंदर्य नहीं है, बल्कि फकत ही धोखा है।
नाशवन्त यह यौवन सारा, प्यार भी इसका खोटा है।।
जब तक रूप व सुन्दरता है, तब तक प्यार तुम्हारा है।
रूप जवानी ढलने वाले, यह कुदरत का नारा है।।
वह दिन दूर नहीं है जब, यह मिट्टी में मिल जायेगा।
तब तुम पछताओगे नादां, हाथ नहीं कुछ आयेगा।।
अति हैरान हुआ बेचारा, लगा खेद मनाने वो।
लगा ताकने मुख वैष्णव का, मन को लगा ठुकराने वो।।
वैष्णव बोले सुनो अब हम, सच सच तुम्हें बताते हैं।
वृद्धावस्था रोग और मृत्यु, जीव पे इक दिन आते हैं।।
जिस सूरत पर मुग्ध हुये हो, ये तीनों उसको ग्रस लेंगे।
जिसके तुम हो बने पुजारी, मलियामेट उसे कर देंगे।।
जब कि ऐसा है वैष्णव जी, मुझे फिर क्या करना होगा।
वैष्णव बोले तुम पूजो उसको, रूप जो ज्यों का त्यों होगा।।
किन्तु आप तो कहते थे, इनसे छूट सका न कोय।
कौन सा ऐसा रूप है जोकि, एक रस और स्थिर होय।।
उस महान सुन्दरतम रूप के, सामने तुच्छ है हेम्माबा।
वह रूप सदा ही इक रस है, यह बात समझ लो धनुर्दासा।।
सन्तों के पल भर के दर्शन, ने संस्कार जगा दीने।
शुभ कर्मों ने पलटा खाया, बन्धन टूट गये झीने।।
शीघ्र ही मुझको दिखला दीजै, कहाँ है रूप प्यारा वो।
मैं लोभी हूँ उस रस का, सर्व जगत से न्यारा जो।।
तड़प उठा अब धनुर्दास, सुन्दरता को जो लोभी था।
बस महाराज, अब शीघ्र दिखाइये, मैं अधीर हुआ जाता।।

शीघ्रता का काम नहीं है, वैष्णव जी ने उसे कहा।
आ जाना कल सुबह सवेरे, दिल में है गर सच्ची चाह।।
आज्ञा पाकर घर को लौटा, और आश्चर्य चकित भी था।
मुझ जैसे को दर्शन होगा, मन में यह सन्देश भी था।।
इस बात से खुश था वो, जो वैष्णव ने व्यवहार किया।
भाग्यवान है जीव वही, जिसने असलियत से प्यार किया।।
हकीकत की एक झलक, कल देखने में आयेगी।
सृष्टि भर की महान सुन्दरता, मुझको ही मिल जायेगी।।
हेम्माबा ने सुना ते मन में, अति ही हर्ष मनाती है।
अन्तरीव जो इच्छा उसकी, आज पूर्ण हुई जाती है।।
प्रातः होते ही धनुर्दास, सीधा ही मठ में जा पहुँचा।
वैष्णव चले दिखाने उसे, जिस रूप की थी उसे प्रतीक्षा।
श्री चरणों में पहुँच के वो, दण्डवत अभिवादन करता है।
अति विनम्र भाव से उनके, चरणों में सिर धरता है।।
श्री गुरुदेव दया के सागर, दृष्टि उस पर करते हैं।
धनुर्दास जी निहाल हुये, पुनि पुनि चरणों में पड़ते हैं।।
विश्व भर के सुन्दर रूप का, दर्शन आज वो पा रहा था।
ऐसा दिलकश रूप था वो, इक टक देखे जा रहा था।।
पत्थर की निर्जीव प्रतिमा, की भाँति वह खड़ा रहा।
त्रिभुवन मोहन के श्री दर्शन, करने को वहाँ अड़ा रहा।।
उस मनमोहक रुप ने उस पर, जादू करके मोह लिया।
श्री प्रभु ने एक दृष्टि से, उसका हृदय टोह लिया।।
श्री चरणों से एक पलक भी, वो नहीं हटना चाहता था।
दर्शनामृत का प्रेम प्याला, नित्य ही पीना चाहता था।।
कमल पुष्प के रस का प्रेमी, कमल पे जब आ जाता है।

एक बार जो बैठा उस पर, फिर नहीं हटना चाहता है।।
भ्रमर तो रस का है मतवाला, दूरी उसे स्वीकार नहीं।
सच्चे प्रेमी का प्रीतम बिन, और किसी से प्यार नहीं।।
धनुर्दास की हालत अब तो, पलट के रंग बदल आई।
हेम्माबा के रूप में अब तो, कशिश न कुछ भी नज़र आई।।
पा चुका अब तो वो, त्रिभुवन सुन्दर झाँकी के दर्शन।
तपस्या करने पर भी जिसको,प्राप्त नहीं कर पायें मुनिजन।।
सतपुरुषों का प्यारा दर्शन, उसके मन को मोह रहा था।
बार बार उस झाँकी के, दर्शन को व्याकुल हो रहा था।।
बड़ी कठिनता से वैष्णव ने, उसे वहां से विदा किया।
यह कह कर कल इसी समय, फिर तुम्हें दर्शन होगा।।
ज्यों त्यों करके रात बिताई, प्रातः मठ में जा पहुँचा।
सतपुरुषों के दर्शन पाकर, मिट गया मन का सब धोखा।।
लगा वेनती करने वो, शरण में अपनी लीजियेगा।
परम पवित्र श्री चरणों से, जुदा न हरगिज़ कीजियेगा।।
मुझसे अब श्री दर्शन बिन, इक पल भी रहा न जाता है।
आपके सुन्दर दर्शन बिन, यह आतुर मन अकुलाता है।।
धनुर्दास दीवानों की भाँति, फूट फूट कर रोने लगा।
श्री चरणों में गिर कर वो, अश्रुओं से चरण धोने लगा।।
श्री प्रभु का वरद हस्त, आशीष प्रदान कर रहा था।
धनुर्दास के अन्दर मन में, प्रेम का सागर भर रहा था।।
सच्चे प्रेमी इसी प्रकार, मालिक से नेह लगाते हैं।
नश्वर जगत की ममता में, वो खुद को नहीं उलझाते हैं।।
सन्तों की संगत में आकर, सच्चे ज्ञान को पाते हैं।
सत असत की परख वो करके, जीवन सफल बनाते हैं।।

यह संसार माया का लोभी, माया पीछे मरता है।
भक्ति त्याग के प्यार सदा वो, नफसानियत से करता है।।
यह शरीर तो क्षणभंगुर है, इससे मत कर प्यार रे।
असलियत से प्यार तू कर ले, यह बाज़ी मत हार रे।।
स्थिर जग में नाम गुरु का, आदि अन्त का साथी है।
दासनदास उस नाम को जप ले, आयु बीती जाती है।।

स्वाँसों की कद्र करो

उठ ज़रा अब चेत जा जीवन सरकता जा रहा।
लेखा देने का समय भी निकटतर है आ रहा।।
जिस लिये था तुझको भेजा मालिक ने संसार में।
उस काम को तूने भुलाया संसार के व्यवहार में।।
वक्त जो तुझको मिला है इसकी कीमत जान ले।
मानुष जन्म का लाभ उठा सन्तों का कहना मान ले।।
खो दिया गर वक्त तो नादनी समझी जायेगी।
मालिक की धरोहर में बेईमानी समझी जायेगी।।
इसलिये एक क्षण भी वृथा न गँवाना चाहिये।
मन की मति पर चल के धोखा न खाना चाहिये।।
बह गया पानी यत्न से वापिस भी लाया जायेगा।
खो गया जो धन दोबारा फिर कमाया जायेगा।।
बिगड़े हुये स्वास्थ्य को फिर से बनाया जायेगा।
यह समय जो रत्न है खो कर न पाया जायेगा।।
कोटि यत्नों से यह स्वाँस वापिस कभी न आयेगा।
ऐसे धन को खो दिया तो हाथ मल पछतायेगा।।
अमूल्य यह हीरा जन्म यूँही गँवाने का नहीं।
यह सुनहरी वक्त फिर फिर हाथ आने का नहीं।।
तू कद्र इस वक्त की दिल में अगर न लायेगा।
वक्त भी तेरी कदर तुझे बरबाद करके जायेगा।।
हर स्वाँस मेहमान बनकर पास तेरे आता है।
इसका सत्कार तुझसे हो नहीं गर पाता है।।
सन्तों का कहना है फिर निराश यह हो जाता है।
भूल कर भी यह कभी फिर लौट कर नहीं आता है।।

मिट्टी का ढेला हो जैसे, जल में गल जाता तमाम।
वैसे पल पल जा रही आयु, तू हो जा सावधान।।
जिस तरह चढ़ता नहीं, त्रिया पे तेल है बार बार।
ऐसे ही मानुष जन्म भी मिलता नहीं है बार बार।।
सन्त सुन्दरदास जी कहते हैं, बाज़ी मार ले।
वक्त की बाज़ी है चाहे जीत ले या हार ले।।
ये तो चन्दन की तरह हैं स्वांस तेरे बाँवरे।
इन से तू धनवान बन जा यह सुनहरी दाँव रे।।
यह मानुष तन नहीं मिला है विषयों में गँवाने को।
जीवन का उद्देश्य महापुरुष आते हैं जतलाने को।।
तेरी दीन दशा पे दया सतपुरुषों को आती है।
मायासक्त अवस्था तेरी सन्तों को नहीं भाती है।।
जो कद्र समय की नहीं करते वह तलियाँ मल पछताते हैं।
इसी विषय पर एक दृष्टान्त आज हम तुम्हें सुनाते हैं।।
कहते हैं कि किसी देश में एक धर्मात्मा राजा रहता था।
शिकार खेलने कभी कभी साथियों सहित वह जाता था।।
उन दिनों की प्रथा थी यह जो भी शिकार को जाता था।
जिसके सम्मुख आये शिकार वही घोड़ा दौड़ाता था।।
एक समय का ज़िकर है शिकार खेलने चला गया।
जंगल में जाकर भटक गया कारण उसका हुआ क्या।।
अचानक राजा के आगे से एक शिकार का गुज़र हुआ।
राजा को भी उसके पीछे तुरन्त घोड़ा दौड़ाना पड़ा।।
भाग दौड़ करते करते समय दोपहर का हो आया।
जान लबों पर आने लगी जब भूख प्यास ने तड़पाया।
व्याकुल हो कर राजा जी जल की खोज लगाते हैं।

पड़ी दृष्टि इक झोंपड़े पर मन में धीरज लाते हैं।।
शीघ्रता से उस झोंपड़े के निकट पहुँच जब जाते हैं।
उस झोंपड़े में एक गरीब लकड़हारे को पाते हैं।।
लकड़हारे ने जब देखा एक अतिथि द्वार पर है आया।
श्रद्धा से सत्कार किया अन्दर ले जा के बिठलाया।।
घोड़ा बाँध वृक्ष के नीचे शीतल जल भर लाता है।
भोजन करने की श्रद्धा भाव से विनती खूब सुनाता है।।
मिट्टी के बर्तन में रख कर बाजरे की रोटी ले आया।
अमृत सा आनन्द उस रोटी में राजा जी ने है पाया।।
उसके सच्चे प्रेम भाव से मन में हुए बहुत प्रसन्न।
आदर और सत्कार ने तत्क्षण मोह लिया राजा का मन।।
चारपाई एक बिछा दी उसने, करने लगे उस पे विश्राम।
देश हमारे का है राजा थी नहीं उसको पहचान।।
गर उसे कुछ ज्ञान भी होता तो वह कर ही क्या पाता।
मीठे और नमकीन पदार्थ अच्छे अच्छे कहां से लाता।।
नींद से उठने के उपरान्त राजा ने उससे पूछा।
कौन है तू करता है क्या किस कारण जंगल में रहता।।
हाथ जोड़ कर बोला वह, महाराज मैं लकड़हारा हूँ।
कोयले बेच बेच के राजन करता अपना गुज़ारा हूँ।।
काट के जंगल की लकड़ी कोयले उनके बनाता हूँ।
बेच के फिर वही कोयले अपनी आजीविका चलाता हूँ।।
पर यह जंगल कट चुका है अब तो बड़ी हैरानी है।
लकड़ी प्राप्त करने की भी मुझको बड़ी परेशानी है।।
कठिनता से काष्ठ अब तो प्राप्त मुझे हो पाता है।
दुःख दर्द सुनाया जब उसने राजा फिर यूँ समझाता है।।

मैं हूँ इस देश का राजा कल आना तू दरबार मेरे।
बिगड़ी हुई बन जायेगी तेरी जो आओगे पास मेरे।।
इतना कह कर राजा जी ने पता लिख कर दे दिया।
दिखला देना दरबान को कागज़ इतना और समझा दिया।।
तेरे लिये प्रबन्ध कुछ लकड़ी, का करवा दूँगा।
जहाँ तक हो सकेगा मुझसे तेरा कष्ट मिटा दूँगा।।
राजा उठकर जाने लगा तब लकड़हारे ने कहा।
तुम हो हमारे देश के राजा इस बात का मुझे ज्ञान न था।।
कृपा करके अब तो भगवन क्षमा मुझ को कीजिये।
आप हैं सम्राट हमारे अवगुणों पर मत खीजिये।।
आप का सत्कार कुछ भी नाथ कर न मैं पाया हूँ।
हाथ जोड़ कर क्षमा माँगूँ शरण आप की आया हूँ।।
दीन वचन सुन राजा ने अपनी प्रसन्नता प्रकट करी।
हो कर सवार फिर घोड़े पर राह ली अपने नगर की।।
दूसरे ही दिन शहर में लकड़हारा भी चला गया।
पूछताछ कर लोगों से महल द्वार पे जा पहुँचा।।
कौन हो क्या काम है तेरा पूछा यह द्वारपाल ने।
कागज़ हाथ पर धर दिया तत्काल लकड़हारे ने।।
द्वार रक्षक चकित रहकर कागज़ को लेकर हाथ में।
आनाकानी के बगैर ही ले कर उसको साथ में।।
पहुँचा दिया दरबार में बिठलाया गया वह प्यार से।
राजा उस पर खुश था उसके स्वागत सत्कार से।।
सजधज से राजा ने किया स्वागत लकड़हारे का।
शर्म से बुरा हाल था उस गरीब बेचारे का।।
वैसे ही राजाओं के तो हृदय होते हैं गम्भीर।

पर लकड़हारे की महिमा तो कर दी उसने आलमगीर।।
मुख्यमन्त्री को सुना दी हुई जिस कद्र घटना थी।
आवभगत इस लकड़हारे ने हमारी बहुत ही की।।
इसके निर्वाह का कोई साधन नहीं है इसके पास।
वक्त इसका कट रहा है दरिद्रता में दिन और रात।।
ख्याल हमारा जा रहा है चन्दन वाले बाग में।
इसके निर्वाह के लिये उनमें से एक इसको दें।।
इसको जीवन भर में ताकि कोई कष्ट सता न सके।
और सब परिवार इसका सुखपूर्वक जीवन बिता सके।।
मंत्री ने आज्ञा अनुसार एक कागज़ ले लिया।
चन्दन वाले बाग का दान पत्र लिख कर दिया।।
राजा ने उस पर किये हस्ताक्षर अपने हाथ से।
शासकीय मोहर लगा कर दे दिया खुद हाथ से।।
एक कर्मचारी को भी कर दिया फिर साथ में।
ताकि पहुँचा कर के आवे उसको चन्दन बाग में।।
राजा ने जाते समय उसे और भी प्रसन्न किया।
बहुत सा पुरस्कार दे कर लकड़हारे को विदा किया।।
कर्मचारी ने पहुँचा कर बाग में यह कह दिया।
आज से ऐ लकड़हारे यह बाग तेरा हो गया।।
इसका अब प्रयोग तुम जिस तरह चाहो करो।
दास ढंग से काम लेकर जीवन का निर्वाह करो।।
अब सुनो वह लकड़हारा, क्या दशा कर डालता।
हाल क्या कर डालता है, चन्दन वाले बाग का।।
उसने जब देखा कि लकड़ी, का घना यह बाग है।
आहा, जन्मों की मिटी सब, दुविधा मेरी आज है।।

जो कि लकड़ी ढूँढने से, मैं बहुत परेशान था।
जंगल जंगल था भटकता, और बहुत हैरान था।।
वह सब भटकना मिट गई, और सब परेशानी गई।
इस बाग की लकड़ी को पाकर, मेरी सब हैरानी गई।।
आज जो लकड़ी मिली है, वह निहायत बा कमाल है।
बादशाह ने दे दिया मुझे, लकड़ियों का टाल है।।
काट कर सब लकड़ियाँ, कोयले बनाऊँगा।
बेच कर उन कोयलों को, आजीविका चलाऊँगा।।
नादान चन्दन काट कर, कोयले बनाता रहा।
कोयलों को बेच कर, खिलाता और खाता रहा।।
वह इसी में खुश था नादां, दुःख दर्द मेरा मिट गया।
जंगल में जा कर ढूँढना, लकड़ी का मुझसे छुट गया।।
पर दरिद्रता उस की तो, वैसी ही चलती जा रही।
उसके जीवन में कोई, तबदीली नहीं थी आ रही।।
ऐसा ही करते हुए, अब दो बरस थे हो चले।
अब तो लगभग वृक्ष भी, सारे खतम थे हो चले।।
जल के कोयले बन चुका था, सारा चन्दन बाग वो।
बच गए थे एक कोने में, वृक्ष बस एक दो।।
एक दिन राजा अचानक, आ गए उस ओर थे।
कुछ समय की बात है, पहले आए जिस ठौर थे।।
है वही घर लकड़हारे का, लगे कुछ सोचने।
बाग चन्दन का दिया था, लाभ उठाया होगा उसने।।
बेच कर चन्दन को अब तो, धनवान बन गया होगा।
गर बैठ कर खाता रहे, तो भी न धन खत्म होगा।।
इतने में देखा कि लकड़हारा, सामने से आ रहा।

झोंपड़े में घुसने लगा, राजा ने बुलवा लिया।।
आते ही उसने अदब से, चरणों में प्रणाम किया।
पूछा राजा ने सज्जन, तुम ने है क्या काम किया।।
क्या खबर है तेरी, और तेरे परिवार की।
लकड़हारे ने कहा, महाराज कृपा है सब आपकी।।
फिर कहा राजा ने, तुम तो अब तलक कंगाल हो।
तुम तो बे-नसीब निकले, क्या हुआ सब माल वो।।
टूटा फूटा झोंपड़ा, वह ही दरिद्रता का हाल है।
बुरा हाल बाँके दिन, वाली तुम्हारी चाल है।।
तेरी अवस्था बदलने को ही, हमने ऐसा किया था।
दे दिया था बाग चन्दन वाला, तब यह सोचा था।।
पाकर के चन्दन बाग को, धनवान तुम बन जाओगे।
अपने रहने के लिये, सुन्दर भवन बनवाओगे।।
सोचता था खूब तुमने, उन्नति की होगी।।
मुझको यह आशा न थी, हालत तुम्हारी वैसी ही होगी।।
मुझको भारी खेद है, कुछ भी लिया न फायदा।
वकत खो देते हैं सारा, मूर्खों का कायदा।।
लकड़हारे ने कहा महाराज वह जो बाग था।
बहुत ही आराम उससे, मैंने पाया बादशाह।।
पहले तो जंगल से लकड़ी, लानी पड़ती थी मुझे।
तब कहीं कठिनता से, उसके बनाता कोयले।।
फिकर सारा मिट गया, उस बाग के आधार।
जीवन भर न भूलूँगा, सरकार का उपकार।।
एक दम हैरान होकर, राजा जी कहने लगे।
तो क्या तुम चन्दन के, कोयले बनाते रहे।।

अफसोस आता है तेरी, बेसमझी और नादानी पर।
कोयले चन्दन के बनाए, धिक्कार तेरी ज़िन्दगानी पर।।
लकड़हारे ने कहा रो रो के, और करता भी क्या।
कोयले बनाता न अगर तो करता मैं कैसे निर्वाह।।
लकड़हारे से यह सुनकर, राजा दुःखी दिल में हुआ।
ऐसे परखहीन को, मैने रतन क्यों दे दिया।।
जो कि बुद्धिहीन बस, कोयले बनाता रह गया।
और वह बहुमुल्य रत्न, उसने यूँही खो दिया।।
देख कर राजा की हालत, लकड़हारा घबरा गया।
अन्त में राजा ने पूछा, बाकी भी कुछ रह गया।।
लकड़हारे ने कहा, बस एक दो पेड़ ही बाकी बचे।
जो कि उसी बाग के, एक कोने में हैं खड़े।।
उदास मन से राजा ने, लकड़हारे से कहा।
जो कि वृक्ष बाकी बचे हैं, चल के वह हमको दिखा।
जा के देखा क्या कि, चन्दन बाग सारा जल गया।
ढेर कोयलों के लगे हैं, हर तरफ ही जा बजा।।
चन्दन की देखी दुर्दशा, राजा हुए मन मे दुःखी।
उसकी जो हालत हुई, जाए किसी से न कही।।
लकड़हारे ने कहा, हुज़ूर मुझ से सख्त गलती हुई।
कारण इसका है यही, कि मुझ को इसकी न परख थी।।
कृपा करके अब मुझे, इसकी परख कराईए।
अनुग्रह मुझ पर कीजिए, मेरे अवगुण चित्त न लाईए।।
तत्क्षण टुकड़ा एक चन्दन का, कटा कर दे दिया।
बेच आना शहर में, यूं लकड़हारे से कहा।।
जो मिलेंगे दाम इसके, लाना तुम दरबार में।

कदर तुझको तब पड़ेगी, चन्दन के व्यवहार में।।
बाकी के जो पेड़ हैं, उनको नष्ट करना नहीं।
यह है चन्दन बेशकीमत, व्यर्थ इसे खोना नहीं।।
लकड़हारा ले के लकड़ी, शहर को फिर चल दिया।
जहाँ से गुज़रा वातावरण, सब सुगन्धित कर दिया।।
बीस पच्चीस रूपयों में वह, टुकड़ा बिका बाज़ार में।
ज़ार ज़ार रोने लगा, खुद को लगा धिक्कारने।।
मैंने चन्दन बाग का, सचमुच किया है दुरुपयोग।
जीवन भर पछताऊँगा, भोगूँगा अपने कर्म भोग।।
दाम लेकर लकड़हारा, जब गया दरबार में।
चन्दन बिकने का वृतान्त सब, सुना दिया दरबार में।।
हँस के राजा ने कहा, जब टुकड़ा ही मुल्यवान है।
क्यों तू ऐसा बाग पाकर, हुआ नहीं धनवान है।।
अब यह सोचो कितना तुमने, कर दिया नुकसान है।
अफसोस, इतने धन को पाकर, न बना धनवान है।।
तुम इसे लाते अगर, उचित ढंग से प्रयोग में।
कई तुम्हारी पीढीयाँ, लेतीं यह धन उपयोग में।।
तुम सुखी होते तुम्हारा, परिवार भी होता सुखी।
जीवन भर सुख भोगते, होते कभी न फिर दुःखी।।
जितना चन्दन बच रहा है, इससे पूरा काम लो।
ख्याल से बेचो इसे, और पूरे पूरे दाम लो।।
इससे भी जीवन सुखी, बन सकता है तेरा अज़ीज़।
ज़िन्दगी सुधरेगी तुम्हारी, गर बात मानोगे अज़ीज़।।
अब तो लकड़हारा, अपनी करनी पर पछताता हुआ।
आँसुओं से मुँह को धोता, अपने घर को चल दिया।।

इसीलिए सतपुरुष हैं कहते, चेत, चेत अब चेत।
फिर पछताए क्या हो, चब चिड़ियाँ चुग गईं खेत।।
ऐ प्राणी कुछ सोच ज़रा, यह तेरी ही कहानी है।
लकड़हारे की भांति तूने, स्वांसों की कदर न जानी है।।
इक इक स्वाँस जो जाए तेरा, हाथ से जाए खज़ाना है।
स्वाँसों के बारे में सुन, सन्तों का जो फरमाना है।।
यह जो मानुष तन है तेरा, चन्दन वाला बाग है।
गुरु बिना यह जल जाता है, काम क्रोध की आग है।।
जो विषय विकार में फँस जाता, वह कोयले इसके बनाता है।
जो गुरु पूरे की शरण में जाता, वह ही कीमत पाता है।।
मानुष तन का एक एक, यह अंग कीमतदार है।
लाभ उठा या यूंही गँवा, तुझको अब अधिकार है।।
बेशकीमत स्वाँस तेरे, इनको भजन में ही लगा।
मोल इक इक स्वाँस का है, तीन लोक की सम्पदा।।
बिन स्वासों के मानुष तन की, कोई भी महत्ता नहीं।
स्वांस निशदिन जा रहा है, लौट कर आता नहीं।।
वही चतुर सुजान जो, शुभ कार्य में लगाता है।
भजन अभ्यास और सेवा का, इससे लाभ उठाता है।।
जो उचित उपयोग में लाता, बुद्धिमान कहाता है।
नाम का धन कमा कर, इससे, सच्चा धनी बन जाता है।।
भाग्य से है मिल गया, फिर हाथ आने का नहीं।
है निहायत कीमती तन, वृथा गंवाने का नहीं।।
जो प्राणी इस जन्म को, नहीं भक्ति के अर्थ लगा रहा।
लकड़हारे की तरह वह, कोयले ही बना रहा।।
चन्दन सा यह तन है तेरा,गुरु की भक्ति कमा ले तू।

लोक परलोक में संग चले जो, नाम की पूँजी बना ले तू।।
निद्रा भोजन भोग भय, यह जन्मों में एक समान।
कुल मालिक से मिलना केवल, मानुष जन्म को है वरदान।।
अकलमन्द प्रवीण हो जग मे, जिसने नाम कमाया है।
कदर उसी की त्रैलोकी में, जन्म सफल कर पाया है।।
एक निर्धन का लड़का भी, जब विद्या हासिल कर लेता है।
उस विद्या के बलबूते पर, इज्ज़त प्राप्त कर लेता है।।
लेकिन एक राजा का लड़का, जो अनपढ़ ही रह जाता है।
उस विद्वान लड़के की मानिन्द, इज्ज़त वह नहीं पाता है।।
वैसे ही यह भक्ति भी, ब्रह्म विद्या की मानिन्द है।
जो भी इसकी करे कमाई, वह पाता सच्चा आनन्द है।।
भक्ति के बिन राजा भी, नहीं सच्चे सुख को पा सकता।
सच्चे अर्थों में गुरुमुख का ही, लोक परलोक सँवर जाता ।।
है झूठी जग मान बड़ाई, इससे तुम न प्यार करो।
गुरुमुख बन के सब कार्यवाही, गुरु उपदेश अनुसार करो।।
स्थिर रहने वाली इज्ज़त, गुरु भक्ति से प्राप्त होती है।
झूठे जग की प्रतिष्ठा तो, कायम सदा नहीं रहती है।।
मानुष जन्म विषयों में खोना, दास कोयले बनाना है।
जिसने गुरु की भक्ति कमाई, स्वाँसों की कदर को जाना है।।

गुरु बिन घोरअन्धार

भवसागर कोई तरे न गुरु बिन, गुरु बिन ठौर नहीं मिलती।
भटक भटक दुःख पाये गुर बिन, गुरु बिन गैल नहीं मिलती।।
सतगुरु शरण जगत में केवल, सर्व सुखों की खानी है।
चित्त अशान्त रहे सतगुरु बिन, होवे सदा ही हानी है।।
सतगुरु आते हैं हर युग में, भवजल पार उतारन काज।
भवसागर से पार होवें वे, जो बैठें गुरु नाम जहाज़।।
भक्ति मुक्ति और परमपद, दायक सतगुरु चरण कमल।
बलिहारी जाऊँ चरण कमल पर, पूजूँ उन्हें नित हृदयस्थल।।
जीवन पथ है दुर्गम जिस में, विघ्न अनेकों आते हैं।
जो सतगुरु की शरण पकड़ ले, पल में नष्ट हो जाते हैं।।
मोह लोभ में गाफिल हो कर, सोया सब संसार सदा।
सतगुरुदेव जगाते हैं, जीव जगावनहार सदा।।
सच्चिदानन्द घन परम पुरुष, दुःखहारी सुखदायक हैं।
प्राणी मात्र के परम हितैषी, जीव के हरते पातक हैं।।
आसा मनसा छोड़ के जग की, जोड़ो गुरु चरणन के साथ।
भवसागर से सहज तरोगे, गुरु वचन राखो सिर माथ।।
गुरु का वचन बसे हृदय में, मिटे सकल मन का अन्धकार।
वो ही ज्ञानी ध्यानी वो नर, गुरु वचन राखे उर धार।।
गुरु का वचन प्रकाशमय, बुद्धि में जो संचार करे।
सकल कुबुद्धि नष्ट होय, बातन में उजियार करे।।
यही समय गुरु चरणन में, जो गोता एक लगायेगा।
गुरु चरणन के तीर्थ में, वह मनवांछित फल पायेगा।।
अति दुर्लभ यह मानव काया, इससे लाभ उठा प्यारे।
वास्तविक ध्येय को जान के गुरु से,जीवन सफल बना प्यारे।।

बिना गुरु के काम न होगा, भवजल से तर जाने का।
यह विवेक सतगुरु से मिलता, बिन गुरु समझ न आने का।।
पूर्ण सन्त मिलें न जब तक, जन्म सफल नहीं होता है।
सहस्रों वर्ष जप तप करके, आयु वृथा खोता है।।
जप तप का फल बेशक मिलता, पर जीव काज नहीं सरता है।
पूरे गुरु की शरण लिये बिन, जन्म मरण में पड़ता है।।
याज्ञवल्क्य और सनकादिक भी, ये ही वचन उच्चारत हैं।
जप तप से हो स्वर्ग प्राप्त, वेद भी यही पुकारत हैं।।
मुद्गल ऋषि ने स्वर्ग सुखों से, साफ साफ इनकार किया।
जहाँ से विचलित हो न कोई, आनन्दधाम से प्यार किया।।
कितनी ही कोई पोथी पढ़ले, विद्वान भी कहलाये।
लेकिन गुरु की चरण शरण बिन, ब्रह्मज्ञान न मिल पाये।।
लोहार हवाले होकर ही, लोहा तब कीमत पाता है।
लकड़ी तब कीमतदार बने, जब कारीगर कर्म कमाता है।।
विद्यागुरु के बिना कोई जैसे, विद्या न पढ़ पाता है।
विद्वान की शरण में जाने से, अनपढ़ भी पढ़ने लग जाता है।।
जैसे सोने की कीमत को, फकत सुनार ही जानता है।
उसे चढ़ा कर भट्ठी पर, उसका सब खोट निकालता है।।
इसी कारण से जीव तुझे, सतगुरु की अति ज़रूरत है।
दिनकर सम हैं सन्त सतगुरु, तू अन्धकार की सूरत है।।
तिमिर अज्ञान मिटाने को, गुरु प्रकाशमय आते हैं।
अन्तर की अक्षय सम्पत्ति का, भेद सभी बतलाते हैं।।
जिस वस्तु को ढूँढे हर दम, घट में ही दर्शाते हैं।
तेरी दरिद्रता सब हर कर, तुझे धनवान बनाते हैं।।
अब तू खोज कर पूर्ण गुरु की, तेरी तृषा मिट जायेगी।

रूह को चैन मिलेगा उनसे, शाश्वत सुख को पायेगी।।
सच्चे आनन्द की राशी पा, तेरी भटकन मिट जायेगी।
जैसे भरपेट जो खा बैठे, उसे कोई वस्तु न भायेगी।।
श्री गुरु अर्जुनदेव जी फरमाते हैं, मानों सर्वजगत का राज्य मिला।
जब हमरे शीश पर सतगुरु जी ने,करुणाकर अपना कर कमल रखा।।
श्री गुरु रामदास जी ने भी, साफ साफ फरमाया है।
सतगुरु से ज्ञान का दीप मिला, अदृश्य राशि को पाया है।।
अदृश्य दिखाई जो नहीं देता, अगोचर जो पकड़ा नहीं जाता।
वह अलख है मन और बुद्धि से,जिसको समझा नहीं जाता।।
जो अलख निरंजन मायारहित, उस पारब्रह्म परमात्म को।
साकार रूप जो सतगुरु हैं, घट में दर्शाया उस आत्म को।।
यह सतगुरु की अनुकम्पा है, जो गुरुमुख पर बरसाते हैं।
अज्ञान आवरण मिटायें सकल, घट में दीदार कराते हैं।।
यमराज के भारी शूलों से, जीव को आन बचाते हैं।
बिन मोल अकारण अनुकम्पा, जग जीवों पर बरसाते हैं।।
ऐसे सतगुरुओं के कृतज्ञ, और आभारी होना चाहिये।
जितना भी गुणानुवाद, ऐसे गुरुओं का गाना चाहिये।।
श्री शुकदेव मुनि के हालात, अकसर सुनने में आते हैं।
यह गर्भ में योग कमाने से, गर्भ योगीश्वर कहलाते हैं।।
जब पाँच वर्ष की आयु हुई, सीधी ले ली जंगल की राह।
कहीं माया हमको फाँस न ले,यह उनके मन में भय भी था।।
इसीलिये लड़कपन में ही, घर बार सभी कुछ त्याग दिया।
काफी अर्सा जंगल में रह कर, खूब ही भजन-अभ्यास किया।।
चूँकि गुरु धारण न किया, मनमत से सब कार्यवाही करते रहे।
इससे न शान्तिआई जब मन मेंआखिर वह पिता के पास गये।।

उनके पिता थे वेदव्यास, जो तत्त्वेत्ता और ज्ञानवान।
शुकदेव ने हाल ब्यान किया, सुनकर हालत ली पहचान।।
मनमत करनी है सब इसकी, गुरु तो कोई बनाया नहीं।
गुरु बिना किसी ने भी, असली सुख को पाया नहीं।।
इस मन को ठहराने के लिये, गुरु की शरण में जाना चाहिये।
तब प्राप्त होवे सुख राशि, पहले गुरुमुख होना चाहिये।।
मन ही मन में विचार किया, इनको यह हिदायत करनी है।
पूरे गुरु की शरण पड़ो, जो भक्ति से झोली भरनी है।।
और अगर इनको मैं अपनी, शरण में रख लेता हूँ।
पिता समझ विश्वास न होगा, राजा जनक की शरणी भेजता हूँ।।
भक्ति तो विश्वास श्रद्धा से, गुरु वचनों से दृढ़ होती है।
शिष्य पूर्ण रूप से निश्चय करे, तब मन की सफाई होती है।।
इसलिये इन्हें राजा जनक की, शरण में अब जाना चाहिये।
उनसे ही ज्ञान मिलेगा इनको, उनका सेवक बनना चाहिये।।
पिता की आज्ञा पाकर ही, जनक के दर पर जाते हैं।
भाँति भाँति के विचार कई, मन में अपने लाते हैं।।
करने लगे विचार यह मन में, जिन्हें गुरु बनाने जाता हूँ।
वे अधिक त्यागी वैरागी होंगे, अब जाकर दर्शन पाता हूँ।।
इसीलिये ही तो मुझ को, पास इन्हीं के है भेजा।
इसी ख्याली धुन में ही, डयोढ़ी पर वे पहुँचे जा।।
शुकदेव सात दिवस पूरे, डयोढ़ी पर ठहराया गया।
तब कहीं आज्ञा मिलने पर, अन्दर उन्हें बुलाया गया।।
देखा महाराजा जनक हैं, स्वर्ण सिंहासन पर विराजमान।
जिस पर हीरे लालों की, मणियों की है खूब जड़ान।।
शाही ठाठ-बाठ के अन्दर, कारज कई हो रहे हैं।

करबद्ध होकर चहूँ ओर, सेवादार प्रतीक्षा कर रहे हैं।।
कब आज्ञा होती है मालिक की, इसी इन्तज़ार में खड़े हुये।
यह दृश्य देख शुकदेव मुनि, मन में कुछ बातें घड़े हुये।।
मन ही मन में हैरान हुये, वे कुछ और समझकर आये थे।
जिस ख्याल को लेकर आये थे, सब हाल उलट ही पाये थे।।
मुखातिब होकर अपने मन से, कहने लगे क्या माज़रा है।
ये तो जाल में उलझे हैं, माया का खूब पसारा है।।
यह काम पिता ने गलत किया, जो इनके पास मुझे भेजा।
दिन रात माया में आसक्त हैं, इन्हें गुरुपने से काम है क्या।।
जो खुद हों फँसे जंजालों में, वे और को खाक छुड़ायेंगे।
आज़ाद नहीं जो खुद होंगे, वे क्योंकर आज़ाद करायेंगे।।
लगे करन कुतरकें तरह तरह, दरबार की देखी शोभा जब।
यद्यपि महाराजा थे जान गये, पर राज़ छिपाया उन्होंने सब।।
सोच में डूबे थे शुकदेव, कौतुक इक यह होता है।
फाटक का संतरी घबराया हुआ, तब दौड़-दौड़ कर आता है।।
कहा शीश निवाकर चरणों में, महाराज,पुरी सब जल गई है।
और शहर तमाम ही सुलग गया, मिथिलापुरी सकल दहल गई है।।
अब आग भी सुलग-सुलग करके, इस डयोढ़ी तक है आ पहुँची।
कोई शीघ्र उपाय होना चाहिये, महाराजा ने न परवा की।।
पहले की भाँति शान्त स्वरुप, जनक जी महाराज विराजे रहे।
मानो कुछ उन्होंने सुना न हो, चुपचाप मौन ही साधे रहे।।
शुकदेव मगर झट तड़प उठे, कहीं सोटी कमण्डल न जल जाये।
शीघ्र खड़ाऊँ सम्भालूँ जाकर, अग्नि की भेंट न हो जायें।।
यह सोच के पीछे हटे ही थे, महाराजा जी ने रोक लिया।
कहाँ भाग चले हो मुनिराज, उन्हें अपने पास बिठला लिया।।

उनसे मुखातिब होकर बोले, सन्तरी ने जो शब्द कहा।
ऐ मुनि सुनो मन चित्त देकर, इससे हमें भय क्यों न हुआ।।
शुकदेव सुनो मेरा आत्मिक धन, जो रूहानी कहलाता है।
वह शाश्वत है और सत सदा, उसे अग्नि जला न पाता है।।
कोई हानि नहीं पहुँचा सकता, कोई चोर भी लूट नहीं सकता।
न खत्म ही होने वाला है, न पानी उसे गला सकता।।
चाहे मिथिलापुरी जल जाये, जल कर के राख भी हो जाये।
नुकसान मेरी उस सम्पत्ति का, इक तिल भी न होने पाये।।
ऐ मुनि वह मेरा रूप नहीं जो मुझको तुम हो समझ रहे।
मेरा वास्तविक रूप और ही है, वह नहीं जो तुम हो देख रहे।।
धन भी मेरा और ही है, जायदाद भी मेरी और कोई।
संसार सभी गर नष्ट होय, न मेरी पूँजी जाये खोई।।
वह वस्तु सदा संग साथ रहे, उसका न सके बिगाड़ कोई।
मुझे सच्ची वस्तु से प्यार सदा, और झूठ से करता प्यार कोई।।
शुकदेव मुनि को राजा ने, कुछ नुक्ते और भी समझाये।
भक्ति परमार्थ के भेद सभी, खोल खोल कर बतलाये।।
सुनकर शुकदेव की आँख खुली, चरणों में फिर प्रणाम किया।
फिर दया के सागर राजा जी ने, शुकदेव को आशीर्वाद दिया।।
परमार्थ का उपदेश दिया, निज भक्तों में शुमार किया।
ऐसे पूर्ण सतगुरुओं ने, सदा सेवक का निस्तार किया।।
फिर नाम की दीक्षा ले करके, बैकुण्ठ में जा स्वीकार हुई।
जब तक न गुरु की शरण गही, तब तक ही बहुत लाचार हुई।।
यह वस्फ है सच्चे सतगुरु में, सेवक का ही सुख चाहते हैं।
सच्ची खुशी प्रदान करें, दुःख से आज़ाद कराते हैं।।
वेद ग्रन्थ और शास्त्रों ने यह खोल खोल बतलाया है।

जो जीव गुरु की शरण पड़ा, भवसागर पार लँघाया है।।
यह हौं मैं ममता का रोग, पूरण वैद्य मिटा पायें।
रूहानी कामिल डाक्टर हैं, हर रोग का दारू बतलायें।।
मोह माया की सख्त बीमारी ने, जीव को आकर घेरा है।
कर डाले घात यह रूहों का, इसका घना बखेड़ा है।।
इससे बचने की युक्ति, सन्त सजन बतलाते हैं।
वैद्य रूहानी बन करके, धराधाम पे आते हैं।।
जब मर्ज़ अधिक यह बढ़ जाये, तब दूर किनारा पा लो तुम।
कन्दराओं में नहीं जाना है, सतसंगत में आ जाओ तुम।।
दुनियाँ से अलग नहीं होना है, मन को अलग कर लेना है।
कामिल मुर्शिद की सोहबत में, इस भेद को हासिल करना है।।
मन इन्द्रियाँ को वश करन विधि, और दात रूहानी मिले वहां।
हर मर्ज़ से दामन मुक्त होये, हर गम से रिहाई मिले वहाँ।।
यह दुनियाँ मोह का शिकार हुई, रूहों का होता है नुकसान।
जीव बेचारा बच न सके, कर लेता है अपना नुकसान।।
मोह-जाल से बचने का ढंग नहीं, फँस कर होता है जीव खुआर।
इससे बचने का ढंग यही, सन्तों की संगत कर लो इखतियार।।
हरगिज़ न फँसाओ मन उसमें मोह माया से आज़ाद रहो।
दुनियाँ के अन्दर रह कर भी, गुरुमुख बन कर सदा शाद रहो।।
गुरु की निगरानी में रह कर, तसलीम करोगे तुम खुद ही।
कितना होता है लाभ तुम्हें, महसूस करोगे खुद तुम ही।।
क्या खूब कहा सहजोबाई ने, गुरु न तजूँ हरि को तज डारूँ।
गुरु भवसागर के माँझी हैं, तन मन धन उन पे वारूँ।।
गुरु की स्तुति कहूँ कहां लग, मेरी रसना सकुचाती है।
घट भीतर हरि को दर्शाया, महिमा वरणी नहीं जाती है।।
जिनकी महिमा सहस्रों मुख से, शेषनाग उचारी है।
ऐसे सतगुरु के चरण कमल पर, दास सदा बलिहारी है।।

भाई जोगा सिंह

जीवों को मार्ग दिखाने आते जग में सतगुरु।
महिमा जिनकी गा रहे हैं ऋषि मुनि भी चारसू।।
आया जो उनकी शरण आवागमन से छुट गया।
छूट कर जंजाल से है चैन पाती उसकी रूह।।
आरिफों की नज़र में है जग में आना उसका धन।
मिल गई जिस को परिपूर्ण सतगुरु की शरण।।
हुकुम सतगुरु का जिसे दरकार है हर हाल में।
ऐसा सेवक फँस नहीं सकता कभी मोह-जाल में।।
करता जो आज्ञा का पालन चलता है गुरु-मौज में।
उलझने देते न हरगिज़ उसको किसी जंजाल में।।
ऐसे सेवक को बचाते सतगुरु हैं हर कदम।
आरिफों की नज़र में है उसपे मालिक का करम।।
ऐसे कई प्रमाण हैं इतिहास जिनसे है भरा।
नाम उनका अमर है दुनियाँ में जीता जागता।।
हुकुम पर गुरु के निछावर कर दिखाई ज़िन्दगी।
ऐसे सेवक का सुनाऊँ आज तुम को माज़रा।।
गुरु की सेवा में किया जिसने सफल अपना जन्म।
नाम जोगा सिंह था उसका, अच्छे थे उसके करम।।
श्री गुरु दशमेश जी जब थे रूहानी जानशीन।
शरण उसको दे रहे थे जो भी आता दीन-हीन।।
उन दिनों यह लड़का आया जोगा सिंह लेने पनाह।
साथ थे माँ-बाप उसके भाव-भक्ति में प्रवीन।।
संस्कारी जान कर हो गये उस पर प्रसन्न।
सतगुरु दयानिधि बालक से बोले ये वचन।।

बच्चे तेरा नाम क्या है सतगुरु ने किया सवाल।
जोगे सिंह मासूम बच्चे ने दिया उत्तर कमाल।।
नाम मेरा जोगा है, हे दीनबन्धु सतगुरु।
मीठी वाणी सुन के सतगुरु हो गये उसपर दयाल।।
किस जोगा है भोले बच्चे, सतगुरु ने किया प्रश्न।
धन्य तेरे माँ-बाप हैं तेरा जीवन भी है धन।।
जोगे सिंह ने अर्ज़ की दिल में अपने भर उल्लास।
आप जोगा हूँ मैं दाता, आप का मसकीन दास।।
हो गये प्रसन्न सतगुरु सुन के बच्चे का जवाब।
प्यार से बोले के जोगे तू रहेगा हमरे पास।।
सिर झुका जोगे ने कहा-ऐ दीनबन्धु सत्य वचन।
मां-बाप भी खुश हो गये सुन के बच्चे के वचन।।
जोगे के माँ-बाप ने जोगा दिया गुरु को सँभाल।
आज्ञा ले घर को चले हो नाम धन से मालामाल।।
जोगासिंह करने लगा गुरु घर की सेवा इस तरह।
भूलकर भी आता न था उसको कभी घर का ख्याल।।
खाते पीते सोते जागते थी लबों पर नाम धुन।
सेवा थी उसकी ज़िन्दगी सेवा में रहता था मगन।।
सेवा करते करते जोगे को गया अरसा गुज़र।
और फिर वह हो गया सतगुरु का मँज़ूरे-नज़र।।
और उधर उन दिनों आई माँ-बाप को जोगे की याद।
आ गये जोगे की ममता को लिये गुरुद्वार।।
सिर झुकाया आ हुज़ूरी में, झुका कर अपना मन।
भेंट किये फूल-फल और साथ में श्रद्धा का धन।।
सतगुरु पूछी कुशल और चरणों में दिया निवास।

जान गये थे भाव उनका आने का प्रभु दीनानाथ।।
फिर भी करने लगे अनजानों जैसी उन से बात।
किसलिये आना हुआ, अपना कहो सब वृतान्त।।
हाथ जोड़ कहने लगे, मन की सब जानत हो तुम।
मोह माया के हैं पुतले कीजिये हम पर करम।।
ऐ प्रभो जोगा व्याह के योग्य है अब हो गया।
इसके व्याह का हुकुम भी दीजिये करके दया।।
सतगुरु त्रिकालदर्शी उनके मन की जान कर।
जोगे को माँ-बाप के संग जाने की दी आज्ञा।।
और कहा जाकर रचाओ जोगे का मंगल लगन।
जोगे से बोले प्रभु भूल न जाना नाम धुन।।
हुकुम पाकर चल दिये तीनों बड़े उल्लास में।
चलते चलते पहुँच गये अपने नगर गृह-वास में।।
जोगासिंह होने लगा दुनियाँ के अन्दर मुब्तिला।
सतगुरु यह देख कर जोगा फँसा मोह-फाँस में।।
जोगे को आज़ाद कराने का लगे करने यतन।
फँस न जाये मोह-फाँस में गालिब न होने पाये मन।।
लेने लगे जोगे की सेवा और भक्ति का इम्तिहान।
परखने को जोगासिंह के रचना लगे अदभुत रचान।।
मगर जोगा जीव बुद्धि समझता यह कैसे भेद।
उस प्रभु अनन्त की महिमा बड़ी अदभुत महान।।
जोगा राहे-रास्त से है खाता झटका एकदम।
करुणा-दृष्टि डार कर राख लिया देकर के दम।।
देखो क्या रचना रचाई उसका सुनिये यूँ ज़िक्र।
जोगे सिंह जो की कमाई उसका हुआ गुरु को फिकर।।

दिलमें आई जोगा इक सेवक है पर नादान है।
माया से उसको बचाने की फिकर हम को ज़बर।।
वरना मार्ग से पटक मारेगी माया दम के दम।
मुहताज है अब वह बेचारा लाज़िम है उस पर करम।।
पास बुला कर एक सिख को बोले उससे सतगुरु।
चिट्ठी उसके हाथ दे कर बात यूं की रूबरु।।
जोगे सिंह के ब्याह की जब होने लगे रस्मों-रसूम।
चिट्ठी देना हाथ में कहना यह दीन्हीं सतगुरु।।
पहले चिट्ठी को पढ़ो, फिर कहीं रखना कदम।
है बुलाया सतगुरु ने आप पर कर के करम।।
जब पढ़ी चिट्ठी तो सतगुरु का हुकुम था इस तरह।
पत्र पढ़कर जोगा तुझको पल भी रुकना है गुनाह।।
जिस अवस्था में हो तुम हमारी तरफ ही चल पड़ो।
काम हमको है ज़रूरी जो तेरी खातिर रूका।।
चल पड़ा तत्काल जोगा छोड़ कर रस्मे-लगन।
जोगा बना गुरु जोगा अब, जन्म हुआ उसका धन्य।।
साथ सिख के जा रहा था जोगा जब गुरु की तरफ।
मुँह फेर कर देखा न उसने मां-बाप दुल्हन की तरफ।।
मौका पाकर मन ने उस पर वार ऐसा कर दिया।
कैसे गालिब हो रहा है देखो अब जोगे पे मन।
पट्टी क्या क्या है पढ़ाता किस तरह वरगलाता है मन।।
जोगे सिंह के चित्त में आकर अभिमान ने किया निवास।
दुनियां भर में होगा कोई मेरे जैसा सतगुरु का दास।।
हुकुम पाकर सतगुरु का छोड़ दी दुल्हन नई।
क्या गज़ब की भक्ति मेरी, मारी जगत को मैंने लात।

अहा, होंगे अब मेरे पर सतगुरु कैसे प्रसन्न।
अहंकार के वश होके जोगा करने लगा अपना पतन।।
भाँप गये जोगे के मन को सतगुरु फिकरमन्द हो गये।
अभिमान के हाथों लुटता हुआ देख कर रंज हो गये।।
जोगे की अब रक्षा करने का किया दिल में ख्याल।
उसकी चिन्ता में प्रभु आनन्दकन्द जी खो गये।
विरद की रक्षा के हेतु सतगुरु सोचें यतन।
जिस तरह से शिष्य का होने न पाये पतन।।
हुकुम को पाकर था जोगा गुरु-नगर को जा रहा।
रात भी होने को आई राह में नगर भी आ गया।।
उस नगर की देखी सजधज और रंगीले बाज़ार।
रात को ठहरें यहाँ उस का मन ललचा गया।।
देखा उसने एक गणिका का बना सुन्दर भवन।
काम ने किया वार उस पर भूल गया वह नाम-धुन।।
छुट गया तब उसका मन हाथों से उसके एकदम।
बन गया गणिका की नज़रों का निशाना एकदम।।
हुकुम सतगुरु का भुलाकर उसका दीवाना हो गया।
रात भर काटे चक्कर न चैन पाया एकदम।।
गैबी शक्ति ने दिया पहरा बचा उसका धर्म।
वरना वह तो हो गया था एक दम में बेधर्म।।
सतगुरु ने रक्षा की आप बन कर पहरेदार।
मन के हाथों जोगा भी खा चुका भरपूर मार।।
रात पूरी बीत गई होने को आई जब सवेर।
होश में कुछ आया जोगा हो निहायत शर्मसार।।
सोचे मन में क्यों हुआ है मुझ से ऐसा दुष्कर्म।

मैंने गुरु-जोगा था बनना करने लगा उल्टे कर्म।।
प्रातः होते चल दिये पहुँचे गुरु दरबार में।
सतगुरु ने पूछा जोगा सिंह से इस ललकार में।।
रात कहाँ खोई ऐ जोगे पहुँचा क्यों नहीं वक्त पर।
कह सुनाई दास्तान आँखों की बौछार में।।
हे प्रभु रक्षा करो मैं नीच पापी हूँ अधम।
नाथ जी अवगुण न देखो कीजिये मुझ पे करम।।
सतगुरु ने नज़रे-रहमत से किया उसका सुधार।
उसके दुर्लभ जन्म की होने न दी सतगुरु ने हार।।
काम शत्रु से बचाया अहंकार का किया विनाश।
डूबता था भव में जोगा सतगुरु ने लिया उबार।।
बन के मल्लाह सतगुरु ने हर लिया सब उसका गम।
जोगा हुआ गुरु-जोगा अब मिट गये रंजो-अलम।।
अपने सेवक को बचाने का गुरु ज़िम्मा लिया।
जीव नादां गर है बचना सतगुरु की शरण आ।।
गर गया वृथा तो फिर नहीं पायेगा मानुष जन्म।
भाग्य से है मिल गया कर ले सफल मानुष जन्म।।
पा गये असीम सुख सेवन किये जिन गुरु चरण।
मिट गया उनका यकीनन लाख चौरासी का गमन।।
उनकी महिमा कीर्ति को जग है सादर है गा रहा।
कर गये जो भाग्यशाली ज़िन्दगी में शुभ करम।।
दासनदास गुरु की शरण ले छोड़ कर मन के भरम।
रात दिन भज गुरु-गुरु यही करम हो यही धरम।।

जिन प्रेम कियो तिन ही प्रभु पायो

प्रेम से बढ़कर नहीं दुनियां में कोई चीज़ है।
हैं प्रेम के वश में प्रभु यह ऐसी उत्तम चीज़ है।।
प्रेम से धन्ने ने वश में कर लिया भगवान को।
प्रेम में छिलके खिलाये विदुरानी ने घनश्याम को।।
प्रेम का दीपक है जिसने दिन में रोशन कर लिया।
उसने भक्ति का खज़ाना अपने दिल में भर लिया।।
प्रेम के आगे सदा झुक जाते हैं दोनों जहाँ।
माया असर न कर सके प्रेम सच्चा हो जहाँ।।
प्रेम सच्चा हृदय में जिसके ठिकाना कर गया।
दास दुनियाँ में वह अपना नाम रोशन कर गया।।
प्रेम के किस्से हज़ारों दिन-रात सुनते आये हैं।
प्रेम के चर्चे सदा ग्रन्थों ने भी गाये हैं।।
प्रेम के वश में सदा भगवान होते आये हैं।
ज़िन्दा मिसाल है भीलनी के बेर जूठे खाये हैं।।
आओ यहाँ महिमा सुनो क्या चीज़ जग में प्रेम है।
प्रेम के आगे झुके सब तप व्रत और नेम हैं।।
प्रेम सच्चा जो करे भगवान के चरणार से।
वह यकीनन सच्ची पूँजी ले गया संसार से।।
जिसने मालिक को ध्याया जीवन के हर स्वाँस में।
वह सदा ही दिल से रहता है प्रभु के पास में।।
अब यहां सुन लो कथा तुम सन्त सुरदास की।
जिसके हृदय में सदा बस प्रेम की ही प्यास थी।।
कौन उनकी महिमा को नहीं जानता जग में भला।
मनमें मालिक को बसाकर जीवन सफल है कर लिया।।

प्रेम के ही पाश में बाँधा श्री भगवान को।
प्रेमी से रहकर अलग कहाँ चैन आये भगवान को।।
एक दिन की बात है कि सूरदास जी मगन हो।
एकतारा पर सजा कर गा रहे थे गीत वो।।
प्रेम की मस्ती में न थी होश तन और बदन की।
गा रहे थे मधुर गीत दिल में बसा प्रभु की छवि।।
मस्त बेखुद हो रहे थे आँसूं रहे थे वे बहा।
लग गई ऐसी झड़ी मानो कि सावन आ गया।।
कर रहे थे याद रो-रो कर श्री भगवान को।
तान अपनी में बुलाते थे कृपानिधान को।।
आ प्रभु इक बार आजा दे दरस इस दास को।
प्यास हृदय की बुझा अपना बना सूरदास को।।
विरह हद से बढ़ गया और हुये वे बेकरार।
ऐसी हालत में भला कैसे न आयें साजन मुरार।।
सर्वकला समर्थ प्रभु थे पास ही के वन में।
गउयें चराते थे प्रभु तड़प उठे वे मन में।।
बन गये ग्वाल बाल नहीं आ गये मैदान में।
सूरदास का गीत सुन मस्त हो गये तान में।।
बैठ कर चुपचाप वह मन ही मन मुस्काते हैं।
प्रेम की मस्ती में खोकर भेद न कुछ बतलाते हैं।।
प्रेमी के वश में होकर बेखुद हो गये प्यार में।
पा रहे आनन्द जो वह कहाँ संसार में।।
और सूरदास भी गीत जो था गा रहा।
प्रेम-अमृत से भरा भगवान को था भा रहा।।
थक गये जब सूरदास गाना तभी बन्द कर दिया।

तब कहा भगवान ने अरे यह क्या तुमने कर दिया।।
आप का मधुर राग तो तन प्राण से था भा रहा।
भक्त जी कृपा करो इक बार फिर गाओ ज़रा।।
जो गीत मीठे सुर में तुम थे अभी ही गा रहे।
एक बार फिर से सुनाओ क्यों जी मेरा तरसा रहे।।
आप के गाने से मस्ती जो थी मुझको आ रही।
उसकी महिमा क्या कहूँ मुझ से कही न जा रही।।
हाथ में इकतारा लेकर तान फिर से छेड़ दो।
भजन की मस्ती अनूठी ऐ सूरदास बिखेर दो।।
सुन के बालक के वचन मीठे सरस अमृत भरे।
हो के उन पे मुग्ध फिर से राग वे गाने लगे।।
भजन को गाया दोबारा मन में कुछ हैरान हो।
सूर जी बालक की मीठी वाणी पर कुर्बान हो।।
सूरदास से हो मुखातिब भगवान ने फिर यूँ कहा।
तेरे तो इन शब्दों में है कोई जादू भरा।।
इसलिये फिर से सुना दो मुझ पे तुम मेहरबान हो।
कोमल वाणी सुन हृदय में सोचे वह हैरान हो।।
हो न हो मेरे प्रभु मालूम पड़ते हैं यही।
बार बार इसरार करते तान सुनने को यही।।
हृदय की आँखों से जब देखा श्री भगवान को।
झपट कर काबू किया हाथों में करुणानिधान को।।
पूछा फिर श्री प्रभु से क्या तुम्हारा नाम है।
कैसे आये हो यहाँ और कहां तुम्हारा ग्राम है।।
बार बार क्यों कर रहे हो गाना गाने पर मज़बूर।
सच बताओ कौन हो, आये कहां से हो हुज़ूर।।

मैं हूँ ग्वाल बाल गउएँ चराता हूँ यहाँ।
गाँव गोकुल है मेरा हर रोज़ आता हूँ यहाँ।।
तान मीठी सुन के तेरी मैं यहाँ पर आ गया।
तेरा मीठा गीत सुन कर जी मेरा ललचा गया।।
गीत जो गाया है तुमने उसमें अमृत है भरा।
बार बार सुनने को उसके जी मेरा उत्सुक हुआ।।
इसलिये इक बार फिर से तान मीठी छेड़ दो।
जी मेरा ललचा रहा है कहता हूँ मज़बूर हो।।
आप का यह गीत जब कानों में मेरे गूँजता।
मन मेरा बेखुद है होता और कुछ न सूझता।।
वन में गउएँ चर रही हैं पर जी वहां लगता नहीं।
फिर से जो गाओगे बाबा कुछ तो खर्च होगा नहीं।।
सूरदास जी अब हृदय से सचमुच ही पहचान गये।
ये तो लगते हैं मेरे नटखट सलौने साँवरे।।
वाणी है इनकी मधुर दिलकश लुभानी रस भरी।
करती है मन को आकर्षित है कोई जादू भरी।।
ज़ोर से भींच कर फिर सूरदास कहने लगे।
अब न छूटोगे प्रभु हाथ मेरे हो लगे।।
थाम कर कर-कमलों को जब खूब पकड़ा सूर ने।
मन ही मन मुस्काये प्रभु और लगे विसूरने।।
हाय बाँह मेरी तोड़ दी अब तो भैय्या छोड़ दो।
मैं कहाँ हूँ कृष्ण तेरा, बाँह न मेरी तोड़ दो।।
मैं तो हूँ ग्वाल बाल गउएँ चराने आया यहाँ।
रोती होंगी गउएँ मेरी मुझको जाने दो वहाँ।।
निकल जायेंगी बेचारी खोज में मेरी कहीं।

दूर जायेंगी निकल फिर हाथ आएंगी नहीं।।
समय भी संध्या का हुआ फिर बछड़े भी नादान हैं।
जाने दो बाबा मुझे क्यों करते मुझे परेशान हैं।।
सूरदास जी कह उठे बस बस कहाँ अब जाओगे।
मेरे हाथों से नाथ अब छूट नहीं तुम पाओगे।।
समझ नेत्रहीन तुम मुझसे छुपाते खुद को नाथ।
ढूँढता फिरता था तुमको मुद्दतों से दीनानाथ।।
तुम सलौने साँवर नटखट मेरे तन-प्राण हो।
अब छुड़ा कर खुद को तुम जाते कहाँ भगवान हो।।
खूब बनी अच्छी कि तुम लग गये हो मेरे हाथ।
अब नहीं छोड़ेगा हाथ आपका यह सूरदास।।
आँखों से अन्धा हूँ बेशक पर दिल से तो अन्धा नहीं।
लोग तो कहते हैं अन्धा तेरे लिये अन्धा नहीं।।
खैर अब तो आ गये हो मेरे काबू में हुज़ूर।
अब तो रखूँगा मैं अपने पास में तुमको ज़रूर।।
फिर से पकड़ा कर-कमल ओर मोहन से यूँ कहने लगा।
अब न जाना अब न जाना है यह मेरी इल्तिज़ा।।
सूरदास न छोड़ेगा अब यह दामन आप का।
अब बहाना कोई भी नहीं चलेगा आप का।।
फिर कहा भगवान ने कि हाथ मेरा छोड़ दो।
मत सुनाओ भजन लेकिन हाथ तो मत तोड़ दो।।
दे के झटका श्री प्रभु ने कर कमल छुड़वा लिया।
हक्का बक्का रह गया और ज़ार ज़ार रोने लगा।।
रो-रो कर रूँध गया उसका गला फिर यूं कहा।
वाह, मेरे भगवान तुमने खूब ही अच्छा किया।।

क्या हुआ गर हाथ छूटा दिल से छूटोगे नहीं।
जा रहे हो छूट कर पर दिल से जाओगे नहीं।।
बाँह छुड़ा के जात हो निर्बल जान के मोहे।
हिरदै से जब जाओ तो मर्द बखानूँ तोहे।।
तब तुम्हें समझूंगा स्वामी तुम बड़े होशियार हो।
दिल से मेरे जा सको जिसमें तुम गिरफ्तार हो।।
दिल से जा कर दिखाओ जानूँगा तुमको जवान।
तन-वदन में रम रहे हो प्राणों में बन करके प्राण।।
गज़ब की मिसाल है दुनियाँ में सच्ची प्रीत की।
वश में करती है खुदा को तासीर है यह प्रीत की।।
प्रेम सच्चा है भुला देता सकल संसार को।
प्रेम से पा लेता प्रेमी अपनी सच्ची सरकार को।।
दास तू भी ऐसे ही अपने प्रभु से प्रीत कर।
छोड़ दुनियाँ की हवस सतगुरु को सच्चा मीत कर।।

तृष्णा

तृष्णा इक ऐसी डायन है, कभी पेट न भरता है जिसका।
इसके वश जो भी हो जाता, दुःखी और अशान्त सदा रहता।।
दस हों तो सौ की चाह उसे, फिर चाह कि अब तो हज़ार मिले।
पर तृप्त न होता मानुष वो, धन का चाहे अंबार मिले।।
यदि अरब खरब भी मिल जायें,तो भी न आये करार उसे।
सदा और और करता रहता, धन और सदा दरकार उसे।।
होता वशीभूत जो तृष्णा के, खो देता अपनी बुद्धि वो।
इसलिए ही सन्त चिताते सदा, ऐ मानव तृष्णा को छोड़ो।।
ऐसे ही एक तृष्णालु की, लो ध्यान से अब तुम कथा सुनो।
इससे फिर शिक्षा ग्रहण करो, और शीघ्र ही तज दो तृष्णा को।।
इक योगी भ्रमण करते करते, जा पहुँचा निकट इक बस्ती के।
थी उसको बहुत ही प्यास लगी, वो गया निकट इक झोंपड़ी के।।
योगी ने अन्दर जो झाँका, देखा इक व्यक्ति बैठा है।
योगी ने देख के समझ लिया, कोई निर्धन लकड़हारा है।।
आवाज़ दी योगी ने उसको, हे भद्र पुरुष ज़रा बात सुनो।
थोड़ा सा पानी पिला दो मुझे, है बहुत ही प्यास लगी मुझको।।
सुन कर आवाज़ उस व्यक्ति ने, जब दृष्टि उठा बाहर देखा।
योगी को देख के झट उसने, चरणों में उसके प्रणाम किया।।
फिर अन्दर ला कर आदर से, आसन पर उसको बिठलाया।
रुखा सूखा जो घर में था, योगी के आगे ले आया।।
योगी ने थोड़ा सा खा कर, फिर प्यास बुझाई पानी से।
सम्बोधित कर उस व्यक्ति को, तब बोला मीठी वाणी से।।
हम बहुत बहुत हैं खुश तुम पर, जो इच्छा हो सो माँग लो तुम।
हम सिद्धि शक्ति के स्वामी हैं, जो माँगोगे सो देंगे हम।।

वो व्यक्ति बहुत ही हर्षाया, सुन कर बात यह योगी की।
निर्धन हूँ धन दीजै जिस से, ज़िन्दगी आराम से कटे मेरी।।
दीं चार मोमबत्तियाँ उस को, कुछ सोच के तब उस योगी ने।
फिर कहने लगा कि ध्यान से सुन, क्या करना है इस बत्तियों से।।
जो बात तुझे बतलाता हूँ, उस बात को ध्यान से सुन ले तू।
है गूढ़ रहस्य भरा इन में, उस रहस्य को खूब समझ ले तू।।
इक रात जला कर इक बत्ती, पूरब को जाना बताया यह।
बुझ जाये बत्ती जहाँ पर वो, वहाँ खोदना फिर समझाया यह।।
धन मिले वहां से जो प्यारे, सन्तोष से ज़िन्दगी बिताना तुम।
नहीं फँसना फँदे में तृष्णा के, इस वचन को हृदय बसाना तुम।।
दिल न माने फिर भी तेरा, तुम लेना चला अन्य बत्तियाँ दो।
पश्चिम को जाना एक रात, और दूजी रात तुम उत्तर को।।
तीन बत्ती तुम को काफी हैं, चौथी को भूल ही जाना तुम।
सुनो वचन हमारे कान खोल, बत्ती न चौथी जलाना तुम।।
चौथी बत्ती को जला करके, दक्षिण को हरगिज़ जाना ना।
यदि तोड़ा वचन हमारा यह, फिर रोना और पछताना ना।।
योगी तो अपनी राह गया, यूँ भली भाँति समझा करके।
वो व्यक्ति हुआ प्रसन्न बहुत, चारों मोमबत्तियाँ पा करके।।
जब रात हुई इक मोमबत्ती, जलाई तब उस व्यक्ति ने।
चल पड़ा व्यक्ति वो पूरब को, बुझ गई बत्ती कुछ चल करके।।
धरती को खोदा जब उसने, तो रुपयों का वहाँ ढेर पाया।
उस ढेर को देख के मन ही मन, वो व्यक्ति बहुत ही हर्षाया।।
फिर रुपये बहुत से चादर में, भर कर गठरी को बाँध लिया।
बाकी को दबा कर मिट्टी से, चुपके से घर की ओर बढ़ा।।
अपनी झोंपड़ी के कोने में, फिर उसने इक गड्ढा खोदा।

रुपयों को उसमें रख करके, उसको मिट्टी से बन्द किया।।
फिर बिस्तर पर जा लेटा वो, आँखों में नींद कहाँ थी मगर।
तृष्णा डायन ने जमाया था, आसन उस व्यक्ति के दिल पर।।
आ गई रात जब दूजी तो, दूजी बत्ती उसने जलाई फिर।
पश्चिम की ओर चला वो तब, निज हाथ में बत्ती को लेकर।।
कुछ दूर ही गया था वो चलकर, तब बुझी मोमबत्ती वो भी।
खोदा जब धरती को उसने, वहाँ खान मिली उसे चांदी की।।
तब गठरी बाँध के चाँदी से, मिट्टी से बन्द किया गड्ढा।
उस जगह निशान लगा करके, घर को उसने प्रस्थान किया।।
झोंपड़ी के दूजे कौने में झटपट उसने गड्ढा खोदा।
चाँदी को दबा करके उसमें, बिस्तर पर अपने जा लेटा।।
पर नींद कहाँ थी आँखों में, आँखों में धन था घूम रहा।
सन्तोष का अब उसके दिल में, कहीं नामो-निशान बचा न था।।
तृष्णा ने उसके दिल पर अब, पूरा प्रभुत्व जमाया था।
सब चैनो-करार छीन उसका, उसको बेचैन बनाया था।।
वो करने लगा बेचैनी से, अब तीजी रात का इन्तज़ार।
मिलता है क्या अब उत्तर में, यह देखने को था बेकरार।।
फिर तीजी रात ज्यों आई तो, तीजी बत्ती को जला करके।
उत्तर दिशा कि ओर उसने, फिर कदम बढ़ाया जल्दी से।।
कुछ दूर गया था चल करके, बुझ गई तीसरी बत्ती भी।
खोदा जब गड्ढा धरती में, उस को सोने की खान मिली।।
तब गठरी बाँध के सोने की, घर को चला जल्दी से वो।
झोंपड़ी के तीसरे कौने में, फिर उसने दबाया सोने को।
इतना धन पाकर भी उसके, मन को सन्तोष न आया है।
तृष्णा ने उसको तिगनी का, देखो कैसा नाच नचाया है।।

तृष्णा ने बुद्धि हरी उसकी, योगी की चेतावनी भूल गया।
अब लगा सोचने मन में वो, कल चौथी बत्ती जलाऊँगा।।
लगता है दक्षिण दिशा कि ओर, भण्डार है हीरे मोती का।
वो खज़ाना अपने वास्ते ही, योगी ने छिपा रखा होगा।।
इसलिए ही मना किया उसने, हरगिज़ न जाना दक्षिण को।
योगी मनमें सोचा होगा, मैं ले न आऊँ खज़ाना वो।।
योगी ने चाहे मना किया, उस ओर अवश्य ही जाऊँगा।
जैसे ही रात होगी कल को, चौथी बत्ती जलाऊँगा।।
तृष्णा पिशाचिनी ने देखो, बुद्धि किस तरह हरी उस की।
किस तरह से तृष्णा डायन ने, पढ़ाई उसको उलटी पट्टी।।
यह बात वो बिल्कुल भूल गया, हीरे मोती का खज़ाना अगर।
योगी ने रखना था अपने लिए, मोमबत्ती देता वो क्यों फिर।।
जब चौथी रात हुई तब वो, चौथी बत्ती को जला करके।
दक्षिण दिशा की ओर चला, जल्दी से कदम बढ़ा करके।।
मोमबत्ती चौथी बुझी जब ते, धरती को लगा खोदने वो।
कुछ खोदने पर इक दरवाज़ा तब आया नज़र उस व्यक्ति को।।
उस द्वार को देख के वो व्यक्ति, हर्षाया बहुत मन ही मन में।
फिर कहने लगा कि कितना सही, अनुमान लगाया था मैंने।।
होंगे अवश्य हीरे मोती, इस अन्धेरी कोठरी के अन्दर।
सब से धनवान मैं दुनियाँ में, बन जाऊँगा इन को पाकर।।
माचिस निकाल के पाकेट से , तब उसने जलाई इक तीली।
देखा फिर अच्छी तरह द्वार, उस पे थी कुँडी चढ़ी हुई।।
वो कुँडी खोल के जैसे ही, उस कोठरी में प्रविष्ट हुआ।
झट बाहर निकल इक व्यक्ति ने, वो द्वार बाहर से बन्द किया।।
क्या करते हो यह, कौन हो तुम, क्यों द्वार है तुमने बन्द किया।

मत बन्द करो मुझको अन्दर, वो ज़ोरों से चिल्लाने लगा।।
तब बोला व्यक्ति वो बाहर से, मैं भी तृष्णा का मारा था।
तृष्णा डायन के वस में हो, उसकी था कैद में आन फँसा।।
तुमने आ करके यहाँ आज, जैसे आज़ाद किया मुझको।
वेसे ही अन्य कोई तृष्णालु, आ करके छुड़ायेगा तुम को।।
तब तक तुम इसी कोठरी में, बस भूखे प्यासे पड़े रहो।
प्रतीक्षा करो तृष्णालु की, किस्मत पर अपनी रोते रहो।।
सुन करके उस व्यक्ति की बात, तब बहुत ही मन में पछताया।
माना न वचन उस योगी का, जिस का यह फल मैंने पाया।।
वो रोने लगा तब ज़ार ज़ार, पर रोने से क्या होता है।
जब चिड़ियों ने चुग खेत लिया, फिर पछतावा ही रहता है।।
तृष्णालु सदा दुःखी रहता, सुख चैन कभी न वो पाये।
मिल जाये धन त्रिलोकी का, तो भी न वो हरगिज़ तृप्ताये।।
जीवन दुःख में बीते उसका, परलोक में भी वो दुःख पाये।
ऐसी दुर्गति होती उसकी, तृष्णा के वश जो हो जाये।।
इस वास्ते ही सतपुरुष सदा, मानुष को चिताते रहते हैं।
तृष्णा डायन से बचने का, उपदेश सदा ही देते हैं।।
फरमाते हैं प्रभु नाम बिना, तृष्णा से मुक्ति न मिलती है।
हरगिज सन्तोष नहीं आता, न होती हरगिज़ तृप्ति है।।
इसलिये मान सन्तों के बचन, कर दासा स्वांस स्वांस सुमिरण।
परलोक भी सुखमय बन जाये, सुख से बीते यह तेरा जीवन।।

(2)

इक मगध देश में था राज इकबाल था जिसका बहुत ऊँचा।।
टिड्डी दल की तरह था लशकर, नक्षत्रों से भी गिनती बढ़कर।।
हाथी घोड़े थे बेशुमार उसके, और रथ भी लाखों से न कम थे।।
सब सूरमा थे उसके अफसर सेना के सिपाही भी बहादुर।।
धनवान राजा के दर्बारी, और कुशल राज्य कर्मचारी।।
चाणक्य से वज़ीर उसके, कूबेर जैसे अमीर उसके।।
प्रजा जितनी थी सारी खुशहाल, था देश में बहुत ही धन माल।।
व्योपारियों की होती चाँदी थी, और हुनरवालों की कदरदानी थी।।
जो कारीगर थे तो खूब थे राज़ी, मज़दूर थे तो खुश थे वे सभी।।
सोना चाँदी उगलती थी भूमि, खेती वालों को कुछ थी नहीं कमी।।
आबाद नगर नगरियाँ थीं. खुशहाल सारी बस्तियाँ थी।।
बच्चा हो या जवान बूढ़ा, हर शख्स अपने चैन में था।।
रहता राजा का पुर खज़ाना था, न दौलत का कुछ ठिकाना था।।
मोतियों से जड़े महल उसके थे, एक से एक बढ़ के बीसों थे।।
गढ़ भी उसने कई बनाये थे, नक्शकारी से जो सजाये थे।।
महल में चहल पहल रौनक थी रानियाँ कितनी बाँदियाँ कितनी थी।।
रूप जोवन में सब अनोखी थी, एक से एक बढ़के चोखी थीं।।
सबसे औलाद भी हुई उसकी, फूलता फलता कुनबा था शाही।।
ऐश के हर तरह के सामाँ थे, बाग बढ़िया शिकार और जलसे।।
नाच और राग रंग होता था, वकत आराम से गुज़रता था।।
धूमधाम और नक्कारे बजते थे, सारी प्रजा में खूब चर्चे थे।।
थाअगरचे न कुछभी फिकर वहाँ,चल पड़ा एकदिन यह ज़िक्रवहाँ।।
अर्ज़ दरबार में किसी ने की, रहे इज़्ज़त हुज़ूर की बढ़ती।।
इकबाल हुज़ूर का सदा ही रहे, रात दिन यह बढ़ा चढ़ा ही रहे।।

कुदरत ने दे दिया है सब कुछ, कोई कमी नहीं है अब कुछ।
भारत के राजा झुके हैं, महाराज सब के आप ही हैं।।
सिक्का सब देश में है ज़ारी, कब्ज़े में है यह भूमि सारी।।
जितना बड़ा कि राज्य आपका है, किसी और का नहीं हुआ है।।
इस राज्य को बढ़ाईयेगा, कुछ और नाम पाईयेगा।।
नेपाल का पहाड़ी राजा कब्ज़े में आज तक न आया।।
उसपर चढ़ाई आप कीजै, राजा से देश छीन लीजै।।
वह देश है कठिन पहाड़ी, हिम्मत नहीं पड़ी किसी की।।
झण्डा हुज़ूर का गड़ेगा, दुनियाँ में नाम भी बढ़ेगा।।
फिर यह भी आप जानते हैं, होती पहाड़ में है कानें।।
हीरे मोती जवाहर होंगे, सोना चाँदी भी बेशतर होंगे।।
जितना भी युद्ध में खर्च होगा, पायेंगे हज़ार गुना उसका।।
अपना लशकर भी है बहुत भारी, खर्च को भी नहीं कमी कोई।।
मन्ज़ूर अर्ज़ इतनी कीजै, और हुकुम जंग का भी दीजै।।
राजा को पसंद बात आई, अच्छी सलाह थी, दिल को भाई।
सोचा के है अपना नाम इसमें, और नाम के साथ काम इसमें।।
जल्दी ही जंग का दिया हुकुम, हर बात सोचकर किया हुकुम।।
तैय्यार होके फौज़ शाही, हुई लड़ने को जंग के राही।।
हाथी घोड़े सवार प्यादे, तोपें, कि तोड़ दें इरादे।।
मन्ज़िल पड़ाव फौज करती, आगे ही आगे बढ़ती जाती।।
दरिया के बहाव की तरह से, यह फौज भला जहां से गुज़रे।।
रहना क्या उस जगह है बाकी, गाँव के गाँव दम में खाली।।
भागे बेचारे सब पहाड़ी, समझे कि आ गये हैं धाड़ी।
कब उन गरीबों ने हैं देखे, फौजों के इस तरह के हल्ले।।
गिरते पड़ते व रोते धोते हुये, अपने राजा के पास जा पहुँचे।।

छोटे छोटे थे कन्धों पर बच्चे, पाँव में सबके पड़े छाले।।
सामान के टोकरे कमर पर, और दाग गम के थे ज़िगर पर।।
भूख से बिलबिलाते थे सारे, वे मुसीबत के मारे बेचारे।।
दी राजा के आगे जा दुहाई, हम पर बला हुज़ूर आई।।
देखी नहीं आँखों से जो आफत, कानों से सुनी न जो मुसीबत।।
वह हम पे आज आ पड़ी है, बिजली सी हम पे आ गिरी है।।
है बाज़ुओं में आपके बल, यह दूर कीजै अपनी मुश्किल।।
राजा ने फौज की इकट्ठी, दुश्मन के मुकाबले में भेजी।।
बेचारे पहाड़ियों से लेकिन, महाराज से लड़ना था ना मुमकिन।।
जितने हुये पहाड़ी यकजा, वह फौज थी हज़ार गुना।।
जंग ऐसी कहाँ लड़ी थी तोपों की गरज कहाँ सुनी थी।।
मारा मारी से तोप गोलों के, बहुत से ही पहाड़ी गिरके मरे।।
जो बचे, शहर की तरफ भागे, एक से एक जाता था आगे।।
देखा कि कठिन मुकाबला है, इसमें न कुछ भी फायदा है।।
इक कमेटी नगर के बूढ़ों की, राजा ने जल्दी ही बुला भेजी।।
बातचीत उनसे राजा ने यों की, हमपे आई है यह बला कैसी।।
ये ज़बरदस्त हम हैं कमज़ोर, साथ इनके तोपें खूब घनघोर।।
ये पल में, हज़ार को उड़ा दें, हम इनसे मुकाबला भी क्या लें।।
अब इसमें सलाह जो होवे सबकी,की जावे वह बात हो जो ढब की।।
जिस तरह हो इस बला को टालो, दुश्मन को घर से अब निकालो।।
यह सुनके उठा एक बूढ़ा, जो सब में था चतुर सयाना।।
थे बाल सब सफेद उसके, और तज़ुरबा में सब से बढ़के।।
भारत की यात्रा भी की थी, और जानता था भाषा हिन्दी।।
देखा था मगध देश उसने, और लोग भी वहाँ के देखे।।
खुशहाली वाँ की जानता था, रमज़ उनकी खूब भाँपता था।।

बोला है मेरे पास जादू, हर चीज़ जिससे आवे काबू।।
है मुझको यह उम्मीद काफी, बरकत से इसकी हो भलाई।।
इससे बला टलेगी राजा है मुझको ऐसी पूरी आशा।।
कुछ भेंट के लिये जो पाऊँ, राजा के पास लेके जाऊँ।।
फिर खतरा कुछ नहीं रहेगा, बिगड़ा हुआ काम भी बनेगा।।
राजा ने दिया, जो उसने माँगा, सामान कर दिया इकट्ठा।।
वह भेंट की सामग्री लेकर बूढ़ा दरबार से चला बाहर।।
मगध के राजा का जो था खैमा, उस तरफ को वह हौले हौले चला।।
महाराज को मिली खबर जब, आता है दूत लेके मतलब।।
दरबार में बूढ़े को बुलाया, आदर सहित उसे बिठाया।।
बूढ़े ने तुहफे आगे रखे, लेकिन वे अज़ीब तौर के थे।।
रीछ हिरणों की कुछ तो थीं खालें, पशम की मोटी मोटी कुछ शालें।
भेड़ की ऊन से बुनी थीं कुछ, सादा थीं कुछ, रंगीन भी थीं कुछ।।
लाया था कुछ पहाड़ी मेवे, अखरोट चीलगोज़े और पिसते।।
काठ के बर्तन हाँडियाँ भी थोटी सी थी पहाड़ की बूटी।।
जो शै भी उसने पेशकश की, उससे थी मुफलिसी बरसता।।
फिर हाथ बाँधकर यह की अर्ज़, महाराज है यह मेरा फर्ज़।।
जो बात है सच ही सच बताऊं, ताकि न शर्मसार जाऊँ।।
हम लोग गरीब हैं पहाड़ी, होता नहीं अनाज तक भी।।
मोटा है पहनना, मोटा खाना इसके सिवा नहीं ठिकाना।।
तकलीफ आपने उठाई, इस देशपर जो की चढ़ाई।।
बर्फों से ढकीं ये चोटियाँ हैं जिनमें न रसते के निशाँ हैं।।
पत्थरों के बगैर कुछ नहीं है अलबत्ता बूटियों का वन है।।
जो चाहें लें हुज़ूर का है मगर इस मुल्क में धरा ही क्या है।।
बरबादी न कीजै बेकसों की, बस अर्ज़ है यह बेबसों की।।

कर सकते नहीं बराबरी हैं, हम सब की गर्दने झुकी हैं।।
मर्ज़ी हुज़ूर की हो, कीजै, और जैसा हुकुम हम को दीजै।।
महाराज को सुनके तरस आया, सोचा कि ठीक कह सुनाया।।
फरमाया बात है यह माकूल, हमको है अर्ज़ तेरी मकबूल।।
बतलायेंगे फिर सुलह की शर्तें, पहले तुम्हें हम भी कुछ दिखा दें।।
कहना राजा सेअपने जाकर तुम,लाये महाराज से भी तुहफे हम।।
यह कहके ज़रा किया इशारा, खैमा तुहफों से पुर ही था सारा।।
सामान नफीस कीमती थे, कारीगरों ने जो थे बनाये।।
बर्तन थे और ज़ेवर थे, जो चमक में हर एक बढ़कर थे।।
उनकी जगमग सेआँखें चुँधियाती,होश हाथों से निकली थी जाती।।
बोले महाराज,इनको ले जाओ,राजा को मेरी तरफ से पहुँचाओ।।
बूढ़े ने गर्दन फिर झुकाई, यह सोच के बात अब बनाई।
बोला ऐ मगध के महाराज, तेरा बढ़ता रहे हमेशा राज।।
ये जितने तुहफे कीमती हैं, सब आपके शान के सही है।।
इतना भी नहीं हमें सलीका, किस काम आती हैं ये चीज़ें क्या क्या।।
इनको पासअपने रहने ही दीजै,हमको बख्शिश कुछ और ही कीजै।।
बोले महाराज, माँगता है क्या, बूढ़ा बोला, कि थोड़ा सा सोना।।
सोना इस मुल्क में नहीं है, खाहिश है यही, जहाँ कहीं है।।
जिसपे खलकत फिदा हुई सारी, होती जिस पे लड़ाईयाँ भारी।।
हम भी देखें कि चीज़ वह क्या है, अच्छी है कि कोई बुरी बला है।।
दरगाह से मिले जो मुझको दिखलाऊँगा शहर जाके सबको।।
यह सुन के राजा मुस्कराया, इस बात ने सब को ही हँसाया।।
बोला महाराज, ज़ेवर और सिक्के, सोने के जितने चाहे तू ले ले।।
बूढ़ा बोला कि बस हो थोड़ा सा, हमको दरकार है नहीं इतना।।
बाट देता हूँ एक यह लीजै, तोलकर इससे सोना दे दीजै।।

हाथ अपना जो जेब में डाला, इक डिब्बा बुड्ढे ने निकाला।।
जब उसकी तह को उसने खोला, निकला हड्डी का एक टुकड़ा सा।।
जाँचा हाथों से उसको राजा ने, होगा बस कोई पाँच छः मासे।।
बोले हँसकर कि लाइये काँटा, तोलकर इससे दीजिए सोना।।
उँगली से अँगूठी इक निकाली, पलड़े में अपने हाथों डाली।।
ऊँची लेकिन रही वह अँगूठी, और हड्डी का पलड़ा था भारी।।
दूसरी भी अँगूठी इक डाली, तब भी हड्डी की तरफ भारी थी।।
मुहरें सोने की और डलवाईं, लेकिन हल्की थीं हड्डी के ताईं।।
बोले महाराज इसमें जादू है, लाओ कोई बड़ी तराज़ू है।।
तोड़े(थैले) लाये गये अशर्फी के, सबके सब हड्डी से पड़े हल्के।।
ज़ेवरों के कई भरे डिब्बे, पलड़ा हड्डी का पर हिला न सके।।
भारी भारी थे सोने के बर्तन, वे मँगाये गये वहाँ फौरन।।
लेकिन हड्डी का जो झुका पलड़ा, वह वहीं का वहीं झुका ही रहा।।
ईंटें सोने की और लाई गईं, हड्डी से हल्की फिर भी सब ही रहीं।।
इतना सब वज़न एकदम डाला, भर गया सोने से वह कुल पलड़ा।।
दूसरी तरफ फिर वही हड्डी, छोटी सी सब पे रह गई भारी।।
माज़रा यहअजबअनोखा था,इसमें जादू था,या कि क्या क्या था।।
अजब महाराज की भी हालत थी,था वह हैरानऔर शर्मिन्दा भी।।
पूछा बूढ़े से भेद है यह क्या, मुसकरा कर वह बूढ़ा यों बोला।।
पूरी उतरेगी और न यह उतरी, हड्डी है एक लालची सर की।।
ऐसे ऐसे हज़ार टुकड़े हैं, और भी लोभ की खोपड़ी में।।
इकबाल हुज़ूर का सदा ही रहे, रात दिन यह बढ़ाचढ़ा ही रहे।।
कुदरत ने दे रखा है सब कुछ, कोई कमी नहीं है अब कुछ।
भारत के राजा सब झुके हैं, महाराज सब के आप ही हैं।।
सिक्का सब देश में है जारी, कब्ज़े में है यह भूमि सारी।।

जितना बड़ा कि राज्य आपका है, किसी और का नहीं हुआ है।।
इस पर भी तृष्णा है यह भारी, ले लूँ दुनियां की दौलतें सारी।।
थोड़ी हैं आदमी की हाज़ात, गर सबर करे तो कुछ नहीं बात।।
लेकिन नहीं इन्तेहा हवस की, यह चीज़ नहीं आदमी के बस की।।
यह आदमी की खोपड़ी है भूखी, न भर सकी, न यह भरेगी।।
है शोर और और इसका, दोज़ख की तरह नहीं यह थमता।।
बूढ़ा हुआ यह कहके चुपका, सुनके महाराज को लगा धक्का।।
खुल गईं आँखें होश में आया, बात बूढ़े की ध्यान में लाया।।
समझा दुनियाँ यह सब ही झूठी है,दौलत दो दिन की चादनी सी है।।
आखिर सब छोड़ना पड़ेगा, सबसे मुँह मोड़ना पड़ेगा।।
जबकि कुछ भी न साथ जायेगा,पहले ही से जो छोड़ूं तो अच्छा।।
यह कहके सुनी न एक की भी, राज दौलत पे लात दे मारी।।
चला दरबार से तपोवन में, मस्त होकर वह अपनी ही धुन में।।
दुनियाँ से ख्याल को हटा बैठा, भजन बन्दगी में दिल लगा बैठा।।
तुझको वाज़िब है दास ऐसी ही, छोड़ दुनियां का लोभ पा शान्ति।।

(3)

मृगतृष्णा

मरुस्थल में यात्री इक जा रहा, गर्मी का मौसम महीना जेठ का।
बस अकेला, ऊँट पर था वह सवार, रेत के मैदान को करता था पार।।
रात को आराम से सोया न था, नींद आधी से ही उठकर चल दिया।।
मरुस्थल में जबसे है वह चल रहा, रेत थी, इसके सिवा कुछ भी न था।
रेत का भारी समुन्दर हर तरफ, रेत के टीले थे अकसर हर तरफ।।
आगे पीछे सामने और दायें बायें, रेत ही उड़ती थी बस और क्या कहें।।
रेत की ऊँची पहाड़ी हैं कहीं, और कहीं है रेतली चटियल ज़मीं।।
आँधियाँ उठती हैं और तूफान हैं, गर्द उड़ने के ही ज़ाहिर निशान हैं।।
उड़ती है गर्द अकसर इस कदर, आँख को कुछ भी नहीं आता नज़र।।
रेत के टीले अचानक उड़ते हैं, और कहीं ये दूर ही जा पड़ते हैं।।
ज़ोर की चलती है कुछ ऐसी हवा, शोर कानों से नहीं जाता सहा।।
रेत में मुँह को गड़ा देता है ऊँट, अपनी थुथनी को छुपा लेता है ऊँट।।
मुँह पे चादर ढाँप लेता है सवार, रेत के तूफान से होता है खुआर।।
बचने की उम्मींद तूफाँ में नहीं, जीने का रखे कोई कैसे यकीं।।
यात्री होता परेशाँ तंग हाल, उठता है यह दिल में उसके इक ख्याल।।
मैं अकेला रेत के जंगल में हूँ, किस तरह अब सफर अपना तय करुँ।।
पंछी भी इस जा नज़र आता नहीं, आदमी का तो पता कोसों नहीं।।
मैं थका हूँ और थकी है ऊँटनी, और मन्ज़िल अपनी कितनी दूर अभी।।
रासते का भी ठिकाना कुछ नहीं, ठीक रसते पे हूँ या भटका कहीं।।
गर्मी के मारे वह है घबरा रहा, प्यास से है दम लबों पर आ रहा।।
होंठ सुखे और ज़ुबाँ सुखी हुई, ऊँटनी की भी यही हालत हुई।।
धूप इतनी तेज़, मालिक की पनाह, लेने को दम भी नहीं कोई जगह।।
किरने, सूरज की जलाती हैं हड्डियाँ, जाये तो जाये बेचारा अब कहाँ।।

छाँव मिलती है न पानी का पता, जिससे कुछ आराम भी मिलता ज़रा।।
इस तरह से जब परेशाँ वह हुआ, धूप और प्यास से मरने लगा।।
सामने उसको नज़रआया यह क्या,देखते ही जिसको दिल ही खिल गया देखा
क्या है कि मन्ज़िल सामने, आ रही बिल्कुल नज़र, बस पास है।।
और पानी से भरी इक झील है, है बहुत नज़दीक आधा मील है।।
पेड़ हैं जिसके किनारों पर खड़े, पानी में साया भी जिनका पड़ता है।।
नज़र कुछकुछ आते हैं गर और मकाँ,मिल रहा हैबसनेवालों का निशाँ।।
ऊँट भी कुछ है किनारे पर खड़े, आस हरियाली मज़े से चर रहे।।
घोड़ों को पानी पिलाता है कोई, और घड़े भरकर है ले जाता कोई।।
देखकर नज़्ज़ारा ऐसा खुशनुमा, हौसला दिल में मुसाफिर के हुआ।।
सोचा, दम भर में पहुँचता हूँ वहाँ ये खज़ूरें नज़र आती हैं जहाँ।।
ऊँट को देता दिलासाअब तो चल,अबतो सारी ही मुसीबत गई है टल।।
धूप का और रेत का दुःख अब कहाँ देख तो पानी नज़र आया वहाँ।।
कदम अब जल्दी जल्दी से बढ़ा, है बहुत नज़दीक दूर अब क्या रहा।।
पानी तुझको भी वहाँ पिलवाऊँगा, घास भी ताज़ा तुझे खिलवाऊँगा।।
मैं भी कुछ आराम पाऊँगा वहाँ, थोड़ा खाना भी तो खाऊँगा वहाँ।।
बहुत कुछ तकलीफ हमने पाई है, बारी अब आराम की हाँ आई है।।
जब सवार इस तरह खुश होने लगा, ऊँटनी पर भी असर होने लगा।।
कदम उसका खुद बखुद उठने लगा, एक से होता है खुश दिल दूसरा।।
प्यारी प्यारी बातें जब उसकी सुनीं,ऊँटनी के दिल को भी जाकर लगीं।।
वह खुशी से तेज़ होती जा रही, यात्री की उमँग बढ़ती जा रही।।
वह उसे शाबाश देता जा रहा, सवारी का है मज़ा लेता जा रहा।।
लेकिन अब हैरानी उसकी बढ़ चली, तेज़ कब से चल रही है ऊँटनी।।
अब भी है वैसी ही मन्ज़िल सामने, दूर कुछ ना,मानो बिल्कुल पास है।।
फासला कुछ भी नहीं कम हो सका,उतना ही उतना है,जितना पहले था।

ऊँटनी चलती है गरचे तेज़ ही, फासला मन्ज़िल का लेकिन फिर वही।।
अपनी आँखोंको वह मलता है सवार,समझ कुछ आता नहीं, है बेकरार।
नज़र का तो कुछ कसूर इसमें नहीं, दूर को नज़दीक समझा है कहीं।।
आता हैआखिर यही उसको,ख्याल,कियह जो मुझको नज़रआता है हाल।
मैंने अंदाज़ा लगाया था गलत, मैंने पहले ही यह समझा था गलत।।
ऊँटनी की फिर मुहार उठाता है वह, और भी तेज़ी से बढ़ाता है वह।।
नज़र से है फासले को जाँचता, ताकि धोखा हो न जाये दूसरा।।
अब तो उसको होता है पूरा यकीं,कि अन्दाज़ा अब गलत हरगिज़ नहीं।।
इस तरह गर ऊँटनी चलती रही, दम के दम में पहूँचा जाता हूं अभी।।
देती जाती है सहारा आस उसे,नज़र मन्ज़िल आ रही है पास उसे।।
है मुसीबत सफर में गरचे बड़ी, बाद में मिलता है कुछ आराम भी।।
इस तरह खुश खुश लगाये आस वह समझता है आता जाता पास वह।।
ऐसी हालत में भी गुज़री इक घड़ी, अब भी मन्ज़िल सामने वैसी खड़ी।।
है नज़र आती वही पानी की झील,फासला अबभी वही है आध मील।।
फासलाअब भी नहीं कुछ कम हुआ,उतना ही उतना है जितना पहले था।
अजब उसके दिल में, हैरानी हुई, हाय यह कैसी परेशानी हुई।।
चलतेचलते वक्त कितना हो गया,फासला कुछ भी न लेकिन घट सका।।
माज़रा क्या है, समझ आता नहीं, जादू इस धरती में तो कोई नहीं ।
सामने मन्ज़िल नज़र आती भी है, और अपनी पहुँच से भी दूर है।।
इस तरह हैरान होता जा रहा, यात्री बढ़ता ही बढ़ता जा रहा।।
पहुँच जो सकता नहीं वह झील तक, ऊँटनी पर गुस्सा आता है फकत।।
देने लगता है उसे वह गालियाँ, और कभी वह मारता है लकड़ियाँ।।
जानवर को तेज़ चलने के लिये, गाली देना मारना कुछ कम न थे।।
है मगर घन्टों से चूँकि चल रही, इसलिये थक भी चुकी है ऊँटनी।।
कदम उसके तेज़ चलने के लिये, गाली देना, मारना कुछ कम न थे।।

इसतरह यक्दम जो इकठोकर लगी,मुँह केबल ही रेत में वह गिर पड़ी।। मुसाफिर भी गिरा कुछ इस तरह,छत से कोई गिर रहा हो जिस तरह।। रेत में जब इस तरह वह गिर पड़ा, चोट बाज़ू में लगी, घबरा गया।। लेकिन अपनी चोट का नहीं है ख्यालअपनी खातिर वहनहीं होता निढाल। जल्दी उठ बैठा कि उठे जानवर, ताकि बाकी का भी पूरा हो सफर।। लेकिन ऐसी गिर चुकी थी ऊँटनी, गिरके दोबारा नहीं वह उठ सकी।। यात्री के होश उड़ने लगे अब, ऊँटनी की टाँग टूटी देखी जब।। अब करे तो क्या करे, चारा नहीं कुछ भी कर सकता वह बेचारा नहीं।। है अकेला और जंगल बीच है, पास में कोई नहीं हिम्मत जो दे।। अपनी हालत जब मुसाफिर की हुई, सामने जो नज़र उसकी उठ गई।। देखता क्या है कि मन्ज़िल सामने, है वही रौनक वही हर एक शै।। नज़र जाती है वही पानी की झील,फासला भी उसका है बस आध मील।। देख कर दिल में हुई उसके खुशी,उसकी हिम्मत फिर नई बँधने लगी।। चोट अपने बाज़ू की सब भूलकर, और अपनी ऊँटनी की सब फिकर।। सोचा उसने आगे चलना चाहिये, जल्दी मन्ज़िल पर पहुँचना चाहिये।। ऊँटनी को बस वहीं रहने दिया, और उसने रास्ता आगे लिया।। तेज़ तेज़ उसने उठाये यों कदम, कोई करता हो चढ़ाई एक दम।। क्या करे लेकिन कि तपती रेत है, और सिर पर कड़कती सी धूप है।। वहतो हिम्मत से है चलता जा रहा, प्यास से पर दम निकलता जा रहा।। लेकिन आती सामने मन्ज़िल नज़र, वह भी करता जा रहा आगे सफर।। झील की जानिब वह है यों दौड़ता,जैसेअब पहुँचा कि बसअब जा लिया। दौड़ते ही दौड़ते वह गिर पड़ा, गिर के फिर उठा मगर फिर भी गिरा।। इस तरह गिरता पटकता बार बार,और तबीयत हो रही बेकरार। एक दफा ज़ोर की ठोकर लगी, गिर पड़ा ऐसा न फिर उठा कभी।। पढ़ लिया तूने मुसाफिर का यह हाल,तुझसे पढ़ने वाले है मेरा सवाल।

कुछ समझ में आया भी यह माजरा, वह मुसाफर कौन है, है कुछ पता। रेत का मैदान क्या है, यह बता, पानी की उस झील का है भेद क्या।। अपने कानों को ज़रा सुन खोल के, भेद मैं सारा बताऊँ खोल के। है मुसाफर आप इस दुनियाँ में तू, तुझको ही मन्ज़िल की है बस आरज़ू। रेत का मैदान यह दुनियाँ ही है, जिसमें दुख ही दुख भरा हर तरफ है। दुनियाँ के इस रेत के जंगल में हाँ, कर रहा है सफर तू ही बेगुमाँ।। झील जोकि सामने आई नज़र, दुनियाँ की झूठी खुशी है, याद कर। है यह मृगतृष्णा फकत,सच्ची नहीं,दुनियाँ की लज़्ज़तें असली खुशी नहीं।

तू जिसे समझा खुशी की राह है, वह फकत झूठा तमाशा आह है।। मुफत में है इसके पीछे दौड़ता, क्यों नहीं इस धोखे से मुँह मोड़ता।। इसमें सुख पाया, न हरगिज़ पायेगा, उस मुसाफिर की तरह पछतायेगा।। चाहिये तुझको खुशी सच्ची अगर, लिव लगा मालिक से दासा बैठकर।।

भवकूप में प्राणी

संसार के घोर भयानक वन में, जीव- प्राणी है आ निकला।
फिरते फिरते इस जंगल में, जब बीचों बीच इसके पहुँचा।।
क्या देखता है गजराज एक मत माता बड़ा चला आता।
आ जाऊँ न कहीं लपेट में, ऐसा सोच के भय खाकर भागा।।
अन्धा इक कुआँ नज़र आया, इक बेलि किनारे से लटकी।
झट उसे पकड़ कर लटक गया, सोचा आफत से जान बची।।
चाहता था कुएं में कूद पड़े, लेकिन जब नीचे नज़र गई।
फुँकार रहा मुँह खोल हुये, बैठा निचे अजगर भारी।।
दोनों ही तरफ से मौत दबोचने को उसके तैयार खड़ी।
बाहर गजराज की सूरत में, नीचे अजगर बनकर बैठी।।
जाये तो बेचारा किधर जाये, लटके रहना ही गनीमत है।
लेकिन इस तरह लटकने में, आखिर कब तक खैरियत है।।
यकलख्त जो ऊपर आँख उठी, दो चूहे नज़र में आते हैं।
काला है एक दूसरा सफेद, मोटे-ताजो इठलाते हैं।।
जिस बेलि से लटक रहा प्राणी, उसे कुतरते जाते हैं।
उनके दाँतों की किट किट से प्राणी के प्राण घबराते हैं।।
यह रहा सहा भी सहारा, बेलि कटी और तले गिरा।
अब तो मरना निश्चित है, हाय अब गिरा कि अब गिरा।।
इस घोर निराशा में भी मगर, इक बार झलक आई आशा।
इक शहद की बूंद गिरी ऊपर से, मुख में पानी भर आया।।
उस बेलि की जड़ में शहद की मक्खी ने इक छत्ता बनाया था।
बूँदें उसमें से टपकती थीं, जिनको यह प्राणी चूसता था।।
जब शहद की मिली मिठास उसे, इस लज़्ज़त में ही मस्त हुआ।
कुछ ऐसा मगन हुआ, गजराज का अजगर का भय सब भूला।।

तभी वहाँ उस शहद के रस को चखनेवाले ने देखा।
पुरुष एक तेजस्वी सूरत, बाहर उसे पुकार रहा।।
कहता है मीठी वाणी, में, ऐ प्राणी मेरी तरफ आ जा।
बाहर आ जा इस अन्धे कुएं से, मौत से लूँगा तुझे बचा।।
प्राणी बोला, आ जाऊँ मगर जी शहद से अभी भरा ही नहीं।
दो चार बूँद पी पाया हूँ , कुछ ज्यादा अभी चखा ही नहीं।।
कुछ ज़रा ठहर जाओ बाबा मैं. शहद से जब ज़ी भर लूँगा।
सच कहता हूँ बस एक छलाँग में कुयें से बाहर निकलूँगा।।
तेजस्वी पुरुष बोला रे भोले इन से जी नहीं भरने का।
निकलना चाहे तो मान कहा मेरा ला हाथ मुझे पकड़ा।।
पर शहद के रस का मतवाला, कोई बात नहीं सुनता प्राणी।
आखिर चूहों ने बेलि काट दी, काल के मुख में गिरा प्राणी।।
रूपक कहो या दृष्टान्त इसे, यह सत्य यथार्थ जीवन है।
मानुष है जिसमें भटक रहा, संसार रूप महा-वन है।।
यहाँ हिंसक पशु अनेक भरे, पग पग पर दुःख का दर्शन है।
गजराज रुप है महाकाल, जो ताक में पल पल क्षण क्षण है।।
भव-कूप है यह अन्धा कूआँ, जो रस रुप से खाली।
आयू की बेलि है, लटक रहा इन्सान पकड़ उसकी डाली।।
दिन रात है जोकि कहे गये काले सफेद दोनों चूहे।
मानुष की आयु रुपी बेलि कतरने में नित लगे हुये।।
नीचे मृत्यु रुपी अज़गर बैठा है भयानक मुँह फाड़े।
इस आस में कब यह गिरे मानुष और झटपट इसे हड़प करले।।
ऊपर भी काल नीचे भी काल, बचने की राह नहीं कोई।
भव-कूप में पड़कर भी सुख चैन से कभी रहा है कहीं कोई।।
विषयों के भाँति भाँति के रस हैं यही शहद की बूँदे हैं।

पीकर जिनको है मस्त हुआ मानुष, ये अतिप्रिय लगती हैं।।
मन कभी न इनसे तृप्त हुआ, ऐसी ये मीठी लज़्ज़तें हैं।
आसक्ति का हैं मूल यही, इनसान को बाँधे रखती हैं।।
इन मिथ्या भोगों का मतवाला मन फिर फिर भरमाता है।
विषयों के रस से जी भरकर अपना जी भरना चाहता है।।
तेजस्वी पुरुष हैं साधु सन्त जो सदा चिताते रहते हैं।
मत फँस विषयों में ऐ नादाँ नित यही पुकार के कहते हैं।।
सुनते नहीं उनकी बात को जो, विषयों की धार में बहते हैं।
जो मानते हैं सन्तों का वचन पे काल-दण्ड नहीं सहते हैं।।
है यही भाव इस रूपक का सन्तों की शरण सुखदाई है।
भव-कूप पड़े प्राणी का दासा, सतगुरु सन्त सहायी है।।

जीवन सुधार

साधु था नौजवान कोई बीस बरस का।
करता था सदा पान हरिनाम के रस का।।
न दुनियाँ के झंझट थे न थी कोई उपाधि।
लगती थी एक वन में दिन रात समाधि।।
ममता से जग की उसने मुख मोड़ा हुआ था।
सुरति को गुरु के चरणों से जोड़ा हुआ था।।
बारिश बड़े ज़ोर की इक रोज़ जो आई।
झोंके प्रचंड वायु के भी साथ में लाई।।
तूफान ने वन में बड़ा उत्पात मचाया।
उस साधु की छोटी सी कुटिया को बहाया।।
बचने का न जब कोई ठिकाना नज़र आया।
तो साधु ने पग शहर की ओर अपना बढ़ाया।।
इक हाथ में तोते का इक पिंजरा सँभाला।
दूजे में पकड़ी तूँबी और मनकों की माला।।
घनघोर थी वर्षा और घटाटोप अन्धेरा।
इस आफतों ने आज था उस साधु को घेरा।।
पहुँचा वह चलते चलते जब एक मकां पर।
कुछ देख के कुछ सुन के रुका साधु वहाँ पर।।
दरवाज़े के सूराखों से आ रही थी रोशनी।
अन्दर से गुनगुनाने की आवाज़ भी सुनी।।
आवाज़ दी साधु ने कि तुम कौन हो बोलो।
भीषण तूफान में कोई दरवाज़ा तो खोलो।।
सुनते ही लालटेन की बत्ती ले हाथ में।
कोई आई लिये पाज़ेब की झंकार साथ में।।

खुलते ही द्वार साधु ने उसे गौर से देखा।
देवी है यह सम्मान के ही तौर से देखा।।
है रूप वती नूर के सांचे में ढली है।
रानी है किसी राजा की नाजों में पली है।।
साधु ने कहा देवी बड़ा पुण्य है तेरा।
करना है यहाँ सन्तों ने आज रैन बसेरा।।
वर्षा थमते ही जाऊँगा उस वक्त मैं चला।
ऐ देवी धन्यवाद तेरा भला हो भला।।
औरत ने आगन्तुक को बड़े ध्यान से देखा।
यह जानकर साधु है सम्मान से देखा।।
फिर बोली महाराज आइये पधारिये।
घुँघराली जटाओं से पानी को झारिये।।
गीले वदन को पोंछिये वल्कल उतारिये।
और तन पे अपने रेशमी वस्त्रों धारिये।।
वह सामने निवारी पलंग है निहारिये।
उसपर आराम कीजिये न कुछ विचारिये।।
दासी पे अपनी कृपापूर्ण दृष्टि डारिये।
बिगड़ी हुई जन्मों की मेरी किस्मत संवारिये।।
सुनके यह बात साधु ने कुछ मन में विचारा।
फिर हँसते हुये उसने यूँ मुख से उचारा।।
करना था गर आराम तो फिर साधु क्यों बनता।
माया की डगर छोड़ भक्ति पथ पे क्यों चलता।
महलों को छोड़ वन में क्यों डेरा लगाता।
पलंगों की जगह धरती बिछौना क्यों बनाता।।
रेशम की जगह तन पे वल्कल क्यों सजाता।

दिन रात करके साधना क्यों देह सुखाता।।
मैंने तो जगत भोगों का इक ढेर बनाकर।
संसारी कामनाओं को फिर उस पे जमाकर।।
दुनियाँ के सुख आराम की इक चिता बनाई।
वैराग्य की तीली से फिर उसे आग लगाई।।
इस तरह सुख भोगों को दुनियां के जलाकर।
जो भस्म बनी उसको फिर तन पे रमाकर।।
मैने है दूर वन में एक कुटिया बनाई।
प्रभुप्रेम के पुष्पों से है वह कुटिया सजाई।।
करता हूँ रात दिन वहां प्रभु नाम का सुमिरण।
प्रभु याद में ही हरदम रहता हूँ मैं मगन।।
तूफान ने लेकिन है किया आज परेशाँ।
बचने के लिये उससे आया हूँ मैं यहाँ।।
ज्यों ही थमेगी वर्षा जाऊँगा मैं चला।
ऐ मां मेरे इक प्रश्न का उत्तर मगर बता।।
ऐश्वर्य के सामान सभी, कैसे हैं राज़ बचा दे तू।
इस घर में क्यों तू अकेली है, ऐ माता सब समझा दे तू।।
मुझे तेरे सिवा दूजा कोई, इस घर में नज़र न आता है।
सब कहाँ है और कब आयेंगे किस किससे क्या तेरा नाता है।।
सुनकर के प्रश्न यह साधु का आँखों से आँसू गिरने लगे।
गड़ गई ज़मीन में लज्जा से, और व्यथा से ओंठ फरकने लगे।।
बोली महाराज क्या बतलाऊँ, मेरा किससे क्या क्या नाता है।
भाई बहिन और पति नहीं, न कोई पिता न माता है।।
खुशियों में मेरी छिपा रोना, कभी सुख की नींद मैं सोई नहीं।
कहने को सब जग मेरा है, पर वस्तुतः मेरा कोई नहीं।।

तू मेरे दिल की मलिका है, जो आता है यही कहता है।
मदिरा पी करके विषयों की, मेरे रूप पे हर कोई मरता है।।
मैं जानती हूँ वे जितने हैं, सब ही मतलब के बन्दे हैं।
वे विषय-वासना के कीड़े, और मन के सब ही गन्दे हैं।।
उनकी झूठी खुशामदें और, तारीफें सुन सुन हारी हूँ।
ये विषयी जीव हैं मुझपे बोझ,पर मैं पृथ्वी पर भारी हूँ।।
हूँ कर्महीन मैं जन्मों की, और किस्मत की मारी हूँ।
ठुकराई हुई इस दुनियाँ की, मैं पापिनी वेश्या नारी हूँ।।
वेश्या का शब्द जैसे ही सुना, साधु को बहुत रोष आया।
मैं साधु और यह वेश्या है, यह सोच के बहुत जोश आया।।
बोला हट जा तू सामने से, तू तो बहुत चण्डालिनी है।
पापों की तू तो है मूरत, और विष से भरी नागिनी है।।
इस घर में रात बिताने का, मुझ साधु को है पाप भारी।
इतनी सी देर भी रुकने का, मुझ को है पश्तात्ताप भारी।।
हो तुझको मुबारक भोगैश्वर्य, हम साधु तो हैं चलते भले।
महलों में ऐश करो माता, हम साधु तो हैं रमते भले।।
सुन के यह बात औरत बोली, साधु तुम बड़े अनूठे हो।
किस्मत तो मुझ से रूठी है,पर तुम क्यों मुझसे रूठे हो।।
यहाँ जितने लोग अब तक आये, सब ही धन के मतवाले थे।
वे सुन्दरता के लोभी और, मेरे रूप पे मरने वाले थे।।
जतला कर झूठा प्यार हर इक, प्यारी तो कहता रहा मुझको।
पर बिना तुम्हारेआज तलक,नहीं किसीने माता कहा मुझको।।
बड़े प्यार से मुझ जैसी को भी, माता कह के बुलाने वाले।
बेटे तो जग में होते हैं, माता को सँभालने वाले।।
मँझधार में मुझ सी पापिन को, मत छोड़ के ऐसे जाओ तुम।

मेरी डूबती जीवन नैया को, ऐ साधु पार लगाओ तुम।।
माता तेरी तो गुनाहों में, पाँव से सिर तक है डूबी।
गर छोड़ के यूँही चला जाये, तो बेटे में फिर क्या खूबी।।
अज्ञान के घोर अन्धेरे में, अब तक जीवन है नष्ट हुआ।
फँस के पापों की दल दल में, जीवन मेरा है भ्रष्ट हुआ।।
इक कर्महीन नारी हूँ मैं, कृपा से अपनी बचा लो तुम।
अब दे के सहारा दासी को, सतगुरु दल दल से निकालो तुम।।
स्त्री ने अपना दर्द भरा, जब हाल सुनाया साधु को।
यूँ समझो कि उसने अपना, दिल चीर दिखाया साधु को।।
सुनकर उसकी दुःख भरी कथा, साधु को बहुत रहम आया।
कुछदेर सोचके मन ही मन,निजमुख से फिर यह फरमाया।।
तूफान का जोश है खत्म हुआ, अब हम कुटिया पर जाते हैं।
किन्तु जाने से पहले हम, इक बात तुम्हें समझाते हैं।।
यदि पापों की इस दल दल से, बचने की मन में कामना है।
और जीवन अपना सुधारने की, तेरे मन में सच्ची भावना है।।
करो पश्चात्ताप तुम पापों पर, और प्रभु चरणों में पुकार करो।
वे कृपा के सागर बख्शेंगे, तुम सच्चे दिल से गुहार करो।।
पिंजरा देकर गणिका को, बोले तोते को सँभारो तुम।
जो शब्द भी यह मुख से बोले, वही शब्द ऐ देवी उचारो तुम।।
वह शब्द साधारण शब्द नहीं, वह दीन जनों का सहारा है।
भवसिन्धु में डूबते जीवों को, वह पार उतारनहारा है।।
उस पार शब्द के सुमिरण से, सम्पूर्ण पाप धुल जाते हैं।
तन मन निर्मल हो जाता है, पापी पावन बन जाते हैं।।
उसी शब्द प्रताप से बाल्मीकि, डाकू से बन गये ब्रह्मर्षि।
अजामिल जैसे महापापी ने, उसी शब्द से पाई शुभ गति।।

श्रद्धा से करोगी यदि पल पल, उसी सार शब्द का तुम सुमिरण।
तो निश्चित रूप से ऐ देवी, जायेगा सँवर तेरा जीवन।।
इस तरह अमृतमय वचनों से, उस के दिल को शान्ति बख्शी।
दे करके आशीर्वाद उसे, साधु ने वन की राह पकड़ी।।
आशिष पाकर श्री सतगुरु का, हुई उसकी धन्य ज़िन्दगानी।
जन्मों के सोये भाग्य जगे, पा करके दौलत रुहानी।।
गुरु-शब्द का यह सच्चा धन ही, अब उसका फकत सहारा था।
सतगुरु की निशानी वह तोता, अब उसका प्राण प्यारा था।।
पिंजरा क्या दे गया गणिका को, मानो जीवन दे गया साधू।
और बदले मेंअनगिनत पाप,हर करके सब ले गया साधु।।
जब हुई प्रभात की वेला तो, तोता मुख से यह गाने लगा।
सोये हुए जग-जीवों को, गुरु का उपदेश सुनाने लगा।।
ऐ दुनियाँ वालो उठो उठो, है हुई प्रभात अब जागो तुम।
मोह ममता की गहरी निद्रा, त्यागो त्यागो अब त्यागो तुम।।
उठ कर अपने मैले मन को, ऐ दुनियां वालो निखारो तुम।
सतगुरु का पावनऔर निर्मल,जो शब्द है उसे उचारो तुम।।
यह कह कर के वह गंगाराम, गुरु शब्द का करने लगा सुमिरण।
और सार शब्द के सुमिरण से, वह करने लगा पावन जीवन।।
यह सुन करके उस गणिका को, सतगुरु के वचन याद आये।
तोते के मीठे सरस बोल, उसके हिरदय को बहुत भाये।।
उसे ऐसे लगा मानो तोता, गुरु की वाणी है बोल रहा।
और गुरु का शब्द सुना करके,हृदय के पट है खोल रहा।।
उस क्षण से ही वह गणिका भी, गुरु शब्द का सुमिरण करने लगी।
पापों की कालिमा धो कर के, निर्मल तन और मन करने लगी।।
पी कर मदिरा गुरु नाम की वह, कुछ ऐसी नशे में चूर हुई।

दुनियाँ के भोगैश्वर्य तो क्या, खाना पीना भी भूल गई।।
नहीं तन की सुधि रही कुछ भी, पी कर के गुरु भक्ति का जाम।
उस के स्वाँसों की माला पर, अब तो था बस सतगुरु का नाम।।
पहले जीवन को करके याद, आँखों से आँसूं बहने लगे।
मानो हृदय की सभी व्यथा, सतगुरु चरणों में कहने लगे।।
रो-रो कर विनती करने लगी, अनगिनत किये हैं मैने पाप।
पर पापहरण और दुःखभंजन, सृष्टि में कहलाते हैं आप।।
है शरण गही मैंने सतगुरु, ऐ दीनानाथ दया कीजै।
अपनी इस पापिन दासी के, सब पाप-ताप प्रभु हर लीजै।।
बस इसी तरह सुमिरण करते, सुरति गुरु चरणों में जा पहुँची।
तोते ने देख के समझ लिया, आखिरी घड़ी अब आ पहुँची।।
तोते ने पिंजरे के सम्मुख, गणिका का तन था पड़ा हुआ।
था उसकी आत्मा का पँछी, काया-पिंजरे में अड़ा हुआ।।
गणिका बोली अन्तिम सन्देश, है प्यारे गंगाराम मेरा।
जब तुम्हें मिलें गुरुदेव प्रभु, करना दण्डवत प्रणाम मेरा।।
सतगुरु के पावन चरणों में, मेरी यह विनती कर देना।
गुरु वचनों का पालन है किया, यह मेरी साक्षी भर देना।।
यह कहकर वह गुरु-शब्द की करने लगी ध्वनी।
श्री सतगुरु ने आखिर उसकी करुण पुकार सुनी।।
इससे पहले कि ओठों पर आखिरी साँस आये।
दर्शन देकर श्री सतगुरु ने उसके भाग्य जगाये।।
वचन हुये सफल हुई तू हमको आज बुलाने में।
बख्शे सभी पाप किये जो कलियुग के जमाने में।।
माँग ले वरदान करेंगे पूरी आशा तेरी।
बदल डालेंगे हम आशा में निराशा तेरी।।

बोली तब गणिका कमल दिल का खिल गया है आज।
चाहती थी जो कुछ मैं वह मिल गया है आज।।
इससे अच्छे और क्या भाग्य हों इस दासी के।
आखिरी वक्त में दर्शन हुये सचखण्ड वासी के।।
इतना कह करके गिरी चरणों में दम तोड़ दिया।
फानी दुनियाँ को हमेशा-हमेशा के लिये छोड़ दिया।।
आत्मा उसकी गुरु-चरणों में मिल इकरूप हुई।
ज्यों बूँद सागर में मिल करके तद्रूप हुई।।

सच्चे प्रेम का प्रताप

फल मेवा मिष्ठान्न सब, दुर्योधन का त्याग।
श्री कृष्ण जी विदुर, घर चले चाखने साग।।
तत्काल ही श्री कृष्ण जी निज जन विदुर के घर गये।
भगवान मे हृद्धाम में यों भाव उज्जवल भर गये।।
क्या कुछ दशा होगी विदुर की देख कर आया मुझे।
वह संकुचित होगा, हँसेगी आज तो माया मुझे।।
सम्मान बिन सामान के कैसे करेगा आज वह।
दुर्योधनी सम्पत्ति लख आहें भरेगा आज वह।।
वह आज तक धनरहित भी धनसहित सा मन में रहा।
पर आज मेरे ही लिये वह कष्ट पायेगा महा।।
सम्मान का तो एक भी बस पान मुझको है घना।
पकवान वह छूता न मैं अभिमान में जो है सना।।
निज भक्त की यों भक्ति पर भगवान भी सकुचा रहे।
जन है मुझे प्रिय किस तरह जग को बताने जा रहे।।
जा पहुँचे तत्काल ही, विदुर भक्त के द्वार।
देख कपाटों को लगे, करने प्रेम पुकार।।
खोलो विदुर जी ,विदुर जी, पट कृष्ण यों रटने लगे।
भव-बन्ध मानो विदुर के तत्काल ही कटने लगे।।
भगवान खोलो कह रहे यह बन्ध गये किस डोर से।
सत्प्रेम की जंज़ीर से जकड़े हुये चहूँ ओर से।।
घर पर विदुर जी थे नहीं थी भक्तिनी घर स्वामिनी।
श्री कृष्ण चरणाम्बुज अलिनी सत्प्रेम सरिता पावनी।।
निज भवन के पट बन्द कर वह निज वसन थी धो रही।

निर्विघ्न वह तन-नग्न हरि-पद-मग्न-मन थी हो रही।।
खोलो विदुर जी शब्द ये आकर पड़े जब कान में।
कानन विचरती मृगी जड़ हो गान के ज्यों ध्यान में।।
नाराज़ हो क्या विदुरजी जब यह सुना भूली सभी।
श्री कृष्ण के ये वचन हैं पहचान कर भागी जभी।।
तन की न सुधि जिसको भला क्या काम उसको वसन से।
जो कर्म तन मन से करे क्या काम उसको वचन से।।
आई झटपट दौड़ कर, खोले तुरत कपाट।
देखा तो बस है वही, कृष्ण हृदय सम्राट।।
झुक कर पड़ी पैरों जभी प्रेमाश्रु अर्ध्य दिया वहीं।
तन की न कुछ सुध बुध रही फूली समाती है नहीं।।
भगवान उसका प्रेम लख कुछ देर को चित्रित हुए।
मानो चकोरी चन्द्र दोनों आज एकत्रित हुए।।
श्री कृष्ण के भी लोचनों से, प्रेम के आँसू बहे।
भगवान उसकी प्रेमाभक्ति पर ठगे से ही रहे।।
पीत पट फेंका हरि ने तन-वसन वह बन गया।
आसन बिछाया विदुरानी मन प्रेम रस से सन गया।।
प्रभु मन्द मुस्काते हुए बैठे मही पर प्रेम से।
प्रभु को बिठा दे ही भले कोई कहीं भी प्रेम से।।
अब क्या खिलाऊं मैं इन्हें, विदुरानी चिन्ता में पड़ी।
यों मन में अपने सोचती कुछ पल रही वहीं खड़ी।।
कुछ भी खिला दे आज तू होगा सुधा से कम नहीं।
भगवान भूखे भाव के हैं देख लेना तू यहीं।।
भीतर गई विदुरानी केले प्रेम से लाई जभी।
अति संकुचित होती हुई तन की भुलाये सुधि सभी।।

केले उसके हाथ में, जब देखे करतार।
मानो भूखे जन्म के, टूटे उसी प्रकार।।
विदुरानी ने भी करी, चालाकी ततकाल।
जल्दी से पीछे हटी, ना-ना-ना- गोपाल।।
मैं आप अपने हाथ से तुमको खिलाती हूँ अभी।
लो छीलकर केले अभी तुमको खिलाती हूँ सभी।।
श्री कृष्ण जी ने फिर यहाँ वह अजब लीला रच दई।
मुझको लगी है भूख री, ला देर भारी हो गई।।
झट लग गई घनश्याम को छिलके खिलाने छीलकर।
थे नयन दर्शन में मगन पी रही थी अमृत नयन भर।।
बेसुध खिलाती वह रही बेसुध हुए प्रभु खा रहे।
क्या बात है इन फलों की यों कथन करते जा रहे।।
इस भाँति आधे से अधिक श्री कृष्ण जब फल खा चुके।
सतप्रेम फल के सार का सुस्वाद जब वे पा चुके।।
आये कहीं बाहर से विदुर जी अचानक उस घड़ी।
उस भक्त की भगवान से अति स्नेहयुत आँखे लड़ीं।।
चरणाम्बुजों पर भक्त वह सीधा शिलामुख-सा गया।
मानो मनुज-तन धारने का आज वह फल पा गया।।
श्री कृष्ण ने उसको उठाकर प्रेम से लाया गले।
भगवान के भी उस समय बह प्रेम के आँसू चले।।
इतने में श्री विदुर ने, क्या देखा अन्धेर।
छिलके खाते श्याम हैं, लगा गिरी का ढेर।।
क्रोधित होकर बहुत ही, भर क्रोध में नैंन।
खाटे-मीठे बहुत ही, कहे नारि को बैन।।
झट छीन कर फल आप अपने हाथ से छीले सभी।

श्री कृष्ण को देने लगे खाने लगे वे भी जभी।।
निज चित्त में श्री विदुर जी प्रमुदित अति गर्वित हुए।
विदुरानी लज्जित हो गई तब वचन प्रभु प्रकटित किये।।
सिर झट हिलाया नाक भौं दृग में जभी सलवट पड़ी।
बस बस विदुर जी बस करो आने लगीं फलियें कड़ी।।
विस्मित हुये अब तो विदुर, विदुरानी हँस भीतर गई।
भगवान ने निज प्रेमिका की बात यों झट रख लई।।
हो धन्य तुम भी विदुर जी विदुरानी तू धन्य है।
प्रभु के हृदय को हर लिया तुम सा न जग में अन्य है।।

गुरु भक्त उपमन्यु

जीते हैं दुनियाँ में वे जिनका सुयस जीता सदा।
वरना जीना दुनियां में इन्सान का जाता वृथा।।
आज तक पाया उसी ने है सुयश संसार में।
काम जीवन में किया जिस भक्ति और परमार्थ का।।
करके सेवा लगन से लेते हैं वे गुरु का रिझा।
जीते हैं दुनियाँ में वे जिसका सुयश जीता सदा।।
मिलती हैं इतिहास में ऐसी मिसालें बेशुमार।
चल के गुरु आज्ञा पे जिन्हों ने लिया जीवन संवार।।
सेवा भक्ति कर गुरु की प्राप्त की प्रसन्नता।
और गये बन एक दिन संसार के वे तारनहार।।
उनके पद-चिन्हों पे चलता हर प्राणी संसार का।
जीते हैं दुनियाँ में वे जिनका सुयश जीता सदा।।
ऐसे गुरु भक्तों की गाथा लोग जब भी गाते हैं।
श्रद्धा से चरणों में उनके सबके सिर झुक जाते हैं।।
शुभ विचार उनके हैं जाते अन्तर्मानस में उतर।
रोशनी बन कर हकीकत की जो राह दिखलाते हैं।।
धन्य हैं वे विभूतियाँ संसार में रहीं जगमगा।
जीते हैं दुनियाँ में वे जिनका सुयश जीता सदा।।
गुरु की सच्ची सेवा भक्ति और भक्ति में कीन्हा जो कमाल।
वह उदाहरण गुरु-भक्त उपमन्यु का है बे-मिसाल।।
गुरु की आज्ञा मौज पे उसने किया जीवन निसार।
पाके सच्चा भक्ति धन फिर हो गया वह मालामाल।।
नाम उनका होता रोशन देते जो खुद को मिटा।
जीते हैं दुनियाँ में वे जिनका सुयश जीता सदा।।

जब गया गुरु की शरण में उस समय था वह अबोध।
लेकिन मन में लगन थी करना है हासिल आत्मबोध।।
उन दिनों गुरु आश्रमों में विद्या पढ़ाई जाती थी।
साथ ही विद्या के जाता था पढ़ाया भक्तियोग।।
प्रवेश उपमन्यु ने भी गुरु आश्रम में ले लिया।
जीते हैं दुनियाँ में वे जिनका सुयश जीता सदा।।
पढ़ने वालों के लिये था उन दिनों नियम यह आम।
आश्रम की सेवा का भी नियुक्त रहता साथ काम।।
कोई चुन के पुष्प लाता कोई लाता कन्द-मूल।
और कोई आश्रम में भरता पानी सुबहो-शाम।।
ज़िम्मे उपमन्यु के भी सेवा गुरु ने दी लगा।
जीते हैं दुनियां में वे जिनका सुयश जीता सदा।।
सौंपी उपमन्यु को सेवा गुरु ने अपनी मौज से।
जाना वन में नित्य ही गउएं चराने के लिये।।
देखभाल करना इनकी और खिलाना हरित घास।
बिगड़ने पाये कहीं न स्वास्थ्य इनका रोग से।।
सेवा इन गउओं की करना अपना मन और चित्त लगा।
जीते हैं दुनियाँ में वे जिनका सुयश जीता सदा।।
उपमन्यु ने सत्यवचन कहकर किया गुरु को प्रणाम।
और सेवा में निरत रहने लगा वह आठोंयाम।।
प्रात होते ही निकल जाता था वह जंगल की ओर।
सारा दिन गउएँ चराता लौटता होने पे शाम।।
इस तरह आज्ञा में रहकर सेवा वह करने लगा।
जीते हैं दुनियाँ में वे जिनका सुयश जीता सदा।।

इस तरह करने लगा गुरु सेवा में जीवन व्यतीत।
दिनों दिन बढ़ती गई उपमन्यु की सेवा में प्रीत।।
प्रेम सच्चाई से रत रहता हुआ सेवा में वह।
गुरु के उपकारों के दिन और रात वह गाता था गीत।।
सेवा भक्ति में वह अपना तन और मन रंगने लगा।
जीते हैं दुनियाँ में वे जिनका सुयश जीता सदा।।
गुरुदेव त्रिकालदर्शी यद्यपि थे सब जाननहार।
फिर भी बोले एक दिन उपमन्यु को किरपा से निहार।।
वत्स सच-सच तुम बताना पूछते हैं जो भी बात।
बहुत मोटे हो रहे हो लेते तुम हो क्या आहार।।
बात सच्ची कह दी उपमन्यु ने अपना सिर झुका।
जीते हैं दुनियाँ में वे जिनका सुयश जीता सदा।।
सुबह उठके नित्य गाँव में चला जाता हूँ मैं।
और वहाँ से माँगकर भिक्षा प्रभो लाता हूँ मैं।।
भिक्षा में जो कुछ भी मुझको मिलता है उस गाँव से।
ऐ मेरे गुरुदेव जी केवल वही खाता हूँ मैं।।
और नहीं खाता मैं कुछ भी हे प्रभो इसके सिवा।
जीते हैं दुनियाँ में वे जिनका सुयश जीता सदा।।
गुरु जी बोले वत्स तेरा यह गलत व्यवहार है।
भिक्षा से विद्यार्थी का कुछ नहीं सरोकार है।।
इसलिये आगे से भिक्षा होगी मुझको सौंपनी।
याद रखना उसपे आश्रम का फकत अधिकार है।।
सत्यवचन कह उसने गुरु-आज्ञा को अपने सिर धरा।
जीते हैं दुनियाँ में वे जिनका सुयश जीता सदा।।
एक दिन फिर मौज में आकर गुरु जी ने कहा।

पूछते हैं प्रश्न जो भी देना सच-सच तुम बता।।
मोटे होते जा रहे हो दिन ब दिन तुम किस तरह।
वत्स उपमन्यु बताओ आजकर खाते हो क्या।।
कह दी उसने बात सच्ची चरणों में सिर को झुका।
जीते हैं दुनियाँ में वे जिनका सुयश जीता सदा।।
बोला उपमन्यु गुरु से सच बताता हूँ प्रभो।
जब से रोका आपने भिक्षा न लाता हूँ प्रभो।।
दूध गउँओं का मैं पी लेता हूँ दिन में एक बार।
सिवा इसके और कुछ भी मैं न खाता हूँ प्रभो।।
फिर भी न जाने मैं क्यों मोटा हूँ दिन दिन हो रहा।
जीते हैं दुनियाँ में वे जिनका सुयश जीता सदा।।
गउओं पर बेटा फकत आश्रम का ही अधिकार है।
इसलिये यह काम तेरा चोरी में शुमार है।।
आगे से हरगिज़ न करना ऐसा गलत काम तुम।
हुक्म जो हो दास को मेरे प्रभु स्वीकार है
ऐसा कह उपमन्यु माँगी अपनी गलती की क्षमा।
जीते हैं दुनियां में वे जिनका सुयश जीता सदा।।
देखो अब निर्वाह कैसे अपना वह करने लगा।
किस तरह उपमन्यु अपने पेट को भरने लगा।।
भूख लगने पर वह खा लेता था पत्ते तोड़कर।
जिसके कारण दिन-ब-दिन कमज़ोर वह पड़ने लगा।।
फिर भी वह गुरु वचनों की रेखा के बाहर न गया।
जीते हैं दुनियाँ में वे जिनका सुयश जीता सदा।।
एक दिन जब हद से ज्यादा भूख थी उसको लगी।
इक विषैली झाड़ी पे जाकर नज़र उसकी पड़ी।।

भूख के मारे उसी झाड़ी के पत्ते खा लिये।
जिससे उस की आँखों की जाती रही सब रोशनी।।
फिर भी सेवा करने में श्रद्धा से वह तत्पर रहा।
जीते हैं दुनियाँ में वे जिनका सुयश जीता सदा।।
आँखों की ज्योति गई और तन बदन भी क्षीण था।
उसका सेवा-सलिल में लेकिन बना मन मीन था।।
सेवा करते करते वह जंगल में भूला रास्ता।
नयनों की ज्योति से क्योंकि हो चुका वह हीन था।।
जिसके कारण वह अन्धेर कूप में जाकर गिरा।
जीते हैं दुनियाँ में वे जिनका सुयश जीता सदा।।
गिरते ही उपमन्यु के गउएँ रंभाने लग गई।
मानो वह उपमन्यु की भक्ति सराहने लग गई।।
होके खुश सब देवता भी उसका यश गाने लगे।
और दिशायें फूल खुशियों के बरसाने लग गईं।।
भक्ति निष्ठा से लिया सेवक ने सतगुरु को रिझा।
जीते हैं दुनियाँ में वे जिनका सुयश जीता सदा।।
उधर आश्रम में थे उपमन्यु के सतगुरु बेकरार।
आया उपमन्यु न अब तक हो गया यद्यपि अंधार।।
लेके कुछ शिष्यों को सतगुरु चल पड़े जंगल की ओर।
पहुँचे जिस स्थान पर थीं कर रहीं गउएँ पुकार।।
सतगुरु ने आवाज़ दी तू है कहाँ उपमन्यु बता।
जीते हैं दुनियाँ में वे जिनका सुयश जीता सदा।।
सतगुरु का वचन सुन उपमन्यु गद गद हो गया।
बोला ऐ गुरुदेव जी कुएं में हूँ मैं गिर पड़ा।।
आँखों की ज्योती मेरी है छिन गई दुर्भाग्य से।

अब मैं केसे कर सकूँगा आपकी सेवा भला।।
बस यही गुरुदेव जी चिन्ता रही मुझको सता।
जीते हैं दुनियाँ में वे जिनका सुयश जीता सदा।।
होके खुश निष्ठा पे उसकी सतगुरु ने यूँ कहा।
ऐ प्रिय अश्विनी कुमारों से करो तुम प्रार्थना।।
वैद्य हैं वे देवताओं के करेंगे रोग ठीक।
उनकी अनुकम्पा से होगी दूर नयनों की व्यथा।।
वचन सुन कर गुरुदेव के उपमन्यु ने वैसा ही किया।
जीते हैं दुनियाँ में वे जिनका सुयश जीता सदा।।
आ गये सुर वैद्य झट सुन उपमन्यु की प्रार्थना।
एक फल हाथों में देकर उसको खाने को कहा।।
करके अस्वीकार फल को यूँ कहा उपमन्यु ने।
खा नहीं सकता न हो जब तक हुकम गुरुदेव का।
धन्य धन्य कहने लगे सब ऋषि मुनि और देवता।
जीते हैं दुनियाँ में वे जिनका सुयश जीता सदा।।
देख श्रद्धाभाव शुभ आशीष सतगुरु ने दिया।
खा लो बेटा फल तुम्हारे रोग की है यह दवा।।
नष्ट हो जायेंगे इससे तन व मन के रोग सब।
चमकेगा भक्ति गगन में तारा तेरे भाग्य का।।
गुरु के आशिष से गई महिमा जगत में उसकी छा।
जीते हैं दुनियाँ में वे जिनका सुयश जीता सदा।।
फल के खाते ही हुआ उपमन्यु तन मन से निरोग।
गुरु कृपा से मिट गये त्रय ताप और सब भव के रोग।।
सफल पूर्ण रूप से भक्ति परीक्षा में हुआ।
भा गया सतगुरु के मन को सिर चढ़ा सतगुरु की मौज।।

धन्य उपमन्यु का जीवन हर तरह से हो गया।
जीते हैं दुनियाँ में वे जिनका सुयश जीता सदा।।
क्या गजब का सेवा और भक्ति का यह प्रमाण है।
धर्म अपने का सदा सेवक को रहता ध्यान है।।
कष्टों से घबरा के वह होता नहीं विचलित कभी।
गुरु की आज्ञा पे निछावर करता तन और प्राण है।।
ऐसे सच्चे दास पे हर पल बरसती गुरु-कृपा।
जीते हैं दुनियां में वे जिनका सुयश जीता सदा।।

रज़्ज़ाके आलम (संसार का अन्नदाता)

अजब दुनियां का नक्शा है अजब दुनियाँ की सूरत है।
नहीं खुलता नहीं खुलता यह क्या 1राज़-हकीकत है।।
ये सब कुछ जो नज़र आता है इक 2तस्वीरे हैरत है।
खुदा जाने यह क्या उस 3कादिरे-मुतलक की कुदरत है।।
डुबोते हैं हमें हैरत में ये कुदरत के नज़्ज़ारे।
ये कर देते हैं हैरां अक्ल को हिकमत के नज़्ज़ारे।।
मगर इन सबमें बढ़कर है नज़ारा उसकी रहमत का।
जिधर देखो खिला है बाग उसकी शाने-कुदरत का।।
इसी रहमत ने क्या क्या नेमतें हमको अता की हैं।
यह दिल ही जानता है बख्शिशें जैसी खुदा की हैं।।
वही 4परवरदिगारे-दहर है 5रज़्ज़ाके -आलम है।
6रफीके-दर्दमन्दां 7गमगुसारे-अहले-मातम है।।
उसी के हुक्म से दुनियाँ के सारे काम होते हैं।
खुदी में फँस के नाहक लोग अपना वक्त खोते हैं।।
किसी को कौन दे सकता है यह है हौसला किसका।
वही देता है सब को इक वही हम सब का है दाता।।
वही 8 हाजतरवा है और कोई हो नहीं सकता।
गलत है गर कोई दावा करे 9हाजतरवाई का।।
मगर फिर भी खुदी में लोग आपे से गुज़रते हैं।
यह हम करते हैं यह हमने किया है इसपे मरते हैं।।

1वास्तविक रहस्य2-आश्चर्यजनक चित्र 3-सर्वशक्तिमान्4-संसार का पालनकर्ता5-संसार काअन्नदाता6-दुखियों का मित्र 7-शोक में सहानुभुति करने वाला8-इच्छा और कामना पूरी करने वाला9-कामना पूरी करना

10दकन के मुल्क में 11फरमारवा था राजा शिवा जी।
ज़माने में मची थी धूम इक जिसकी 12शुजाअत की।।
अगर 13 शमशीरे-बुर्रा हाथ में उसके 14अलम देखी।
ज़मी थर्रा गई दिल हिल गये15 जाने-अजल निकली।।
गज़ब का दबदबा था रोब था उसका कयामत का।
ज़मीं से आसमां तक शोर था शाने-हकूमत का।।
पुरंधर नाम का इक किला शिवा जी ने बनवाया।
किसी दिन देखने 16तामीर उसकी खुद चला आया।।
गुरु थे रामदास उसके उन्हें भी साथ वह लाया।।
हज़ारों देखकर मज़दूर दिल में यह गरूर आया।।
कि मेरे ज़रिया से ही सैंकड़ों के पेट पलते हैं।
हज़ारों और लाखों के इसी से काम चलते हैं।।
न यह तामीर होती तो ये क्योंकर पररवरिश पाते।
न मैं यह किला बनवाता तो क्या करते यह क्या खाते।।
खुदा जाने कहां रहते कहां होते किधर जाते।
नतीजा उसका यह होता कि फाके करके मर जाते।।
17खुदी से होके 18बेखुद 19बहरे-निखवत में वह डूबा था।
वह अपने दिल में उनका अपने को 20रज़्ज़ाक समझा था।।
गुरु से भी किया ज़ाहिर 21ख्याले-पुरगरूर उसने।
गुरु जी सुनके उसकी बात उस दम हो रहेचुपके।।
22खुदारसीदा थे गुरु जी वे जो साथ थे उसके।

10-दक्षिण 11-शासक12-वीरता13नंगा तलवार14-ऊँची15-मृत्यु के प्राण निकल गये, 16निर्माण 17-अहंता अहंकार18-चूर19-अभिमान के समुद्र20-अन्नदाता 21-अभिमान भरा विचार 22-ब्रह्मज्ञानी

हज़ारों 23रहमते-खालिक के उनके दिल में थे नक्शे।।
24तहम्मुल 25इंतहा का 26जब्त भी उनको बला का था।
प्रभु का हर घड़ी दिल में 27तस्व्वुर उनके रहता था।।
वहां से जब चले तो चल के थोड़ी दूर वे ठहरे।
जहाँ पर टुकड़े कुछ पत्थर के उन्होंने पड़े देखे।।
बहुत 28संजीदगी के साथ शिवा जी से यूँ बोले।
कि आओ हम दिखाएँ29रहमते-रज़्ज़ाक के जल्वे।।
तुम्हें बेखुद बनाया है 30ख्याले-खाम ने देखो।
फलां पत्थर को तोड़ो और मेरे सामने देखो।।
गुरु के हुकम से पत्थर वह शिवा जी ने जब तोड़ा।
तो क्या देखा कि ज़िन्दा एक मेंढक उस में है बैठा।।
वह क्या देखा कि उसको देखते ही हो गया 31सक्ता।
हुआ हैरां कि इस पत्थर में यह क्योंकर रहा ज़िन्दा।।
हवा भी जा न सकती थी तो क्या खाता था पीता था।
32इलाही किस तरह मेंढक यह इस पत्थर में जीता था।।
गुरु जी इस तरह हैरान उसको देख कर समझे।
हुआ 33शाने-करीमी का तबीयत पर असर इसके।।
34तस्व्वुफ के किये जायें अगर इस हाल में चर्चे।
तो मुमकिन है कि इसका कुछ न कुछअंजाम भी निकले।।
समझ कर यह वे शिवा जी से बोले क्यों यह हैरत है।
जो आँखे खोल कर देखो यहाँ 35 इबरत ही इबरत है।।

23-प्रभु की कृपा के24-धैर्य25असीम26-सहनशक्ति27-ध्यान28-गम्भीरता29-अन्नदाता की कृपा के30-भ्रमातमक विचार31-निस्तब्ध32-है भगवान33-ईश्वरीय शक्ति34-अध्यात्म,परमार्थ35-शिक्षा ही शिक्षा

अगर समझो तो 36रोज़ो-शब का होना इक अचंभा है।
37मुअल्लक रह के 38सय्यारों का फिरना इक तमाशा है।।
ये रोशन चाँद तारों का जो दिलकश एक नक्शा है।
जो 39चश्मे-गौर से देखो तो उसका ऐन जल्वा है।।
किसी इन्सान की कब इसमें शामिल कोई 40हिकमत है।
वही 41सन्नाअ है उनका वही कुल 42ऐन सनअत है।।
हमेशा ह र घड़ी हर हाल में 43दमसाज-ो-हमदम है।
वही 44फर्यादरस 45हाजत-रवाए-हर दो-आलम है।।
जब ऐसा है तो फिर सर में खुदी का क्यों रहे 46सौदा।
47ज़मीनो-आसमां उसके वही मालिक है 48आलम का।।
49ख्याले-किब्रो-निखवत से खुदा के वास्ते डरना।
यह हम करते हैं यह हमने किया ऐसा न फिर कहना।।

---------- 36-

दिन और रात37-अधर में लटका हुआ38ग्रहों,सितारों 39-गम्भार दृष्टि से 40युक्ति41स्रष्टा42समस्त सृष्टि 43संगीसाथी44फरियाद 45दोनों लोकों की कामना पूरी करने वाला46पागलपन47पृथ्वी आकाश 48 जहान 49

नरसी की हुण्डी

जूनागढ़ में नरसी मेहता एक भक्तजन रहते थे।
जो भगवान को अपने तन प्राणों का स्वामी कहते थे।।
फकत प्रभु का भजन-कीर्तन उनके मन को भाया था।
अपने मन मन्दिर में केवल हरि का रूप बसाया था।।
आस भरोसे छोड़ के सब ही प्रभु आश्रित था चित्त उनका।
औरों से बेवास्ता होकर दिल मालिक से जुड़ा उनका।।
निर्धन थे, निर्बल थे, लेकिन हिरदय था विश्वास भरा।
अपने प्रभु की भगती पुख्ता, यही उनका धन था, बल था।।
दुनियाँ से थे अलग थलग और न्यारे दुनियाँदारों से।
मेल जोल रखते थे बेशक, लेकिन हरि के प्यारों से।।
साध जनों की संगति-सुहबत है दुनियां में चीज़ बड़ी।
जिसे नसीब हुई सतसंगत, उसे रही फिर कौन कमी।।
प्रेंमी भक्तों को तो बस सतसंग और नाम ही प्यारा है।
प्रभु के नाम पे भक्त जनों ने अपना सब कुछ वारा है।।
दुनियाँ भी है मानो भाँति भाँति की चीज़ों की मण्डी।
भक्त भी रहते हैं दुनियाँ में और दुष्ट भी पाखण्डी।।
दुष्टों से भगवान बचाये, साध जनों को सताते हैं।
बिला-वजह करते हैं बुराई, सबको दुःख पहुँचाते हैं।।
खाह-मखाह औरों के फटे में, टाँग अड़ाते रहते हैं।
इसीलिये इनसे सजन जन, खुद को बचाते रहते हैं।।
नरसी के भी पड़े थे पीछे, कुछ ऐसी ही लोग वहाँ।
भक्त की रक्षा का लेकिन भगवान भी करते हैं सामाँ।।
एक जमाअत सन्तों की जूनागढ़ में इक बार आई।
द्वारिका नगरी के दर्शन को होना चाहती थी राही।।

सफर में पैसे का जोखिम नहीं रखना चाहते थे साधू।
किसी सेठ से वहाँ की हुण्डी लिया चाहते थे साधू।।
जाकर द्वारिका में जिससे वे अपनी नकदी पा जायें।
रसते में डर था, कहीं न अपना माल लुटा जायें।।
पूछ रहे थे साधु, जूनागढ़ में शाह कोई ऐसा।
हुण्डी कर दे द्वारिका की, हम देंगे नकद उसे पैसा।।
लोगों ने उन सन्तों को नरसी का नाम ही बतलाया।
बोले, हमने इन्हीं का नाम है दूर दूर तक सुन पाया।।
बड़े बड़े नगरों में है इनकी साख बहुत भारी।
देश के कोने कोने में होती इनकी हुण्डी जारी।।
इन्हीं के पास चले जाओ, बस काम तुम्हारा बन जाये।
कहना, सेठ जी, नाम तुम्हारा सुनकर दूर से हम आये।।
बहुत कहेगा नरसी, मैं तो इक निर्धन बेचारा हूँ।
ना मैं सेठ न साहूकार हूँ, ना कोई बंजारा हूँ।।
विनती करके, मिन्नत करके, लेकिन उसे मना लीजौ।
जैसे भी हो, नरसी सेठ से तुम हुण्डी लिखवा लीजौ।।
इसी तरह साधु सन्तों को लोगों ने भरमा ही दिया।
उलटी सीधी समझाकर नरसी के हाँ भिजवा ही दिया।।
सोचा उन्होंने, खूब मज़े की बात बनेगी यह भी आज।
नरसी से जब जाकर हुण्डी मागेंगे साधु महाराज।।
देखने के काबिल होगी नरसी मेहता की यह उलझन।
भक्त बना फिरता है, देखें आज बचाये तो दामन।।
पूछते पूछते नरसी मेहता का घर साधू जा पहूँचे।
खूब बड़ा कोई साहूकार है, यही सोचते आ पहुँचे।।
होगी एक बड़ी सी हवेली, महल निहायत आलीशान।

पहुँचे तो देखा इक झोंपड़ा टूटा फूटा और मैदान।।
सन्तों ने सोचा यह सेठ इक भक्त भी तो कहलाता है।
शायद इसीलिये आडम्बर रचने से कतराता है।।
कहने वाले कहते थे, यह खुद को छुपाये रहता है।
सेठ नहीं, बल्कि खुद को इक दीन हीन जन कहता है।।
दौलत भी हो, गरीबी भी हो, वाह वाह फिर क्या कहने।
सादगी तो दौलतमन्दी में लगा देती है सौ गहने।।
यही सोचते चले झोंपड़े के अन्दर साधू महाराज।
वहाँ दिखाई दिया न कुछ भी उन्हें अमीरों जैसा साज।।
नरसी ने जब देखा सन्त जन आये अपने द्वारे पर।
अहोभाग्य कहता हुआ दौड़ पड़ा, चरणों में गिरा आकर।।
धन्य हुआ मैं, आज मेरे घर साधु सन्त पधारे हैं।
साध सन्त तो सदा ही मुझको प्राणों से भी प्यारे हैं।।
सन्तों से हो प्यार जिसे, वह जग में भाग्यवान कहिये।
सन्तों की सेवा को भक्ती और मुक्ती की खान कहिये।।
कुशा के आसन पर बिठलाया और चरण सहलाने लगा।
चरणों को धो धोकर अपने मन की मैल हटाने लगा।।
सिर चरणों में धर कर बोला, खिदमत का मौका दीजै।
आज्ञाकारी सेवक हूँ, जो सेवा हो आज्ञा दीजै।।
साधू जन इतना सुनते ही जेबें खाली करने लगे।
ढेर रुपयों के गिन गिन नरसी के आगे धरने लगे।।
हैरत में पड़कर नरसी बोला, भगवन क्या करते हो।
यह सब नकदी ढेर लगा मेरे आगे क्यों धरते हो।।
मैं तो सन्तों का सेवक हूँ या प्रभु का बेदाम गुलाम।
माया का लोभी नहीं हरगिज़, धन दौलत है मुझे हराम।।

पापों की इस दल दल में क्यों नाहक मुझे फँसाते हो।
दुःखदायी माया के लोभ का क्यों यह जाल बिछाते हो।।
साधू बोले, सुनो शाह जी, बे मतलब हम आये नहीं।
यह सब नकद नारायण भी तो सिवा गरज़ के लाये नहीं।।
तीरथ यात्रा की इच्छा है, द्वारिका जाना चाहते हैं।
नकदी देकर आपको आपसे हुण्डी पाना चाहते हैं।।
साथ अगर ले जायें नकदी, रसते में चोरों का डर।
जान भी अपनी खतरे में क्यों डालें नकदी की खातिर।।
यही सोचकर नाम तुम्हारा सुनकर तुम तक आये हैं।
हुण्डी भरने की खातिर ये नकद सात सौ लाये हैं।।
तुम हो बड़े सेठ शाह जी, सब नगरों में साख बड़ी।
कोई गुमाशता या व्यापारी द्वारिका में भी होगा ही।।
हमने सुना है खूब तुम्हारा लेन देन चलता रहता ।
नरसी सेठ सा और नहीं है,यही हरइक जन है कहता।।
कारज हमारा भी कर दीजै, हुण्डी हमें बना दीजै।
साध जनों की मुश्किल आसाँ कीजै और दुआ लीजै।।
हाथ जोड़ कर नरसी बोला, अब कुछ समझ में आया है।
शायद किसी ने आपको साधु जी, नाहक ही बहकाया है।।
नहीं सेठ, नहीं साहूकार हूँ, इक सन्तों का सेवक हूँ।
अपने प्रभु के द्वारे का इक अदना सा मैं भिक्षुक हूँ।।
शाह तो हैं भगवान मेरे, जो साँवलशाह कहलाते हैं।
मुझ गरीब को शाह कह कह कर आप मुझे शर्माते हैं।।
मैं गरीब इस योग्य कहाँ, जो किसी के नाम हुण्डी कर दूँ।
कौन है मेरा जानने वाला, जिसके नाम की साख भर दूँ।।
और न कोई बिना प्रभु के मुझको पूछने वाला है।

मुझ गरीब पर हँसने का यह किसी ने ढंग निकाला है।।
साधू बोले, खूब सेठ जी, यह मज़ाक भी खूब रहा।
वैसा ही पाया है आपको, जैसा था लोगों ने कहा।।
अपने आपको सेठ कहलाना आप पसन्द नहीं करते हैं।
एक गरीब दरिद्र हमेशा अपने आपको कहते हैं।।
वही बात हम देखते हैं, बिल्कुल सच साबित होती है।
पुख्ता इसी से और यकीन करने की सूरत होती है।।
कोई बहाना आपका हरगिज़, दिल पर हम नहीं लायेंगे।
लिये बगैर शाह जी, अब हुण्डी हम हरगिज़ नहीं जायेंगे।।
इतना कहकर डट गये साधू और बहुत इसरार किया।
नरसी भक्त ने बार बार ही हाथ जोड़ इनकार किया।।
लेकिन साधू टले न फिर भी, नरसी जी को झुकना पड़ा।
नकद सात सौ का परवाना, आखिर उनको लिखना पड़ा।।
बोले, आपकी आज्ञा है, तो हुण्डी लिख कर देता हूँ।
कसम चरणों की खाकर लेकिन, आपसे सच सच कहता हूँ।।
शाह नहीं मैं सेठ नहीं, साहूकारा मेरा काम नहीं।
अपने साँवलशाह के सिवा, मैं और किसी का गुलाम नहीं।।
साँवलशाह के नाम पे उनको, फिर हुण्डी लिखकर दे दी।
और कहा, अब साँवलशाह ही, सिद्ध करेंगे काज सभी।।
हुण्डी लेकर निज यात्रा पर, खुशी से साधू सन्त चले।
तय करते मन्ज़िल, मन्ज़िल, आखिर द्वारिका आ पहुँचे।।
देख के एक जगह अच्छी, डेरे को बन्दोबस्त किया।
फिर अपने भोजन पानी का, सीधा सामान दुरुस्त किया।।
आराम किया और फिर निकले, अब साँवलशाह की खबर लायें।
मिलकर उनसे हुण्डी देकर, बदले में नकदी पा जायें।।

पूछा जाकर व्यापारियों से, जाकर पूछा साहूकारों से।
सब आड़ती लोगों से पूछा, और पूछा ठीकेदारों से।।
बाज़ार में, गलियों में पूछा, कूचें में और मुहल्ले में।
हर छोटे और बड़े से पूछा, पड़ा न कुछ पल्ले में।।
साँवल शाह का नाम पता, कोई भी नहीं बताता था।
यह नाम सुना ही नहीं हरगिज़, हर शख्स यह बात सुनाता था।
निकले थे सुबह सवेरे से, दोपहर हुई फिर शाम हुई।
साँवल शाह की खोज-बीन और पूछ-ताछ नाकाम हुई।।
थक हार के डेरे पर आये, साधू अशान्त और व्याकुल भी।
अच्छा धोखा खाया हमने, अब रकम डूब गई बिल्कुल ही।।
नरसी ने खूब ठगा हमको, सब हमसे रुपया ऐंठ लिया।
और बदले में लिख कर हमको, इक फर्ज़ी नाम का पत्र दिया।।
अब कहां से ढूँढे साँवलशाह, और कहाँ से अपना धन पायें।
खुद गलत काम हम कर बैठे, अब यों रो रो कर पछतायें।।
जो हरि नाम के रसिया हैं, और हरि के भक्त कहाते हैं।
दुनियाँ को दिखाकर भगती की, जो मिथ्या ढोंग रचाते हैं।।
जब भक्त ही इतने झूठे हैं, फिर दुनियाँ में सच कहाँ रहा।
भक्तों की भगती का प्रताप, कोई बतलाये कहाँ रहा।।
उलटी सीधी बातें ऐसी साधुजन कहने लगे आखिर।
होकर निराश अपने धन से, डेरे में बैठ रहे आकर।।
इतने में देखते क्या हैं, सिर पर मोटा सा पग्गड़ बाँधे।
धोती पैरों तक लटकी हुई और रेशमी शाल पड़ा काँधे।।
घुँघराले बाल लटकते हैं, मतवाले नयन मटकते हैं।
मोती जैसे सुन्दर सफेद, मुखड़े में दाँत चमकते हैं।।
इक रेशमी कुर्ता है तन पर, कुछ तोंद आगे को बढ़ी हुई।

दोपट्टा कमर में ज़र्री का, हाथों में थैली थमी हुई।।
राजा महाराजा भी जिस चाल को, देखें तो शरमा जायें।
ऐसी मतवाली चाल से चलते, सेठ जी एक चले आयें।।
आये उस जगह जहाँ साधू, बैठे थे गम में डूबे हुये।
हिरदय में निराशा थी उनके, और गुस्से से मुँह सूजे हुए।।
नज़दीक साधुओं के आकर, शाह ने पहले प्रणाम किया।
फिर हाथ जोड़कर बड़े अदब से, उनके साथ कलाम किया।।
जूनागढ़ से आये हैं क्या, और नरसी सेठ की इक हुण्डी।
क्या आप ही लाये हैं महाराज, जो मेरे नाम है लिखी हुई।।
मैं इसी नगर का वासी हूँ और साँवलशाह है नाम मेरा।
नरसी जी का कारीन्दा हूँ, भक्तों की रक्षा काम मेरा।।
यह बात सुनी तो साधुओं के, मानों प्राणों में प्राण आये।
भक्तों की हुण्डी चुकाने को, यों खुद चलकर भगवान आये।।
हुण्डी लेकर साँवलशाह ने, माथे से लगाई नरसी की।
फिर थैली खोल धरी आगे, सब रकम चुकाई नरसी की।।
चिट्ठी लिख कर नरसी के नाम, फिर हाथ थमाई सन्तों के।
उसमें यह लिखा था हुण्डी आपकी, हाथ से पाई सन्तों के।।
सेठ हमारे आप हैं, हम तो फकत गुमाशते आपके हैं।
जब जब भी चाहो याद करो, हम देखते रास्ते आपके हैं।।
जो हुण्डी आपने लिख भेजी, इस हुण्डी की पाई पाई।
सब हमने चुकाई आपकी तरफ से,ज्योंही कि इत्तला आई।।
जो काम पड़े आयन्दा भी, ऐ सेठ हमें लिखते रहना।
इस तरह से हमें हमेशा ही, नरसी जी, याद करते रहना।।
तीरथ करके साधू जन वापिस, जूनागढ़ की तरफ चले।
साँवल शाह की चिट्टी देने को, नरसी जी के घर पहुँचे।

सब हाल सुनाया साँवलशाह का, नरसी जी को खुश होकर।
सुनकर सब रह गये अपने प्रभु के, ध्यान में नरसी जी खोकर।।
साँवलशाह की चिट्ठी लेकर, सिर और आँखों से लगाते रहे।
और प्रेम में मग्न हुये गुणवाद, प्रभु के मुख से गाते रहे।।
यों अपने भक्तों की भगवान जी, लाज हमेशा रखते हैं।
जो उनके ही हो रहते हैं, सिद्ध उनके कारज करते हैं।।
भगवान के सच्चे भक्तों को, दुनियां में किसी का क्यों भय हो।
सब कहो प्रेम से ऐसे भक्तों और भगवान की जय जय हो।।

जीवन एक अनमोल रतन है

मानुष जीवन अनमोल रत्न है, इस सम कोई लाल नहीं।
कर्महीन है जग में वह प्राणी, जो करता इसकी सँभाल नहीं।।
चाहे कितना हो बुद्धिमान, गर जन्म रत्न की न परख करी।
सतसंग किया न नाम जपा, बिन बन्दगी ज़िन्दगी व्यर्थ करी।।
अकलमन्द कहलाने का, वह दुनियाँ में हकदार नहीं।
चौरासी में भटकेगा फिर फिर, गर गुरुभक्ति से प्यार नहीं।।
अब भी गर नाम कमाया न, जीवन व्यर्थ में जायेगा।
फिर हाथ नहीं कुछ आयेगा, सिर धुन-धुन कर पछतायेगा।।
यह मर्ज़ लगा है जन्मों का, विषयों की हरदम चाह करे।
दिन रात विषय रस पी पी कर, क्यों हीरा जन्म तबाह करे।।
तू भूल के अपने मकसद को, नुकसान करे क्यों अकसर है।
मालिक का अंश तू हो करके, माया का बनता चाकर है।।
गफलत अज्ञान का पर्दा तो, आँखों पर तेरे छाया हुआ।
अब चेत ज़रा गाफिल बन्दे, क्यों तबाही पे आया हुआ।।
जिसने है धरती पर जन्म लिया, किसी का नहीं ठिकाना है।
बच्चा बूढ़ा और जवान, सब ने ही कूच कर जाना है।।
जाना तो सब ने है इक दिन, पर दाना वह कहलाता है।
भक्ति नाम का सच्चा धन, जो संग में लेकर जाता है।।
जीवन की गाड़ी में बैठकर, जिसने भक्ति कमाई है।
सीधी राह पर चले वह गाड़ी, उसने ही मन्ज़िल पाई है।।
जो नाहक वक्त गँवाते हैं, वे रो रो कर पछताते हैं।
सतसंगत में जो जायें नहीं, वे आखिर धोखा खाते हैं।।
वे भक्ति भजन में लीन रहें, जो सतसंग के प्रेमी होते हैं।
निजधाम का वे सामान करें, नेकी का बीज जो बोते हैं।।

वे सतगुरु की संगत में आकर, आध्यात्मिक उन्नति करते हैं।
जीवन में शाश्वत आनन्द भरें, नहीं कर्म काल से डरते हैं।।
जैसे कोई इक राजा था, था सतसंगी और न्यायकारी।
प्रभु भक्ति का इच्छुक था, और सन्तों का था सेवाकारी।।
राजा तो था भक्ति अभिलाषी, पर पत्नी थी मायाधारी।
दोनों में भारी अन्तर था, प्रभु की लीला यह थी न्यारी।।
नास्तिक बुद्धि थी वह रानी, उसको था रूप का मद भारी।
राज्य के मद में चूर थी वह, हर समय ऋंगार की थी प्यारी।।
खाना पीना वस्त्राभूषण, उसे ये ही काम सुहाते थे।
आरति पूजन हरिनाम भजन, ये कार्य उसे न भाते थे।।
रानी की ऐसी अवस्था तो, राजा के मन को चुभती थी।
वे जब भी कहते भक्ति की बात, नहीं रानी के मन खुबती थी।।
अनेकों ही बार वे समझाते, रानी भक्ति रस पा ले तू।
शुभ कर्मों से उपलब्ध हुआ, ये जीवन सफल बना ले तू।।
नर तन के बराबर जन्म कोई, नहीं जग में और कहलाता है।
महामूढ़ है जग में वह प्राणी, जो ऐसा जन्म गँवाता है।।
मानुष तन में न भजन करे, चौरासी भटका खाता है।
जब लाल चला गया हाथों से, सिर धुन धुन कर पछताता है।।
मानुष जन्म है कल्प-वृक्ष, जो चाहो सोई मिल जाता है।
जो सार वस्तु से प्यार करे, दरगाह में इज़्ज़त पाता है।।
दुनियाँ में सार वस्तु केवल, सच्चे सतगुरु की भक्ति है।
संसार के सकल क्लेशों से, मिल जाये जीव को मुक्ति है।।
हीरे रत्न जवाहर से बढ़कर, गुरु भक्ति की महिमा गाई है।
इस बिन लोक परलोक में रानी, किसी ने भी खुशी न पाई है।।
इस कदर समझाने पर भी, रानी पर कुछ न असर हुआ।

उत्तर दिया जब भगवत कृपा से, मानुष तन उपलब्ध हुआ।।
फिर क्यों न इसका ऐ राजन, कुछ तो लाभ उठा लें हम।
ऐश्वर्य प्राप्त करने पर, वाज़िब है मौज उड़ा लें हम।।
कितने असंख्य ही भोग पदार्थ, उस ईश्वर ने जब दे ही दिये।
फिर हमरे होंगे मन्द भाग, जो हमने उनके न मज़े लिये।।
कितना बड़ा साम्राज्य दिया, और सुन्दर रूप भी साथ दिया।
बेशक बड़ा एहसान किया, जो ऐसा अवसर प्रदान किया।।
पर ये अवसर है खाने पीने का, और दुनियाँ में मौज उड़ाने का।
अभी से परलोक की चिन्ता क्या, अभी तो काफी वक्त पड़ा।।
भजन सुमिरण भी कर लेंगे, अभी से काहे की है जल्दी।
गोया राजा की बातों पर, रानी ने फेर दी इकदम हल्दी।।
अफसोस है तेरी बुद्धि पर, इतना कह कर फिर कहते हैं।
क्या खबर है तुमको ऐ प्यारी कि स्वाँस अब कितने रहते हैं।।
भरोसा क्या इस जीवन पर, इसका अन्त कब हो जाये।
भक्ति भजन और पूजन की, फिर घड़ी हाथ आये न आये।।
तेरा कहना है इस प्रकार, कि यौवन काल के जाने पर।
भक्ति कारज सिद्ध कर लेंगे, आखिर में बुढ़ापा आने पर।।
यह भूल है तेरी ऐ रानी, जो समय को तू नहीं परख रही।
क्योंकि इस जीवन की घड़ियाँ तो, धीरे-धीरे हैं सरक रहीं।।
इन पर तो विश्वास नहीं, बुढ़ापे तक हम रहें न रहें।
स्थिरता नहीं इन स्वाँसों की, क्या जाने हम कल तक रहे न रहें।।
सन्त सहजोबाई का कथन भी, हमको साफ साफ बतलाता है।
देह से प्राण निकलने पर, सिर धुन-धुन कर पछताता है।।
मन की मन में ही रहती, बाहर की बाहर ही रह जाये।
जब आत्मा ने देह को त्याग दिया, तब खाक की ढेरी रह जाये।।

इसी वक्त के अन्दर ही जिसने, अपना काम सँवार लिया।
उसने ही तो सही मानों में, रत्न जन्म का लाभ लिया।।
राजा की यथार्थ सुन शिक्षा, रानी पर फिर भी न असर हुआ।
सन्मार्ग इसे दिखाना है, निशदिन राजा को फिक्र हुआ।।
सोच सोच कर राजा के, आखिर चित में बात आई।
मेरे लाख बार समझाने पर, जब रानी नहीं तनिक समझ पाई।।
तो बेहतर है मुझे एक बार, गुरु चरणों में जाना चाहिये।
रानी का हाल सुना करके, आदेश उनका लाना चाहिये।।
ऐसी ही दृढ़ संकल्प किया, और गुरु दर्शन को चल दिया।
पहुँचा जब श्री चरणों में, रानी का वृतान्त सुना ही दिया।।
तब श्री गुरुदेव ने फरमाया, अच्छा राजन कल आयेंगे।
वहीं आप के घर पर आ करके रानी को राह पे लायेंगे।।
बस दूसरे ही दिन गुरुदेव जी, राजमहल में पधारे हैं।
रानी और राजा ने आदर से, गुरु के चरण पखारे हैं।।
भोजन का फिर प्रबन्ध किया, तब गुरुदेव ने फरमाया।
भोजन फिर आकर पायेंगे, कुछ घूमने का है विचार आया।।
तुम भी चलो हमारे साथ, राजा और रानी दोनों ही।
कुछ भी आवश्यकता नहीं, नौकर को साथ ले चलने की।।
गुरुदेव के साथ ही वे दोनों, एक खेत पर जाते हैं।
जो पकने को तैयार था, ही कुछ देर वहीं रुक जाते हैं।।
फिर कहा गुरुदेव ने ऐ रानी, एक काम तुम्हें बतलाते हैं।
हम किनारे किनारे से चलकर, उस पार तुम्हें मिल जाते हैं।
और खेत के अन्दर से होकर, तुम भी उस पार को आ जाना।
यदि पकी बालियाँ मिलें तुम्हे, कुछ तोड़ के साथ में ले आना।।
रानी ने कहा बहुत अच्छा, यह कहकर खेत में जाती है।

जब खेत के बीच गई रानी, तो पकी बालियाँ पाती है।।
मोती सी पकी बालियाँ देख, विचार में यूँ पड़ जाती है।
गुरुदेव की खातिर लेकर चलूँ, पर खेत तो काफी बाकी है।।
यहाँ कौन बोझ ढोये इतना, कुछ आगे चलकर देखूँगी।
आगे भी तो मिल जायेंगी, अच्छी सी बालियाँ तोड़ूँगी।।
कुछ कदम चली आगे रानी, देखा तो बालियाँ अच्छी नहीं।
रानी ने विचार किया मन में, यह तो गुरुदेव के योग्य नहीं।।
शायद आगे चलकर ही, कुछ अच्छी बालियां मिल जायें।
वहीं से ही गुरुदेव की खातिर, अच्छी सी बालियाँ तोड़ी जायें।।
पर आगे चलकर क्या देखा, सभी बालियाँ हैं कच्ची।
रानी आगे ही बढ़ गई, शायद आगे कुछ हों पक्की।।
इसी तरह चलते चलते, खेत ही सारा समाप्त हुआ।
रानी वहाँ पर जा पहुँची, गुरुदेव सहित राजा था खड़ा।।
रानी की प्रतीक्षा में थे खड़े, गुरुदेव और राजा दोनों ही।
देखा जब खाली हाथ उसे, गुरुदेव ने पूछा क्यों रानी।।
हमने तो तुमसे कहा था यह, ले आना गेहूँ की पकी बाली।
तुम खाली हाथ चली आई, क्यों नहीं लाई हो बाली।।
क्या खेत में बालियाँ पकी नहीं, या तुम तोड़ के लाई नहीं।
क्यों खाली हाथ चली आई, यह बात समझ में आई नहीं।।
तब सीस झुका कर रानी ने, कर जोड़ के इस तरह विनती की।
अच्छी से अच्छी बालियाँ थीं, पर मैं ही तोड़ के ला न सकी।।
कारण उसका गुरुदेव है यह, जब खेत के मध्य में मैं पहुँची।
अच्छी और पकी बालियों पर, बेशक यह मेरी दृष्टि पड़ी।।
पर विचार यह मन में ले आई, अभी खेत तो काफी शेष पड़ा।
चल करके आगे तोड़ूँगी, यह सोच के उन्हें नहीं तोड़ा।।

लेकिन जब आगे बढ़ी तो मुझको, बालियाँ वैसी न प्राप्त हुईं।
इसलिये नहीं तोड़ा उनको, वे आप के योग्य नहीं समझीं।।
बस यही विचार लिये मन में, कि आगे मिल जायेंगी पक्की।
लेकिन सब कच्ची ही पाईं इस कारण ही मैं ला न सकी।।
अफसोस वहीं से ही क्यों न, मैं बालियाँ तोड़ के ले आई।
बेहतर से बेहतर बालियाँ थीं, मैं क्यों न झोली भर लाई।।
आज्ञा दो गुरुदेव मुझे, अब लौट के खेत में जाती हूँ।
अच्छी पक्की बालियों से, झोली भर कर लाती हूँ।।
बोले गुरुदेव सुनो रानी, समय न लौट कर आता है।
जो आज का काम कल पर छोड़े, वह रह रह कर पछताता है।।
आज की घटना पर रानी, मन में तनिक विचार करो।
जीवन एक अनमोल रत्न है, इसे विषयों में न ख्वार करो।।
यह सुन्दर स्वर्णिम अवसर है, गेहूँ का खेत इसे समझो।
बचपन और बुढ़ापा दोनों, बमिसल किनारों के समझो।।
यौवनावस्था है मध्य इसका, इसमें ही लाभ लिया जाये।
भक्ति रूपी बालियों को, इसी मध्य में ही तोड़ा जाये।।
जितना भी चाहो जी भर कर, मालिक से प्यार बढ़ा लो तुम।
इस यौवनावस्था में रानी, भक्ति का धन कमा लो तुम।।
जब बुढ़ापा सिर पर आ धमका, ते कैसे नाम ध्याओगी।
जब सभी नाड़ियाँ मुरझा गईं, तो हाथ मल पछताओगी।।
बेहतर है अभी से ही रानी, परलोक का अपने फिक्र करो।
दिल में ध्यान करो सतगुरु का, और मुख से उनका ज़िक्र करो।।
वृद्ध अवस्था आने पर, शरीर शिथिल हो जाता है।
उस अवस्था में मानुष शुभ कर्म नहीं कर पाता है।।
तुम अभी से ही बस जुट जाओ, और उत्तम कर्म करो जी भर।

प्रभु नाम की पूँजी लेकर ही, जाना उज्जवल मुख प्रभु के घर।।
दरबार में जाकर मालिक के, तुम को न लज्जित होना पड़े।
यह वक्त गवाँ कर हाथों से, आगे चल कर न रोना पड़े।।
जैसे कि खेत समाप्त हुआ, तो हाथ में कुछ भी आया नहीं।
आनाकानी करते करते , अफसोस बिना कुछ पाया नहीं।।
फिर क्योंकर तुम यह कहती हो, बुढ़ापा जबकि आयेगा।
अब ऐश मैं कर लूँ जी भरकर, फिर नाम भी ध्याया जायेगा।।
लेकिन इसका विश्वास है क्या, कि बुढ़ापे तक तुम जीओगी।
गर मौत ने आकर घेर लिया, तो गम के आँसूँ पीओगी।।
यूँ ही कल कल करते करते, जब अन्तकाल आ जायेगा।
तब पछताने के सिवा कुछ भी, तुम्हारे हाथ न आयेगा।।
यह हाल सभी जग जीवों का, जो कल कल करते जाते हैं।
जब समय हथ से चूक गया, फिर रो-रोकर पछताते हैं।।
यह गलती है बहुत भारी, जो अकसर ऐसा कहते हैं।
बुढ़ापे में नाम ध्यायेंगे, वे आखिर में दुःख सहते हैं।।
बचपन को गवाँये खेलकूद, यौवन विषयों में नष्ट करें।
बुढ़ापे में कुछ हो न सके, फिर कैसे भजन का कष्ट करें।।
पर सन्त करुणामय होते हैं, जो सही राह दिखाते हैं।
ममता तृष्णा में जकड़ों को, बन्धन से आन छुड़ाते हैं।।
वे जगाते ऐसे जीवों को, जो मोह माया मे खोये हुए।
गफलत के परदे तान तान, जो हैं प्राणी सोये हुए।।
सतपुरुषों के उपकार हैं ये, वे इस प्रकार समझाते हैं।
काम वह अपना कर जाते, जो समय नहीं गँवाते हैं।।
ऐ जीव जो समय गुज़र गया, अब उससे ख्याल हटा ले तू।
बाकी जो समय रहा तेरा, सेवा-भजन कमा ले तू।।

सन्तों की संगति में आकर, उनसे नव जीवन पा ले तू।।
जो तेरा परम हितैषी है, गुण उस मालिक के गा ले तू।।
हैं सन्त ही सच्चे मीत तेरे, तेरी हानि उन्हें गवारा नहीं।
तू आज्ञा मौज मे चल उनकी, फिर देखे यम का द्वारा नहीं।।
वे पूर्ण ब्रह्म परमेश्वर हैं, और सकल गुणों की खानि हैं।
जीवों को ब्रह्म कर डारत हैं, वे सह न सकें तेरी हानि हैं।।
वे अतुल भक्ति के दानी हैं, और दया क्षमा के पुँज हैं वे।
ऐ जीव तू पा ले भक्ति को, भक्ति से भरे निकुंज हैं वे।।
गुरुदेव के वचनों को सुनकर, रानी को आ वैराग गया।
गुरुदेव की अनुकम्पा से ही, रानी का मुकद्दर जाग गया।।
लेकर दीक्षा गुरुभक्ति की, वह जीवन सफल बनाने लगी।
गुरुदेव के भजन और सुमिरण में, जीवन की घड़ियां बिताने लगी।।
सतगुरु की अदभुत महिमा है, किस मुख से जीव ब्यान करे।
निगमागम भी सब मूक हुये, फिर कैसे जीव बखान करे।।

केवट प्रसंग

माँगी जो नाव ते नाविक ने, कीं शुरु चोंचले की बातें।
कुछ नहीं थीं लेकिन सब कुछ थीं मल्लाह मनचले की बातें।।
प्रभु बोले-नाव यहाँ लाओ, वह बोला-लाता हूँ राजा।
आया हाँ आया अब आया, आता अब आता हूँ राजा।।
प्रभु बोले जो बात हो, कहो उसे जी खोल।
आया आया इस तरह, करो न टालमटोल।।
तब केवट कहने लगा, सकुचाहट के साथ।
कहना तो है बात पर, कही न जाती नाथ।।
अच्छा सरकार पूछते हैं, तो कहता हूँ संशय अपना।
भय-भंजन मेरे सम्मुख हैं, तो क्यों रहने दूँ भय अपना।।
यह सुना है मैं ने जादू है, राजा जी के पदपंकज में।
पत्थर में जान डालने की, है शक्ति महान चरण रज में।।
बन गई शिला सुन्दर नारी, चरणों की धुरि के लगते ही।
जड़ में चेतनता आती है, उस जीवन मुरि के लगते ही।।
चरणों के रज का यह प्रभाव, जब पत्थर और शिला पर है।
तो मेरी लकड़ी की नैया, छूते ही बस छू मन्तर है।।
मन्द मन्द मुस्काय कर, बोले श्री रघुराय।
अपने संशय नाश का, तुम्हीं बताओ उपाय।।
केवट ने तब अर्ज़ की, नीचा कर कुछ माथ।
है तो एक उपाय यदि, स्वीकारें रघुनाथ।।
अपना-मेरा दोनों ही का, यूँ काम बना लें राजा जी।
चरणों की रज पर संशय है, वह रज धुलवा लें राजा जी।।
सेवक की रोज़ी बनी रहे, बाधा न आपके काम में हो।
हो कृपा राम की केवट पर, केवट का प्रेम राम में हो।।

कोमल पद कमलों का मल धो, निर्मल दोनों को कर लूँगा।
ये भी गोरे चिट्टे होंगे, अपने भी जी को भर लूँगा।।
मालिक, मालिक, स्वीकार करो, तो अभी कठौता लाऊँ मैं।
पहले लूँ जाँच कठौते को, तब नौका को खिसकाऊं मैं।।
प्रेम भरे आदर भरे, भाव भरे सुन बैन।
करुणानिधि सचमुच हुए, उस क्षण करुणाऐन।।
पुलकायमान था रोम रोम, ओठों पर मन्द हँसन भी थी।
जानकी लखन की ओर निरख, कुछ भेद भरी चितवन भी थी।।
मानो कहते थे दोनों से, यह बात तुम्हें भी प्यारी हो।
तो फिर जो चीज़ तुम्हारी है, उसका यह भी अधिकारी हो।।
था एक और संकेत यहाँ इसने वे चरण टटोए हैं।
जो ब्याह समय सीता को दे, मिथिलेश जनक ने धोए हैं।।
हो गया गुप्त प्रस्ताव और, अनुमोदन तथा समर्थन भी।
तब चरण धुलाने को आगे, बढ़ आये कौशल नन्दन भी।।
कहा तुम्हारा जाय यदि, संशय इसी प्रकार।
तो हम भी तैयार हैं, लो यह चरण पखार।।
मनचीता जब मिल गया, केवट को वरदान।
पगधोने का तब किया, पल भर में सामान।।
वह खास दृश्य था गंगा पर, गंगा भी जिससे पुलकित थी।
नभमण्डल उधर मुदित मन था, पृथ्वी भी इधर प्रफुल्लित थी।।
हाज़िर थे एक कठौते में, गंगा और गंगा जल दोनों।
केवट के दोनों हाथों में, थे कोमल चरण कमल दोनों।।
उन चरणों का मल क्या धोया, धोया सेवक ने मल अपना।
करलिया जन्मजन्मान्तर सब,उस केवट ने उज्जवल अपना।।
जो चरण अनेकों तप करके,मुनियों को दृष्टि नआते हैं।

क्या दृश्य है वे केवट द्वारा, इस प्रकार धोये जाते हैं।।
जिसके भीतर भरा है, प्रेम भक्ति भंडार।
उस केवट के भाग्य का, किसने पाया पार।।
टेर लिये परिवार के सारे नातेदार।
चरणोदक से कर दिया, उनका भी उद्धार।।
राघव थे खड़े कठौते में, वह एक एक पग धोता था।
इसका कुछ ध्यान नहीं उसको, अतिकाल कार्य में होता था।।
राघव बोले-शीघ्रता करो,वह बोला-कैसे छोड़ूँ मैं।
संशय जब तक धुल जाय नहीं, धोऊँगा जी भर भर के मैं।।
अधिकार इस समय मेरा है, मैं उसे न खोऊँगा राजा।
अब यह मुझ पर ही निर्भर है, कब तक पग धोऊँगा राजा।।
सम्पूर्ण धूलि जब धो लूँगा, मन का सन्देह मिटा लूँगा।
तब स्वंय छोड़ दूँगा इनको, प्रभु को भी पार लगा दूँगा।।
प्रभु बोले-समझो, ज़रा, समय हो रहा नष्ट।
एक पाँव हम खड़े हैं, इसको भी है कष्ट।।
हैं कष्ट आपको, कष्ट नाथ गद्गद् होकर वह बोल उठा।
मानो मौनी मल्लाह भक्त, इस समय हृदय कुछ खोल उठा।।
कह उठा कष्ट का भी, उपाय, राजाधिराज सेवक पर है।
स्वीकार करें मेरी विनती, तो कष्ट न फिर रत्ती भर है।।
जो आप का जँघाओं तक है, वह हाथ उठाओ नाथ अपना।
रखो मुझ सेवक के सिर पर, राजा जी वही हाथ अपना।।
लक्ष्मण सीता कह उठे धन्य, कह उठे तब धन्य शंकर भी।
धो रहा चरण कमलों को वह, रखवाया हाथ शीश पर भी।।
इस प्रकार जब कर चुका, नाविक निज उद्धार।
तब तीनों को नाव पर, उसने किया सवार।।

जी भर कर दर्शन करने को, धारा ठहराई गंगा ने।
भगवान के चढ़ते ही सिर पर, वह नाव उठाई गंगा ने।।
तस्वीर नाव की लेते ही, उपमा यह सन्मुख आई है।
सोने की मुंदरी पर मानों, हीरे ने शोभा पाई है।।
चलती है राजवधु सी वह, बिछ रहा बिछौना जल का है।
त्रिभुवनभर का है भार किन्तु,वह भार कमल से हल्का है।।
आँखों उस छवि को देखो तो, जो आज नाव पर छाज रही।
तख्तों पर राम दाहिने हैं, बायें मैथिली विराज रहीं।।
स्वामी स्वामिनी के कुछ समीप, पीछे को थोड़ा हटे हुए।
कन्धे पर डाले हुये धनुष, उर्मिलानाथ हैं डटे हुए।।
मन्द मन्द गति से इधर, चली जा रही नाव।
उधर सूर्य और मेघ में, है दर्शन का चाव।।
सूरज ने कहा बादलों से, इस छवि को हमें निरखने दो।
क्यों तुम बीच में आये हो, हट जाओ दर्शन करने दो।।
उत्तर में बादल गरज उठे, मत बको कौन हो टोक रहे।
हम दर्शन करने आये हैं, दर्शन से हमको रोक रहे।।
तब कहा सूर्य ने दर्शन का, पहले हक नहीं तुम्हारा है।
हैं सूर्यवंश में रामचन्द्र, इससे अधिकार हमारा है।।
बादल बोले रहने भी दो, ये फिकरे नहीं ढंग के हैं।
हक तुम से ज्यादा हम को है, हम दोनों एक रंग के हैं।।
वे भी घनश्याम कहाते हैं, हम भी घनश्याम कहाते हैं।
इस श्याम रंग के नाते से, हम एक बखाने जाते हैं।।
बढ़ गई रार तो हवा चली, उसने यूँ बीच बचाव किया।
थोड़ा थोड़ा मौका देकर, दोनों का पूरा चाव किया।।
इधर नाव खे रहा था, वह प्रेमी मल्लाह।

जिसके मन का प्रेम था, जल सदृश अथाह।।
हैं राम बली जब नौका पर, बल्ली की कौन ज़रूरत है।
माँझी डर मत मँझधारा में, जाने की आज न सूरत है।।
भय तो उस समय नाव को है, जब उसका खेवनहार न हो।
बैठे हैं जब वे बेड़े पर, तो कैसे बेड़ा पार न हो।।
मल्लाह विचार रहा था यह, इतने में मेघ लगे छाने।
मौसम का ऐसा रंग देख, माँझी कुछ लगा गुनगुनाने।।
जल और जलद के बीच वहाँ गाने ने खुला समाँ बाँधा।
तानों मुर्कियों अलापों ने, नौका पर बड़ा समाँ बाँधा।।
था राग न कोरा मेघराग, अनुराग विराग भरा था वह।
खुलते ही अधर कमल देखा, पद-पदम-पराग भरा था वह।।
वैसे ते हवा थी बरसाती, पर उसमें असर और ही था।।
स्वर के चढ़ाव के साथ साथ,भीतर कुछ चसकऔर ही था।
सारांश धार में गंगा की, जब बल्ली लगा चलाने वह।।
तो पुरवा पछवा देख देख, स्वर छेड़ उठा मस्ताने वह।।
इधर चतुर मल्लाह की, पूरी हुई मल्हार।
जा पहुँची नौका, उधर, गंगा जी के पार।।
सीता और लक्ष्मण के समेत, पृथ्वी के नाथ उतर आये।
अब तक भीतर थे सत रज तम, अब भीतर से बाहर आये।।
केवट ने उतर विदा माँगी, तीनों को शीश नवा करके।
भगवान उस समय मन ही मन, रह गये ज़रा सकुचा करके।।
यद्यपि बनवासी हुये नाथ, फिर भी स्वभाव राजा का है।
हीरा हीरा ही है चाहे, मिट्टी में आज छिप गया है।।
आदत तो वही राजसी है, किस तरह त्याग दें राम उसे।
जिसने भी कोई सेवा की, फौरन दे दिया इनाम उसे।।

लेकिन अब देने को क्या है, है पास फकत मुनियों का पट।
कुछ दिया नहीं दे सके नहीं, बस इतनी सी है सकुचाहट।।
जान गई हृदयेश्वरी, हृदयेश्वर की बात।
अर्द्धांगिनी है वही, जो समझे मन की बात।।
अपने स्वामी की सकुचाहट, जिस समय निहारी सीता ने।
अँगुली से अपनी मणि मुँदरी, उस समय उतारी सीता ने।।
भगवान के हाथों में देकर, यह कहा दीजिएगा इसको।
जैसे भी हो हे प्राणेश्वर, सन्तुष्ट कीजिएगा इसको।।
सीता की मुंदरी लगे, देने सीता नाथ।
तभी कहा मल्लाह ने, सादर ना कर माथ।।
मज़दूरी तो मैंने अपनी, हे नाथ पेशतर ले ली है।
और वह भी अपनी मुँह माँगी, अपना जी भर कर ले ली है।।
चरणों की रज जो धोई थी, वह क्या थी मज़दूरी थी वह।
जीवन भर की मज़दूरी थी, बस ऐसी मज़दूरी थी वह।।
कोटानुकोट जन्मों की भी, मज़दूरी उस पर वारी है।
हे नाथ एक कण पर उसके, वैकुण्ठ लाख बलिहारी है।।
चुक गई मज़दूरी जब मेरी, तो रहा आप पर भार नहीं।
उद्धार हो गया जब मेरा, तो कौड़ी रही उधार नहीं।।
विह्वल कुछ कुछ हो चला, प्रभु का कोमल गात।
तभी चतुर मल्लाह ने, कही दूसरी बात।।
मैं ने जो नैया पर गाया, वह गाना एक इशारा था।
इकरार वहीं मन ही मन में, कुछ मेरा और तुम्हारा था ।।
मेरा घर है सुरसरि के तट, तुम रहते जग-जलनिधि तट हो।
मैं गंगा घाट का माँझी हूँ, तुम भवसागर के केवट हो।।
मज़दूर कहीं मज़दूरों को, मज़दूरी देते हैं भैया।

मल्लाह कहीं मल्लाहों से, मल्लाही लेते हैं भैया।।
अपने को ऋणी समझते हो, तो ऋण तुम वहीं चुका देना।।
मैने है तुम को पार किया, तुम मझ को पार लगा देना।।
अब प्रभु गदगद हो गये, पुलकि उठा सब गात।
तब छेड़ी मल्लाह ने, वहीं तीसरी बात।।
तुम हुये नृपति से बनवासी, यह समय न कुछ देने का है।
इस अवसर पर देना लेना, कब सजता है कब जँचता है।।
जब चौदह वर्ष पूरण होंगे प्रभु लौट कुशल से आयेंगे।
उस समय नाथ मैं ले लूँगा, जो कुछ मुझको दे जायेंगे।।
देखो केवट की चतुराई, किस गहराई में जाता है।
पहले परलोक सुधार लिया, अब यह भी लोक बनाता है।।
मतलब यह है बन से लौटें, तब भी ये इसी घाट आयें।
उस पार भी मेरे ही द्वारा, मेरी ही नैया पर जायें।।
जिस तरह सुलभ दर्शन हैं अब, तब भी ये इसी तरह पर हों।
जल भी हो और कठौता भी, ये चरण हों और मेरे कर हों।।
मानो सेवक ने सब प्रकार, स्वामी को ऋणी बनाया है।
जो भव बन्धन में नहीं बँधा, वह इस बन्धन में आया है।।
दशरथ कौशल्या ने बाँधा, तप करके जिसको नातों में।
क्या बात उसे ही बाँधा है, केवट ने बातों बातों में।।
यह प्रेम भाव यह स्वार्थ त्याग, जो कुछ भी है वह पूरा है।
झुकता है यहाँ कलम अपना, रहता मज़मून अधूरा है।।
इतना ही यहाँ लिख देते हैं, बस धन्य धन्य वह केवट है।
वह नाव धन्य पतवार धन्य, अत्यन्त धन्य गंगा तट है।।
हृदय लगाकर राम ने, नाना भाँति सराह।
भक्ति दान देकर किया, विदा चतुर मल्लाह।।
गुह निषाद जो साथ था, बोल उठा बलिहार।
देख चरित उस भक्त में, छाया हर्ष अपार।।

सन्त रविदास जी व पीपा जी

आज स्मरण हो आई है, ऐतिहासिक एक कहानी हमें।
राजा पीपा था प्रेमी भक्त, उसका इतिहास सुनायें तुम्हें।।
भक्ति भाव व प्रभु प्यार था, दिल में उसके भरा हुआ।
महापुरुषों के दर्शन पाऊँ, दिल में विचार यह प्रकट हुआ।।
उस समय के पूर्ण महापुरुष, सन्त रविदास जी प्यारे थे।
फैली थी उनकी बड़ी महिमा, रहते दुनियाँ से न्यारे थे।।
राजा ने भी कई लोगों से, थी उनकी सुनी महिमा भारी।
दर्शन करने को राजा ने, दिल में धारणा थी धारी।।
उनकी है बहुत ही छोटी ज़ात, मन में विचार यह उसके उठा।
किस तरह से हल हो मसला यह, कैसे दर्शन मैं करूँ उनका।।
वहाँ जाने पे चर्चा करेंगे सब, चाल थी यह मूज़ी मन की।
ऐ राजन तू तो क्षत्रीय है, और अछूत जात है सन्तन की।।
भक्तिभाव सम्पन्न था यद्यपि, इस का था पूरा उसको यकीं।
जो हरि को भजे हरि को प्यारा, वहाँ जात पात का भेद नहीं।।
फिर भी उस ख्याल के कारण से, वह गया नहीं दर्शन करने।
यद्यपि दिल में थी चाह बड़ी, नहीं जाने दिया पापी मन ने।।
आखिर बहुत सोचने पर, दिल में विचार यह आया है।
रात्रि के समय मैं करुँ दर्शन, यह पक्का ख्याल बनाया है।।
मन में यह सोच करके उसने, दिन जैसे तैसे बिताया है।
फिर करी तैयारी राजा ने, रात्रि का समय जब आया है।।
दर्शन को राजा पहुँच गया, कुटिया में उसने प्रवेश किया।
रविदास जी को देख समाधी में, इन्तज़ार में राजा बैठ गया।।
जब खुली समाधि सन्तों की, उसे सामने बैठे पाया है।
आओ राजन कैसे आए, सन्तों ने वचन फरमाया है।।

राजा ने तब नतमस्तक हो, दिल का सब हाल सुनाया है।
कृपा करो प्रभो मेहर करो, यह दास शरण में आया है।।
सतपुरुष दयालू होते हैं, वे दया ही करने आते हैं।
जिस पर नज़र मेहर की करें, वारे न्यारे हो जाते हैं।।
फिर मौज में आकर सन्तों ने, राजा की तरफ निहारा है।
कठौती में से ले करके जल, किया उसकी तरफ इशारा है।।
लो श्री भगवान का चरणामृत, तुम इसको ग्रहण करो प्यारे।
इसको पी करके ऐ राजन, तुम जीवन सफल करो प्यारे।।
देखो इन्सान का मन मूज़ी, यह कैसे ख्याल उठाता है।
धोखा यह देता है कैसे, मनुष्य को कैसे भरमाता है।।
अमृत लेकर सोचा उसने, इसे मुख में कैसे डालूँ मैं।
कठौती वाला पानी पीकर, क्या जीवन भ्रष्ट बना लूँ मैं।।
यह सोच के अमृत पिया नहीं, कुरते के बाज़ू में उड़ेल लिया।
फिर आया राज महल वापिस, तब अदभुत था इक खेल हुआ।।
दूजे दिन राजा का कुरता, धोबी घर धुलने आया है।
उस कुरते के बाज़ू पे लगा, नहीं दाग छूटने पाया है।।
धोबी की लड़की ने मुँह से, चूस के दाग हटाना चाहा।
ज्यों ही बाज़ू चूसा उसने, उसको हुआ दर्शन श्री प्रभु का।।
खुल गई दिव्य दृष्टि उसकी, भूत भविष्य का करने ब्यान लगी।
वह अपनी अनोखी बातों से, लोगों को करने हैरान लगी।।
सुरति चढ़ गई उस लड़की की, श्री प्रभु से सीधा तार मिला।
दर्शन करने उस लड़की के, शहर का हर इन्सान चला।।
धोबी की लड़की के बारे, समाचार मिला जब राजा को।
तत्काल ही फिर उस लड़की से,मिलने को चल दिया राजा वो।।
राजा उस धोबी के घर पर, खुद पैदल चल कर आया है।

आते हुए देख के राजा को, लड़की ने शीश झुकाया है।।
राजा बोला ऐ बेटी सुन, आया हूँ मैं कुछ पूछने को।
है बात यह क्या बिल्कुल सच्ची, शहर के लोग कहते हैं जो।।
है बात अगर सच्ची तो बता, यह शक्ति कहाँ से आई है।
अन्तर्दृष्टि जो खुली तेरी, यह दात कहां से पाई है।।
लड़की तब हाथ जोड़ बोली, राजा जी बात यह है सच्ची।
जो कुछ भी मैने पाया है, करामात है आपके कुरते की।।
सुन करके बात यह लड़की की, राजा मन में हैरान हुआ।
मैं समझ नहीं पाया कुछ भी, तुम साफ साफ बतलाओ ज़रा।।
लड़की ने कहा जब धुलने को, यहां कुर्ता आपका आया है।
बाज़ू पर उसके दाग लगा, किसी तरह न छूटने पाया है।।
वह दाग छुड़ाने की खातिर, मैंने बाज़ू को चूसा जब।
खुल गई दिव्य दृष्टि मेरी, श्री प्रभु का दर्शन पाया तब।।
यह सुन राजा को याद आया, सन्तों ने दिया चरणामृत जो।
पीने की बजाय वह अमृत, बाज़ू में उँडेल दिया था वो।।
यह सोच के राजा मन ही मन, तब बहुत बहुत घबराने लगा।
वह लगा धिक्कारनेअपने को,करनी पर फिर पछताने लगा।।
तब त्याग के लोक लाज राजा, सन्तों के द्वारे आया फिर।
अपनी करनी का सब उसने, रो-रोकर हाल सुनाया फिर।।
रविदास जी बोले ऐ राजन, नहीं समय यह बार बार मिलता।
जब फूल गिर गया डाली से, हरगिज़ हरगिज़ वह नहीं खिलता।।
ऐ राजन आये थे जब तुम, वह समय बड़ा ही न्यारा था।
वैकुण्ठ का देख रहे थे हम, सुन्दर और दिव्य नज़ारा था।।
प्रभु की लीलायें देख के जब, आए वैकुण्ठ से उतर के हम।
पृथ्वी पर आते ही हमको, सर्वप्रथम नज़र आये थे तुम।।

हमने तब मौज में आ तुमको, धुरधाम का था परसाद दिया।
पर मन का कथन मान राजन, तुमने उसका तिरस्कार किया।।
ऐ राजन अपनी कमाई से, हमने था तुम्हें निहाल किया।
लेकिन मन के धोखे में आ, तुमने नही समय से लाभ लिया।।
अब परिश्रम और यतन करके,प्रभु नाम की करो कमाई तुम।
जो शेष बचा है समय उसमें,अब करो न लापरवाही तुम।।
अब भी कुछ नहीं बिगड़ा प्यारे, यदि पल पल नाम ध्याओगे।
आशा पूरी होगी दासा, तुम प्रभु का दर्शन पाओगे।।

रांका बांका

अब कथा सुनाता हूँ इक मैं, प्रभु के दो सच्चे प्रेमियों की।
भक्ति पथ के साधक के लिए, आदर्श रूप जिनकी ज़िन्दगी।।
पति पत्नि थे दोनों प्रेमी, था नाम उनका रांका बाँका।
इक गाँव के बाहर झोंपड़ी में, बस था निवास उन दोनों का।।
जीवन था उनका अति निर्धन,यूँ तो सांसारिक दृष्टि से।
पर मालामाल थे वे दोनों, सच्चे धन से प्रभु भक्ति के।।
प्रभात में उठकर दोनों ही, नित्य कर्म से निवृत हो करके।
कई घंटे करते भजन सुमिरण, दोनों प्रभु याद में खो करके।।
जब उठते भजन और सुमिरण से, तो जंगल में वे जाते थे।
सूखी सूखी लकड़ी दोनों,जंगल से बीन ले आते थे।।
तब बेच के लकड़ी गांव में, भोजन सामग्री लाते थे।
भोजन बना के दोनों प्राणी, फिर अपनी क्षुधा मिटाते थे।।
भोजन से निवृत होने पर, खो जाते याद में फिर दोनों।
दिन इसी तरह थे बिताते वे, पल पल प्रभु नाम सुमिर दोनों।।
थे अति सन्तोषी दोनों ही, संसार की दिल में चाह न थी।
प्रभु नाम प्रताप से दोनों का, थी हासिल मानसिक सुख शान्ति।।
भक्त नामदेव जी ने लेकिन, जब रांका बांका को देखा।
तो उनकी निर्धनता लख कर, हो उठा द्रवित हृदय उनका।।
की प्रार्थना प्रभु के चरणों में, भक्त नामदेव जी ने तत्क्षण।।
प्रभो, हर कर इनकी निर्धनता, खुशियों से भरो इनका जीवन।
दे करके धन इन दोनों को, हे भगवन इनकी सहायता करो।
ये भक्ति में रत रहते हैं सदा, इनके दुःख कष्ट क्लेश हरो।।
प्रभु बोले हैं ये वैराग्यवान, इन्हें ज़रा नहीं चाहत धन की।
रहते मेरी याद में मस्त सदा, धन को ये समझते हैं मिट्टी।।

विश्वास न हो यदि इसपे तुम्हे, कल तुम्हें तमाशा दिखायेंगे।
धन चाहते हैं या नहीं दोनों, कल ही इसको आज़मायेंगे।।
दूसरे दिन राँका और बाँका, जब उठे भजन और सुमिरण से।
और नित्य की भाँति जंगल में, लकड़ी लेने वे जाने लगे।।
रस्ते में एक जगह प्रभु ने, बिखराये सोने के सिक्के।
फिर भक्त नामदेव जी संग, प्रभु वृक्ष के पीछे जाय छिपे।।
तभी भक्त नामदेव जी ने, दोनों को देखा आते हुए।
आगे आ रहे थे भक्त राँका, बाँका रह गई थी कुछ पीछे।।
प्रभु प्रेम की मस्ती में राँका, उस जगह पे जैसे ही पहुँचे।
अकस्मात ही राँका का पाँव, जा टकराया उन सिक्कों से।।
सिक्कों को देख करके दिल में, राँका बहुत हैरान हुए।
कहीं देख न बाँका ललचाये, यह सोच बहुत परेशान हुए।।
फिर जल्दी से उस सिक्कों पर, लगे डालने मिट्टी हाथों से।
इतने में पहुँची वहाँ बाँका, अपने पति से पूछा उसने।।
हे स्वामी रुक क्यों गये यहाँ, मिट्टी में क्या हो भाल रहे।
और एक जगह से उठा मिट्टी, क्यों दूजी जगह हो डाल रहे।।
राँका बोले पत्नी से यूँ, यहाँ सिक्के पड़े थे सोने के।
कहीं देख न तुम ललचा जाओ, हूँ डाल रहा मिट्टी उन पे।
राँका के मुख से यह सुनकर, बाँका बोली यूँ हँस कर के।।
यह आपको क्या सूझी स्वामी, मिट्टी पे मिट्टी डाल रहे।।
मेरी तो दृष्टि में दोनों, मिट्टी ही हैं मेरे स्वामी।
पर आपके दिल में अभी तलक, दोनों में अन्तर है बाकी।।
यह सुनकर राँका लज्जित हो, फिर बोले अपनी पत्नी से।
है धन्य तू धन्य विचार तेरे, पिता माता भी हैं धन्य तेरे।।
तेरे सम्मुख वैराग्य मेरा, सचमुच कच्चा है अभी तलक।

मिट्टी कंचन का मेरे दिल से, नहीं भेद मिटा है अभी तलक।।
हैं आँखें खुल गईं आज मेरी, वैराग्य भरे ये वचन सुनकर।
सचमुच तू भाग्यशालिनी है, प्रभु की जो ऐसी कृपा तुझपर।।
हो कृपा प्रभु की तो ऐसे, अति श्रेष्ठ विचार उपजते हैं।
प्रभु प्रेम और प्रभु भक्ति के, हृदय में दीपक जलते हैं।।
पग आगे बढ़ाया राँका ने, यूँ प्रशंसा करके बाँका की।
पीछे पीछे बाँका भी चली, तब जंगल से लेने लकड़ी।।
प्रभु के सच्चे दोनों प्रेमी, जब ओझल हो गये आँखों से।
भक्त नामदेव की ओर घूम, भगवान ने देखा मुस्का के।।
भक्त नामदेव बोले प्रभु से , ये आपके हैं सच्चे प्रेमी।
हरगिज़ नहीं चाहना दोनों को, संसार के किसी पदार्थ की।।
हैं सुमिरण भजन में मग्न सदा, प्रभु आपकी है बस दिल में लगन।
सचमुच ही भाग्यवन्त हैं ये, दुनियाँ में सफल इनका जीवन।।
बस ऐसे ही जो प्रेमी जन, प्रभु याद को हृदय बसाते हैं।
हैं भाग्यशाली जग में दासा, वही जन्म सफल कर जाते हैं।।

ये सच्चा कि वो सच्चा

(राजा जनक जी का सपना)

नरपति एक सिंहासन सोया, सुपने भया भिखारी।
अक्षतराज बिछुड़त दुख पाया,सो गत भई हमारी।।
राजा जनक को महलों में इक दिन सपना आया रे।
जिसने था राजा को यूँ बेचैन बनाया रे।।
किसी देश के राजा ने आ नगर को घेरा।
बेशुमार फौजों ने बाहर लगाया डेरा।।
रात बीत गई जाग चेत जब हुआ सवेरा।
उस राजा ने था युद्ध का बिगुल बजाया रे।।
उस राजा ने सेना लेकर करी चढ़ाई।
राजा जनक ने भी हिम्मत से करी लड़ाई।।
दोनों तरफ की फौजों में थी मची दुहाई।
अन्त में उस राजा ने राजा जनक हराया रे।।
उस राजा ने कहा सैनिकों से तुम जाओ।
जाकर शहरों में ये डोंडी पिटवाओ।।
घर घर में मेरी ये नई आज्ञा पहुँचाओ।
जो भी देना था फिर उसको हुक्म सुनाया रे।।
जो कोई भी राजा जनक को घर मे बुलावे।
अपने घर से जो इसको जलपान करावे।।
इनका दुख सुख सुने या इनको पास बिठावे।
उसको दे के फाँसी उसका करो सफाया रे।।
हुक्म सुनाया जनक को उसने धक्के मारे।
नौकर चाकर भी कुछ कर सके नहीं बेचारे।।
इकदम नज़रें फेर गये राजा के प्यारे।

छोड़ के अपने महल जनक रस्ते पे आया रे।।
रस्ते में जाते नहीं उसको कोई बुलाता।
पास बुलाने पर भी पास कोई नहीं आता।।
जान बूझ कर मित्र भी घर में छुप जाता।
सोच रहा था जनक प्रभु तेरी कैसी माया रे।।
चलते चलते राजा पहुँचा एक शहर में ।
राजा से ही बना भिखारी सपन लहर में।।
पानी की इक घूँट मिली नहीं आठ पहर में।
सपने ने ही राजा को कंगाल बनाया रे।।
उसने सुना कि बस्ती में इक सेठ है रहता।
आठ पहर के बाद है जो क्षेत्र लगवाता।।
वो लाचार गरीबों को भोजन करवाता।
पहुँचा राजा जनक जिधर लोगों ने बताया रे।।
राजा जनक को लगी हुई थी भूख करारी।
वहाँ तो पहले से ही भीड़ जमा थी भारी।।
खड़े खड़े राजा जनक की जब आई बारी।
खिचड़ी हो गई खत्म ये प्रबन्धक ने सुनाया रे।।
राजा जनक ने प्रबन्धक से अर्ज़ गुज़ारी।
भैया मेरी बात मान मैं नहीं भिखारी।।
कुछ तो खाने को देदे मुझे भूख है भारी।
जान जायेगी आज अगर ये कुछ नहीं खाया रे।।
उसने देखा सचमुच इसका पेट है खाली।
बर्तन की खुर्चन थोड़ी सी बाहर निकाली।।
जली भुनी जैसी थी खिचड़ी उसे सँभाली।
खुर्चन लेकर राजा जनक ने शुक्र मनाया रे।।

मिट्टी के दो बर्तन माँगे हिम्मत करके।
एक कटोरे में पीने का पानी भरके।।
बैठ गया इक कौने में इज़्ज़त से डर के।
तब भी देखो समय ने कैसा रंग दिखाया रे।।
माँगी खिचड़ी खाने की जब बारी आई।
खड़े खड़े दो साँडों की हो गई लड़ाई।।
एक सांड ने पीछे हट के टाँग घुमाई।
खिचड़ी गई नाली में और पानी भी गिराया रे।।
जली भुनी खिचड़ी पाई थी किस मुश्किल से।
चीख निकल गई राजा जनक के दुखिया दिल से।।
जैसे कोई राही गिर जाये अपनी मन्ज़िल से।
इस ठोकर ने राजा को सपने से जगाया रे।।
राजा जनक सिहर उठे सपन की इस बात से।
उड़ गई चेहरे की रंगत सपन के हालात से।।
उसकी चीख सुनकर मची नौकरों में खलबली।
भीड़ अहलकारों और वज़ीरों की जमा हुई।।
जो भी आकर पूछता महाराज कुछ बताईये।
आपको तकलीफ क्या है सब हमें समझाईये।।
राजा जनक कहते बाकी मेरा सही हाल है।
ये सच्चा कि वो सच्चा बस मेरा यही सवाल है।।
मन्त्री वज़ीर जब न इसका उत्तर दे सके।
वैद्य और हकीम भी ये दुःख न दूर कर सके।।
देश भर के ऋषि मुनि जब सोचकर ये थक गये।
प्रश्न को सुलझाने की खातिर सब वहीं पर रुक गये।।
भारत का दुनियाँ में ऊँचा सर है ऋषियों की शान से।

इसके लालों ने इसे चमकाया आत्म ज्ञान से।।
इनमें ऋषि अगस्त ऋषि वशिष्ठ और परस राम हैं।
अंगिरा पराशर और कश्यप अत्री के नाम हैं।।
बाल्मीकि यमदाग्नि गौतम और वेदव्यास हैं।
विश्वामित्र कणव और गालब के नाम खास हैं।।
आज भी दुनियाँ में लोग उनके हैं गीत गा रहे।
और सितारे बन के वो गगन में जगमगा रहे।
अष्टावक्र जो था इक मासूम बालक बारह साल का।
उतर दिया जिसने राजा जनके के सवाल का।।
आज मैं इक बात कहता हूँ करोड़ों साल की।
रूप रेखा है ये उस अनोखे बाल की।।
एक दिन कुछ लड़कों को इक लड़का आता नज़र पड़ा।
सब देख के उसको हँसने लगे क्योंकि वो था विचित्र बड़ा।
वो लड़का भी उन लड़कों जैसा दस बारह बरस का ही होगा।
लेकिन न जाने भगवान से क्यों उसको ऐसा अभिशाप मिला।।
उसके हर अंग में गाँठें थी हर हड्डी जैसे टूटी हुई।
देखने वाले कहते थे इसकी तकदीर है फूटी हुई।।
वो मज़बूरन अपने तन को मानो घसीटता जाता था।
सोटी को पकड़ के चलता था बिन वजह ही धक्के खाता था।।
इसके तन में थे आठ मोड़ उसे अष्टावक्र कहते थे।
ये बालक और इसकी माता नाना के घर मे रहते थे।।
ये घर से आया था इकआसन माला और इक लौटा लेकर।
गंगा स्नान को जाता था वो सन्धया करने की खातिर।।
उसको धक्का दिया एक लड़के ने मजाक से।
वो बेचारा खड़ा खड़ा गिर गया धड़ाक से।।

माला सोटी छीन किसी ने आसन लिया।
ये गरीब बालक वहीं बैठकर रोने लगा।।
एक लड़के ने कहा भाईयो इक मेरी बात मान लो।
गरीब को तंग करना अच्छा नहीं तुम ये जान लो।।
और फिर ये तो बेचारा चलने से भी मज़बूर है।
इसका भी न जाने पिछले जन्म का कसूर है।।
अपने तो पिता भी हैं इसका बाप भी सर पे नहीं।
इसको नाना के यहाँ छोड़ा और चल दिया कहीं।।
इसका नाना क्रोधी है ये जब उसे बतायेगा।
मार तो पड़ेगी आश्रम से भी निकवायेगा।।
लड़के उसको छोड़ कर चले गये।
बल्कि यूँ कहो कि उसका दिल तोड़ कर चले गये।।
जाकर माता से उसने कहा माँ मुझे इस कारण रोना आया है।
आश्रम के सब लड़कों ने मिलकर ये मुझे बताया है।।
वो कहते हैं हम दोनों से मेरे पिता नाता तोड़ गये।
वो किधर गये ये पता नहीं हम दोनों को यहाँ छोड़ गये।।
फिर माता जिनको में अपना पिता समझता रहता हूँ।
तू भी उन्हें पिता भी कहती है मैंभी उन्हे पिता कहता हूँ।।
वो मेरे क्या लगते हैं मुझको सच्ची बात बता माता।
जो मेरे पिता थे कहां गये वो कारण भी समझा माता।।
माता बोली ऐ बेटा ये लम्बी राम कहानी है।
जो तूने मुझसे पूछी है ये चाहे बात पुरानी है।।
मैं तुमसे आज तलक ये बेटा बात छुपाती थी।
तू भी न मुझको छोड़ जाये इस डर से मैं न कहती थी।।
तू चाहे भी जैसा है पर मेरी आँखों का तारा है।

मैं सोचती हूँ इस दुनियां में इक तू ही मेरा सहारा है।।
तू पैदा भी नहीं हुआ था जब से पिता तेरे सिधाए हैं।
वो जनकपुरी के राजा ने महलों में बाँध बिठाएं हैं।।
इक तेरे पिता ही नहीं वहाँ पर ऋषि हज़ारों रहते हैं।
वो आना चाहें भी तो राजा जनक न आने देते हैं।।
अष्टावक्र जो था इक मासूम बालक बारह साल का।
उत्तर देने चल पड़ा है वो राजा के सवाल का।।
शरीर में गाँठें काला रंग और बदशक्ल था।
छोटी सी उमर में था पूरा धनी वो अकल का।।
चलते चलते एक दिन जनकपुरी पहुँच गया।
कई दिन के सफर से वो था बेचारा थक गया।।
थोड़ा सा आराम करूँ मन में ये ही सोच कर।
दम वो लेने लगा बीच रास्ते में बैठकर।।
उस दिन राजा जनक शिकार खेलने को तैयार हुये।
उसी रास्ते से आते थे हाथी पर असवार हुए।।
राजा जनक के आगे आगे घुड़सवार इक जाता था।
जो भी उसको मिले राह में उसको परे हटाता था।।
उसने देखा एक भिखारी बीच रास्ते बैठा है।
काला भद्दा और बदसूरत जिसका हर अँग टेढ़ा है।।
उसने उस बालक को परे हटाना चाहा रस्ते से।
उसने कहा मैं नहीं उठता तू जाके कहदे राजा से।।
हाथी पे फूला बैठा है घमण्डी अपने आपका है।
क्यों प्रजा को तंग करता है क्यारास्ता उसकेबाप का है।।
उसकी बाते सुन के कौतवाल पीछे मुड़ गया।
राजा के वो पास वो सर को नीचा करके खड़ गया।।

बोला वो महाराज रास्ते में अनोखा बाल है
जिसके मैले कपड़े फकीरों जैसा हाल है।।
उसको मैने रास्ते से परे हटने को कहा।
इतना सुनके उसके गुस्से का ठिकाना न रहा।।
उसको गर मारूँ तो मुझको शर्म आती है।
इस जगह तो मेरी कुछ नही पेश जाती है।।
राजा बोले तुम यहीं ठहरो में खुद ही जाऊंगा।
कौन है बालक उसका मैं ही पता लगाऊँगा।।
जल्दी पग धरता हुआ तब जनक वहां आ गया।
देखते ही बालक को दिल में तो रहम खा गया।।
उसने पूछा बाल से तू कौन है मुझको बता।
अष्टावक्र बोला अन्धे इतना भी नहीं पता।।
या तो मैं वरदान हूँ या शाप हूँ भगवान का।
कोई कुछ भी समझे मैं बच्चा हूँ इन्सान का।।
राजा ने देखा कि बालक बहुत बुद्धिमान है।
ये तो सचमुच किसी बड़े ऋषि की सन्तान है।।
उसने कहा आपको है ऋषिकुमार नमस्कार हो।
अगर आप चलने फिरने से हुये लाचार हो।।
आओ मैं दे के सहारा आपको ले चलूँगा।
जैसी होगी महल में फिर जाके सेवा करूँगा।।
अष्टावक्र ने कहा राजा तेरा कल्याण हो।
मैंने देखा है कि तुम ना समझ हो नादान हो।।
जानवर का ले सहारा खुद हो बैठे जा रहे।
फिर भी मुझको देने को सहारा हिम्मत दिखा रहे।।
दूसरों के कन्धों पर जो बैठकर खुद चले।

फिर किसी लाचार को वो क्या सहारा दे सके।।
राजा जनक ने उतर के हाथी से उसको नमस्कार किया।
विनती करके महलों मे ले चलने को तैयार किया।।
अष्टावक्र ने महलों में जाकर पहले तो स्नान किया।
श्रद्धा से जो दिया जनक ने फिर उसने जलपान किया।।
ऋषि मुनि बुलवा के जनक ने फिर दरबार सजाया है।
मन्त्रियों से कह करके फिर उस बालक को बुलवाया है।।
ऋषियों ने देखा बालक तन को घसीटता लाता है।
जो ऋषि भी उसको देखता वो ज़ोर से हँसता जाता है।।
राजा समेत सब मन्त्रियों को हँसी ज़ोर से आई थी।
सबको देखा अष्टावक्र ने भी कहकही लगाई थी।।
मैं सोच रहा था शायद ये है सभा बड़े विद्वानों की।
तेजस्वी ऋषि मुनियों या ब्रह्मज्ञानी गुणवानों की।।
मैं देख रहा हूँ सभा में बैठे बड़े बड़े अहंकारी हैं।
चमड़े को परखने वाले ये सब चमड़े के व्यापारी हैं।।
हाथ जोड़े जनक ने फिर प्रश्न दोहराया।
राज़ किसी की भी ये न समझ में आया।।
ये सच्चा कि वो सच्चा मेरा सवाल है।
इसके बारे में आप कहिये क्या ख्याल है।।
ऐ ऋषियो सुनो जनक को इक दिन सपना आया था।
जिसने महलों में सोये इसको कंगाल बनाया था।।
मेरा जवाब तो है ये न तो सपना सच्चा कहलाता है।
न सपने में ये संसार साथ हमारे जाता है।।
जब सपना है तब जगत नहीं जगते को नहीं आता सपना।
दोनों को अनुभव करने वाला सच्चा आत्मा है अपना।।

न ये सच्चा न वो सच्चा,सच्ची तो तेरी आत्मा है।
ये भेद समझ लो बस फिर तेरी आत्मा ही परमात्मा है।।
जब दासनदास ऋषि अष्टावक्र ने ऐसा ज्ञान सुनाया था।
राजा जनक ने उनको अपनी गद्दी पर बिठलाया था।।
चरण धोये चरणामृत ले उनका सम्मान बढ़ाया था।
भरी सभा में अष्टावक्र को अपना गुरु बनाया था।।

दिल और अकल

एक रोज़ दिल और अकल के बीच हुआ झगड़ा भारी।
क्या चीज़ बड़ी है दुनियाँ में, इस बात पे बहस हुई ज़ारी।।
दिल का कहना था, इश्क से बढ़कर दुनियाँ में कुछ है ही नहीं।
और अक्ल का कहना बार बार था, बात यह कुछ भी जँची नहीं।।
है इश्क सरासर बेअक्ली या खलल दिमागी इसे कहो।
दिन रात रहो पागल से बने, पल भर भी चैन नसीब न हो।।
कुछ इज़्ज़त रहे न दुनियाँ में, सब लोग कहें दीवाना है।
ऐ दिल यह इश्क तो अपनी बरबादी का एक बहाना है।।
क्या लुत्फ है जग में जीने का, मुझसे सुन तुझे बताऊँ मैं।
ज़िन्दगी है वही जो ऐश में गुज़रे, आ ज़रा तुझे समझाऊँ मैं।।
लो काम अक्ल से और जमाने में कुछ पैदा नाम करो।
दौलत इज़्ज़त के साथ मिले जीने का मज़ा, वह काम करो।।
वह शान करो पैदा अपनी, दुनियाँ कदमों में झुक जाये।
है चीज़ बड़ी दौलत इज़्ज़त, पर खुशनसीब कोई पाये।।
क्या खुशी है दुनियाँ में जो ताकत से हासिल हो सकती नहीं।
ताकत दौलत इज़्ज़त से कौन सी, मुश्किल हल हो सकती नहीं।।
ऐ अक्ल सरासर भूल है यह, जो समझा तूने गलत समझा।
पहुँचा है जहाँ तक इश्क,वहां क्या कामअक्ल का दिल ने कहा।।
जो हेच है तेरी नज़रों में, उस इश्क का दर्ज़ा आला है।
गर इश्क की कुँजी पास न हो, तो अकल के दर पर ताला है।।
ऐश-इशरत दौलत इज़्ज़त बेशक दिल को लुभाने वाली है।
लेकिन ये इनसाँ को अपनी हस्ती से भुलाने वाली है।।
बढ़ती है हविस इनको पाकर, पैदा हो मर्ज़ मगरूरी का।
ऐसी ताकत को मैं दे सकता, नाम फकत मज़बूरी का।।

जो नफस की है ताबेदारी, ऐसी ताकत से हासिल क्या।
है हिर्सो-हविस बढ़ाना ही दुनियाँ में जीने का फल क्या।।
पड़कर लालच के फंदे में, सुख कैसा और खुशी कैसी।
पंजे में नफस के रूह फँसी, ऐ अकल यह आज़ादी कैसी।।
जो लिखा अपनी किस्मत में, वह जो मिलकर ही रहता है।
इन्सान हविस के चक्कर में, यों ही तकलीफें सहता है।।
तू कहती जिसे है पागलपन, वह इश्क कमाल आज़ादी है।
है यही तो रूह की खुशबख्ती, तू जिसे कहे बरबादी है।।
ताकत दौलत से बेशक हल होती तदबीरें देखी हैं।
लेकिन ऐ अकल इश्क से तो बनती तकदीरें देखी हैं।।
है इश्क खुदा की रहमत और जीना है खुदा के घर तक का।
जो चढ़ा इश्क के जीने पर, सीधा मन्ज़िल तक जा पहुँचा।।
फिर कहा अक्ल ने, ऐ दिल, यह तकरीर मुझे कुछ भायी नहीं।
यह मिन्तक तेरी अनोखी सी, अपनी तो समझ में आयी नहीं।।
है इश्क का दामन अक्ल से खाली, खोखला इश्क विचारा है।
ताकत और दौलत अगर न हो, जीने का कौन सहारा है।।
ज़िन्दगी में क्यों ज़िन्दगी की खुशियों से नाता तोड़ा जाये।
जो चीज़ कभी देखी न सुनी, क्या उससे दिल जोड़ा जाये।।
दुनियाँ की लज़्ज़तों से महरूम रखे खुद को, नादानी है।
हासिल को छोड़ के लाहासिल की ऐ दिल, तूने ठानी है।।
नादीदा चीज़ मिले न मिले, क्यों छोड़े इसे उसकी खातिर।
इससे भी गये, उससे भी गये और खाली हाथ रहे आखिर।।
दुनियाँ तो अपने हाथ में है, उकबा की खबर खुदा जाने।
क्यों आज का फीका लुतुफ करें कल को क्या होगा क्या जाने।।
बस यही तो भूल का चक्कर है, ऐ अक्ल तू जिसमें आके फँसी।

दिल बोला, मेरी बात की रमज़ अभी तक तूने नहीं समझी।।
दुनियाँ तो आना जानी है, दुनियाँ के मज़े सब फीके हैं।
इनमें फँसना नादानी है, सब झंझट झगड़े जी के हैं।।
कितने बड़े बड़े गुज़रे, ताकत दौलत इज़्ज़त वाले।
कुछ लाये साथ न ले के गये, दबदबा और नेमत वाले।।
यहाँ हुये सिकन्दर दारा भी, दुर्योधन रावण भी गुज़रे।
सब तरह के, ऐश और दौलत से पुर जिनके खज़ाने रहते थे।।
चालीस गंज कारूँ के थे, लेकिन उसके नहीं साथ गये।
कितने ही शहनशाह और हुये, आखिर को खाली हाथ गये।।
ताकत दौलत और ऐश इशरत पर था जिनका सिक्का ज़ारी।
लूटा जब मौत के हाथों ने, तदबीर न कोई हुई कारी।।
अपने बेगाने थे जितने,कोई मौत से उन्हें बचा न सका।
तकदीर का चक्र थम न सका, कोई भी इसे थमा न सका।।
तुझको है गुमाँ जिस ताकत का, वह फर्ज़ी एक कहानी है।
है इश्क की दौलत वह नेमत, जो दायम और लाफानी है।।
दौलत इज़्ज़त ताकत का नाम निशाँ तक, बाकी नहीं रहा।
ज़िन्दा-जावेद मगर है इश्क, जिसे कोई भी मिटा न सका।।
मंसूर इश्क से ज़िन्दा है और शमस, अबद तक है ज़िन्दा।
मिट गया जमाने से निमरूद, जो हिर्सो-हविस का रहा बन्दा।।
ज़िन्दा है नाम विभीषण का, और मौत के मुँह में गया रावण।
अर्जुन का नाम रहा बाकी, मिट गये दुःशासन दुर्योधन।।
दिन चार जिये भी करोफर्र से अगर तो क्या दुनियाँ में जिये।
ज़िन्दगी है उन्हीं की लासानी, जो मरकर भी मर नहीं सके।।
जीने का लुतुफ तो इश्क से है, जो लाजिवाल और कायम है।
दुनियाँ के ऐश तो फानी है, पर ऐश इश्क का दायम है।।

जिस खुशी को कभी ज़िबाल नहीं, वह खुशी इश्क के दम से है।
ज़िन्दगी के आँगन में रौनक तो इश्क के फकत कदम से है।।
ऐ अक्ल इश्क का थाम दामन, ताकत पर बेज़ा नाज़ न कर।
थोथी बातों के लिये हकीकत को तो नज़र-अन्दाज़ न कर।।
सुनकर दलील यह लाजवाब दिल की, कुछ अक्ल न बोल सकी।
खामोश उसे हो जाना पड़ा, शरमिन्दा होकर बैठ रही।
ऐ इश्क मुबारक दम तेरा, रूतबा तेरा सब से आला है।
हमराज हकीकी ज़िन्दगी का, तकदीर जगानेवाला है।।
मरहबा हज़ार बार तुझको, तेरे आगे सर खम अपना।
तकदीर जगा दे, दास की ज़िन्दगी में रख आके कदम अपना।।

स्वामी रामतीर्थ

स्वामी रामतीर्थ छोड़कर घर बार जब जाने लगे।
स्त्री के नैन छम छम नीर बरसाने लगे।।
तब ही उस देवी ने स्वामी राम के पाँव गहे।
पकड़ कर दामन पति का, वचन ये उनसे कहे।।
नाथ अपनी चरण दासी पर भी किरपा कीजिये।
साथ मुझ को लीजिये और सेवा करने दीजिए।।
ले गये बनवास को जब राम थे अपनी सिया।
तो आप मेरे राम हैं फिर क्यों मुझको तज दिया।।
तब स्वामी राम तीरथ ने कहा कुछ बात है।
साथ ले जाना नहीं क्यों कि तू औरत ज़ात है।।
तुझ को घर और अपने ज़ेवरों से प्यार है।
बस इसी कारण मेरी प्यारी मेरा इनकार है।।
बोली-औरत-नाथ यह सब कुछ गँवा देती हूँ मैं।
आज्ञा दें गर अभी यह घर जला देती हूँ मैं।।
तब स्वामी राम तीरथ ने कहा इनकार है।
सहल है कहना मगर करना बहुत दुश्वार है।।
यह सुना तो खोल उसने सारे घर के दर दिये।
माँगने वालों के वैरागिन ने पल्लू भर दिये।।
देख कर यह राम तीरथ मुस्करा पड़े।
कहने लगे प्यारी हैं झंझट तुम्हें बड़े।।
बच्चों की माँ हो-ममता तोड़ोगी किस तरह।
बतलाओ अपने लाडले छोड़ोगी किस तरह।।
बोली औरत नाथ उनकी कुछ नहीं है फिकर।
गर यह नहीं घर उनका तो इक और भी है घर।।

राजा नल ने जंगल का जब रास्ता लिया था।
दमयन्ती ने भी दामन पकड़ा था पिया का।।
बच्चों का यही झगड़ा राजा ने भी कहा था।
दमयन्ती ने उन्हें ननिहाल भेज दिया था।।
मैं भी साथ आप से अपना निभाऊँगी।
बच्चों को पेके घर में जा कर छोड़ आऊँगी।।
स्वामी राम तीर्थ बोले-कामिल नहीं है तू।
हमराह मेरे जाने के, काबिल नहीं है तू।।
पेके तेरे में है क्या- जो इस जगा नहीं।
उस जा खुदा है इनका, क्या इस जगा नहीं।।
प्यारी तू अपने प्यार का, अब नाता तोड़ दे।
और रिश्ता इन का, सर्व व्यापक से तू जोड़ दे।।
जो सब की माँ है, मुँह इनका, उस तरफ मोड़ दे।
बाज़ार में तू जाकर, बच्चों को छोड़ दे।।
यह सुनते ही दिल धड़कता कुछ देर ही रह गया।
और ममता के मारे माँ का, बस नीर बह गया।।
इक ऊँगली लगाया दूसरा गोदी में ले लिया।
चुप चाप उसने रुख यों बाज़ार का किया।।
भीड़ में बस जाके ऊँगली को छुड़ा लिया।
और लाल दूसरा भी इक जा बिठा दिया।।
हरसत से देखा और मुँह से विदा कही।
आँखों से आँसुओं की नदी खुद ब खुद बही।।
बच्चे थे दो गरीब के पूँजी रही सही।
प्यारे प्रभु के प्रेम में वह भी छीन ली।।
कुछ न रहा सब कुछ गया-कंगाल हो गई।

सद आफरीं-के मुँह से सी तक नहीं कही।।
दिल में थी विचारी के इक आरज़ू यही।
रक्खी थी टेक जानकी ने राम-नाम की।।
लेने लगे वे इम्तिहाँ, लेकिन रहा सहा।
कहते हैं प्यारी मान लो मेरा इक कहा।।
मुँह से कहो, कि स्वामी राम तीरथ मर गया।
जो था मेरा पति, मुझे विधवा कर गया।।
सुनते ही चीख मार के, कदमों में गिर गई।
कोई कटारी थी जो कलेजे में फिर गई।।
रोकर कहा कि नाथ यह मैं किस तरह कहूँ।
कहने से पेशतर ज़ुबाँ क्यों न काट दूँ।।
स्वामी राम बोले तो इनकार है मेरा।
क्योंकि अभी पति में प्यारी प्यार है तेरा।।
देवी के दोनों नैन आँसुओं से भर गये।
लब हुए नीले गाल पीले पड़ गये।।
रोते हुए कहा कि स्वामी राम मर गये।
जीते जी नाथ मुझे विधवा कर गये।।
सुनते ही राम तीरथ झट उछल पड़े।
कुछ न रहा था जिसका उसकी तरफ बढ़े।।
आज तूने छोड़ा है, दुनियाँ के भोग को।
सहन किया है तूने, पति-पुत्र वियोग को।।
मेरी तरह लुटा दी है पूँजी रही सही।
गंगा के जल में जमना आज इक जगह बही।।
तेरा पति गया-मेरी पत्नी खो गई।
आ देवी आज से तू मेरी माता हो गई।।

सच्ची खुशी

बहुत पहले का इक किस्सा मैं करता हूँ 1ब्याँ।
2राज़ 3राहत दायमी का जिसके अन्दर है 4पिन्हां।।
उन दिनों का 5रोज़मर्रा का मेरा 6दस्तूर था।
सुबह उठ के सैर को जाता मैं काफी दूर था।।
शहर के कुछ फासले पर एक बहती थी नदी।
पास ही उसके थी इक साधु की छोटी सी कुटी।।
जब भी जाता मैं उधर तो देखता था बस यही।
रहता था वह मग्न खुद में जग की कुछ न खबर थी।।
दुनियाँ के झगड़ों-झमेलों से बहुत वह दूर था।
याद में मालिक की हर दम रहता वो मख्मूर था।।
तन बदन की सुधि नहीं थी और न खाने की फिकर।
हर घड़ी उसकी ज़ुबाँ पे रहता मालिक का ज़िक्र।।
साधु वह हर हाल में रहता सदा 8मसरूर था।
उसके चेहरे पर बरसता इक निराला नूर था।।
देख कर साधु को मेरे दिल में उठता था सवाल।
कौन सी अनमोल दौलत से है साधु मालामाल।।
किस वजह से रहता है साधु हमेशा 9शादमाँ।
सोच कर यह बात दिल में बहुत होता मै हैरां।।
माजरा मुझको मगर कुछ भी समझ आया नहीं।
राज़ साधु की खुशी का मैं समझ पाया नहीं।।
आखिर इक दिन जा किया मैंने यह साधु से सवाल।
राज़ क्या है आपकी 10मुसर्रत का ऐ 11औज-कमाल।।
12 ऐशो इशरत के सामानों की नहीं मुझ पे कमी।
नेमतें भी 13 दहर की मुझको 14मुयस्सर हैं सभी।।

आप पे 19 गोकि है दुनियाँ के सामानों की कमी।
फिर भी चेहरे पर सदा रहती है 20 लाफानी खुशी।।
राज़ इस सच्ची खुशी का मुझको भी बतलाइये।
मुझ पे भी 21 ऐ मेहरबाँ 22नज़रे करम फरमाइये।।
सुन के मेरी बात साधू बोला 23 ऐ फरखंदा-ख्याल।
दुनियाँ के सामानों में मिलना खुशी का है 24 मुहाल।।
इन सामानों में नहीं राहत का है नामो-निशाँ।
फिर तू क्यों इनमें खुशी को ढूँढता है ऐ नादाँ।।
घट में ही मौजूद है खुशियों का 25गंजे-बेबहा।
पहुँचने का उस तलक 26मख्फ़ी है लेकिन रास्ता।।
दिल की गहराई में जाने से वो आयेगा नज़र।
जिसको पाकर ज़िन्दगी होगी खुशी से फिर बसर।।
दुःख दर्द गम फिर कभी न पास तेरे आयेंगे।
ज़िन्दगी में फूल खुशियों के सदा मुस्कायेंगे।।
उस खज़ाने पे पहुँचने की 27तमन्ना है अगर।
28मुर्शिदे कामिल की 29सोहबत में तू जा देर न कर।।
30खिदमतो-ताज़ीम से जब तू करेगा 31इल्तिज़ा।
उस खज़ाने पर पहुँचने की युक्ति वो देंगे बता।।
जग से सुरत मोड़ कर जब घट में तू जायेगा।
दास खुशियों का खज़ाना तू यकीनन पायेगा।।

1-वर्णन 2-रहस्य 3-शाश्वत सुख आनन्द4-छिपा हुआ 5-नित्यप्रति 6-नियम7मग्न 8-आनन्दमय 9-प्रसन्न 10 खुशी 11-ऊँचे मर्तबे वाले 12-भौगैश्वर्य 13-संसार 14-उपलब्ध 15-पद 16-मकान और सम्पति 17-परिवार 18-सुख शान्ति 19-यद्यपि 20-शाश्वत 21-हे कृपालु 22- कृपादृष्टि 23-शुभ विचारों वाले 24-असम्भव 25-असीम भँडार 26-गुप्त 27-अभिलाषा 28-पूर्ण सतगुरु 29-संगति 30-सेवा और आदर 31-प्रार्थना विनय

माया की दलदल

ठानी दो मक्खियों ने यह राये, हल्ला हलवाई पर किया जाये।
क्या सुहानी दुकान है उसकी, क्या निराली सी शान है उसकी।।
सोंधी सोंधी सी उठ रही खुशबो, खींचती दिल को अपनी जानिब जो।
थाल क्या सज रहे मिठाई के, हलवा पूरी के, बालूशाही के।।
ताज़ा ताज़ा गरम जलेबी है, कहीं जामुन गुलाब बर्फी है।
इमरती, पेड़ेऔर कलाकन्द है,कुछ मिठाई खुली है,कुछ बन्द है।।
अपने मतलब के खूब सामाँ हैं, पूरे होने को आज अरमाँ है।
आ बहन, लें मज़ा मिठाई का, मौका है क्या मिला सफाई का।।
खायें जी भर के आज खुश होकर, मिलते ऐसे कहाँ हैं दिन अकसर।
लुत्फ लें आज शाही खाने का, यह मज़ा फिर न हाथ आने का।।
करती आपस में मशविरा दोनों, और खुश होती इस तरह दोनों।
चलीं हलवाई की दुकाँ की तरफ,जैसे मेहमान मेजबाँ की तरफ।।
देखा जो मक्खियाँ ने वाँ जाकर, थी दुकाँ गोया इक अजायब घर।
थाल पक्वान्नो से भरे कितने, ताक पर थे रखे हुये जितने।।
पहले करती रहीं तवाफ उनका, गोया मक्खियों का था यही काबा।
एक से एक थाल पर जातीं, लुत्फ पहले से बेशतर पातीं।।
खूब की सैर घूम कर फिर कर, खूब देखी बहार जी भर कर।
खूब पक्वान्नों का मज़ा पाया, हर मिठाई में रस नया पाया।।
मस्त हलवाई अपने काम में था, गाहकों का लगा था वाँ ताँता।
कहाँ हलवाई को फरागत थी, इनको देखे कहाँ यह फुर्सत थी।।
दोनों ने खूब पेट भर खाया, कुछ न हलवाई ने पता पाया।
खूब खाने को जब लगा मिलने, दोनों मक्खियाँ लगीं वहीं रहने।।
आ गई जो दुकाँ उन्हे मरगूब, मक्खियाँ ने कहा जगह है खूब।
अब न हरगिज़ यहाँ से जायेंगे, डेरा अपना यहीं जमायेंगे।।

दूसरे रोज़ जबकि हलवाई, कुछ बनाने लगा बालूशाही।
चाशनी खाँड की बना जो चुका, इक कड़ाही में उसको रख छोड़ा।।
ठण्डी होने को जब वह रखी थी,नज़र मक्खियों की उसपे पड़ी।
एक पर हिर्स जो हुआ गालिब,पानी पानी हुये ज़ुबान और लब।।
दूसरी से वह बोली यों मक्खी, देख री वह कड़ाही है रखी।
चाशनी उसमें चल के क्यों न पियें,क्यों न जी भर के खायें पियें,जियें।।
थालों के चाटने में क्या रखा, चाशनी का मज़ा न गर चखा।
कुछ मज़ा थालों में नहीं आया, पेट जो इन से भर नहीं पाया।।
मैं तो ये थाल चाट चाट थकी, इन से लेकिन हवस न मेरी भरी।
आओ, गोता लगे कड़ाही में, कुछ तो पल्ले पड़े कड़ाही में।।
पानी मुँह में मेरे भरा जाता, मुझ से अब तो नहीं रहा जाता।
चाशनी पीने मैं चली हूँ बहन, तू भी चाहे, तो साथ दे फौरन।।
दूसरी थी ज़रा समझ वाली, बोली, क्यों तू हई है मतवाली।
यह जो तूने ख्याल ठाना है, तेरे फँसने का इक बहाना है।।
चाशनी की कड़ाही में जो गिरी, याद रख फिर न निकल पायेगी।
टाँगे शीरे में चिपक जायेंगी, फिर न हरगिज़ वे छूट पायेंगी।।
पंख हो जायेंगे तेरे लतपथ, उड़ने की रह न जायेगी ताकत।
हाथ पाँव चलायेगी जितने, पँख फँसते ही जायेंगे उतने।।
होके बेबस तू आह, रोयेगी, और रो रोकर जान खोयेगी।
हवस तुझको मिटायेगी तेरी, मुफत में जान जायेगी तेरी।।
ज़िन्दगी अपनी अगर भारी हो, जान तुझको अगर न प्यारी हो।
फिर तो बेशक तू जा कड़ाही में, मैं नहीं पड़ने की तबाही में।।
साथ तेरा न दूँगी मैं बिल्कुल, बात सच्ची कहूँगी मैं बिल्कुल।
गरज़ हर तरह उसको समझाया,मगर उसकी न समझ में आया।।
मानना था न, वह कहा मानी, उसने जिद्द पूरी करने की ठानी।

छोड़कर साथ अकल वाली का, चल दी लेने को चाश का चस्का।।
जस्त कर के जो वह उड़ी मक्खी, जा कड़ाही में पड़ी वह मक्खी।
चाशनी में लगा दिया गोता, उभरी तो सारा जिस्म लतपथ था।।
रह गई बे तरह उलझकर वह, जाल में खुद-ब-खुद ही फँसकर वह।
पंख आपस में रह गये चिपक, अब हिले भी तो किस तरह से हिले।।
पाँव आपस में रगड़ने वह लगी, छूटने की बहुत ही कोशिश की।
सख्त लेकिन मुहाल था छूटना, चाशनी से वबाल था छूटना।।
अब बहुत रोई और पछताई, बात साथी की याद अब आई।
उसकीसचमुच ही बात सच्ची थी,मैंही बिल्कुल अक्ल की कच्ची थी।
लाख उसने मुझे नसीहत की, मगर मैंनें तो खुद फज़ीहत की।
होना पछताने से मगर क्या था, किया अपना ही पेश आना था।।
निकल पाई न, मर गई मक्खी, अपनी जिद्द पूरी कर गई मक्खी।
दूसरी का न कुछ भी बिगड़ सका, उसने जी भर के खूब खाया पिया।
थाल थे बीसियों मिठाई के, उमदा सब माल थे हलवाई के।
इस पे बैठी वहाँ से उड़कर वह, रह गई एक जा न गड़कर वह।।
भौंरा फिरता है बाग में जैसे, फूलों के चूसता है रह रह के।
सारे पक्कवानों को चखा उसने, सब का ही तो मज़ा लिया उसने।।
लेकिनअपने को फँसने भी न दिया,लतपथ अपने को होने भी न दिया।
चाशनी के गई न वह नज़दीक, काम उसने किया निहायत ठीक।।
खूब खा खा हुई निहायत शाद,रही आज़ाद की भी वह आज़ाद।
देखो अँजाम लोभी मक्खी का, उससे इसने सबक यही सीखा।।
कभी लालच न चाहिये करना,क्योंकि लालच में फँसना है मरना।
तुम भी समझो ज़रा कहानी को, कौन थी मक्खियाँ जो थीं दोनों।।
आओ हम तुम को बात समझायें,भेद सब खोलकर ही बतलायें।
एक है दुनियाँदार, इक साधो हैं यही मक्खियाँ जो थीं दोनों।।

दुनियाँ समझो मिठाई की है दुकाँ,हर तरह के यहाँ पे हैं सामाँ।
सब का लेते मज़ा हैं, फँसते नहीं,अकलमन्द लज़्ज़तों में धँसते नहीं।।
दुनियाँ की लज़्ज़तों में फँस फँसकर,दुनियाँदार हैं खुआर धँस धँसकर।
हुये लतपथ नफस की लज़्ज़त में, ज़िन्दगी खोते हैं इसी लत में।।
साधु समझाते हैं बहुत लेकिन, मानता ही नहीं जो उनका मन।
दौड़ते हैं वे चाशनी की तरफ, न नसीहत का एक सुनते हरफ।।
आकबत अपनी खुआर करते हैं,लज़्ज़ते-नफस पे वे मरते हैं।
याद रखो मगर नसीहत यह, लज़्ज़ते-दुनियाँ है फज़ीयत यह।।
दुनियां में रहना, मगर फँसना नहीं,किसी फंदे में तुम अटकना नहीं।
साधुओं की तरह रहो आज़ाद, जो फँसा, वह हुआ है बस बर्बाद।।
रहना दुनियाँ में इस तरह बिल्कुल,दास पानी में जिस तरह से कमल।

तीन मित्र

कहते हैं एक शख्स के थे तीन दोस्त मेहर।
इनमें से एक पर वह दिलो-जाँ से था फिदा।।
हर बात में था उसकी 1रफाकत का 2 एतमाद।
हर काम में उसी की मदद का था आसरा।।
रखता था उस को जान से ज़्यादा अज़ीज़ वह।
दम भर का भी 3 फिराक तबीयत को 4शाक था।।
था दूसरा भी यूँ तो अज़ीज़ उसको 5बेशतर।
पहले का 6लेक नम्बर रहा सदा।।
8वकअत न तीसरे की थी उसकी निगाह में।
उसको नहीं समझता था वह 9यारे-बावफा।।
अब सुनिये इत्फाक कि इस शख्स पर कभी।
दायर मुकद्दमा जो अदालत में हो गया।।
अज़ बसकि ऐतमाद था यारों की ज़ात पर।
तीनों को उसने 10 बहरे-गवाही तलब किया।।
याराने-बासफा जो सफाई के हों गवाह।
मुल्ज़िम के साफ छूटने में शक नहीं ज़रा।
लेकिन सब पहला दोस्त कि था जान से अज़ीज़।
और जिसका एतबार था और ऐतमाद था।।
वक्त आया जब तो 11हके-रफाकत को छोड़कर।
हमराह यार के न कचहरी तलक गया।।
साथ आया तो कचहरी के दरवाज़े तक मगर।
अन्दर न साथ उसके गया यार दूसरा।
दोनों अज़ीज़ यारों ने धोखा दिया जो यूँ।
उसको न तीसरे का भी कुछ आसरा रहा।।

लेकिन गया कचहरी के अन्दर वह उसके साथ।
12हक-हक जो बात थी वह कही 13रास्त-ो-बरमला।।
हाकिम से अपने दोस्त की सब खूबियाँ कहीं।
और इस तरह कि हो गया वह ज़ुर्म से रिहा।।
समझा भी मेहर कौन है वह शख्स कौन दोस्त।
14अहवाल जिनका15नज़्म में16यकसर17रकम हुआ।।
वह शख्स तू है और कोई दूसरा नहीं।
वह यार भी तेरे ही हैं सोचे अगर ज़रा।
18 ज़र है तेरी निगाह में सबसे अज़ीज़ दोस्त।।
पर यह न काम आयेगा तू 19याँ से जब चला।
समझा है दूसरा जिसे तू यार20दिलनवाज़।।
ऐ बेखबर वे हैं तेरे 21यारानो-अकरबा।
हमराह तेरे आयेंगे ये कब्र तक मगर।
आगे न कोई साथ गया है न जायेगा।।
वह यार तीसरा कि नहीं जिसकि तुझको कद्र।
22आमाल नेक हैं तेरे 23हमराह 24दायमा।।
तुझको जो बख्शवायेंगे तो ये न कोई और।
ये 25 यारे-गमगुसार हैं ये 26 यारे-बावफा।।
आमाल नेक कर कि इन आमाल नेक से।
यहाँ भी तेरा भला हो वहाँ भी तेरा भला।।

1-मित्रता 2-विश्वास 3-वियोग 4-असह्य 5-अधिकतर 6-परन्तु 7-प्रथम 8-महत्ता 9-विश्वासी मित्र 10 गवाही के वास्ते 11-मित्रता का हक 12-सच सच 13-वैसी की वैसी सच 14-हाल 15-कविता 16-सम्पूर्ण 17-वर्णित 18-धनसम्पदा 19-यहाँ 20 प्यारा 21-निकटतम सम्बन्धी 22-शुभकर्म 23-साथ 24-सदैव 25-हमदर्द यार 26 विश्वास पात्र मित्र

विद्या का अभिमान

जो विद्या बहुत पढ़ जीवन में, स्वयं को समझे है बहुत बड़ा।
पर अमल करे न राई भी, जो कुछ उसने ग्रन्थों में पढ़ा।।
विद्वान कहाये बेशक वो, जग में भी बेशक इज़्ज़त हो।
पढ़ कर क्या लाभ लिया उसने, यदि अमल करे न उस पर वो।।
बेशक अभिमान में फूला रहे, अपनी विद्या पर गर्व करे।
पर जीवन ऐसे मानुष का, विरथा निष्फल बिन अमल किये।।
बातों से कुछ भी बने नहीं, बस अमल से बनता है जीवन।
सब ग्रन्थ सन्त यही कहते हैं, विद्या से जग में है बड़ा आचरण।।
विद्या का असली लाभ तभी, जब मानुष उस पर अमल करे।
वचनों को मान महापुरुषों के, जो अमल करे सो भव से तरे।।
विद्या पढ़ करता अमल नहीं, सो निश्चय भव में डूबेगा।
अभिमान की पोट हो जिस सिर पर,वो पार कभी नहीं पहुँचे गा।।
श्री परमहंस दयाल जी ने इक दिन, किस्सा इक अजब सुनाया था।
अपने श्री पावन वचनों में, आचरण को श्रेष्ठ बताया था।।
इक विद्वान महोदय एक दिवस, जा पहुँचे एक नदी के तट।
उस पार नदी के जाने को, चाहिये थे नाव और केवट।।
देखी इक नैया खड़ी वहाँ, जा बैठे उस नैया में वो।
बोले विद्वान महोदय फिर, ऐ माँझी शीघ्र उस पार चलो।।
था माँझी नाव का अति वृद्ध ,नाव धीरे धीरे खेने लगा।
ऊपर आकाश को ओर देख, विद्वान ने केवट से पूछा।।
अरे भाई ज़रा बताना तो, जो पूछ रहा हूँ मैं तुमसे।
तुमको तो खूब ज्ञान होगा, खगोल शास्त्र के बारे में।।
केवट ने देखा उनकी तरफ, विद्वान की बात यह सुन करके।
बोला-साहिब मैं क्या जानूँ, आप पूछ रहे हैं क्या मुझ से।।

विद्वान महोदय बोल उठे, यह उत्तर सुन कर केवट का।
जीवन का चौथा भाग तेरा, अफसोस कि यूँ ही गया वृथा।।
नैया कुछ और बढ़ी आगे, तो विद्वान ने चारों तरफ देखा।
उस नदिया के दोनों ही ओर, लहलहाते खेतों को पेखा।।
सम्बोधित करके केवट को, विद्वान ने प्रश्न किया फिर से।
वनस्पति शास्त्र के बारे में, तो जानते होंगे तुम निश्चय ।।
विद्वान का प्रश्न सुनकर केवट,अत्यन्त विनम्रता से बोला।
मैने तो आज आप ही से, यह नाम है पहली बार सुना।।
उत्तर सुन कर यह केवट का, विद्वान वो हँस के कहने लगा।
तेरी उम्र का दूजा चतुर्थ भाग, समझो कि यूँही व्यर्थ गया।।
नाव कुछ आगे और बढ़ी, तो ध्यान विद्वान महोदय का।
दरिया में जो पानी बहता था, उस पानी की गति पे जा पड़ा।।
यह देख विद्वान महोदय वो, फिर से बिन पूछे रह न सके।
ऐ माँझी गणित शास्त्र में तो, तुम अवश्यमेव माहिर होंगे।।
मल्लाह तो बिल्कुल अनपढ़ था, वो गरीब बेचारा क्या कहता।
विद्वान का प्रश्न सुन करके वो, कुछ बोला नहीं खामोश रहा।।
खामोश जो देखा केवट को, विद्वान वो हँस के कहने लगा।
तेरी आयु का तीजा चतुर्थ भाग, बस मुफ्त में ही बरबाद हुआ।।
बातें ये हो ही रही थीं कि, हवा खूब ज़ोर से चलने लगी।
डगमगा के नैया इधर उधर, मानो दरिया में पलटने लगी।।
माँझी पानी में कूद पड़ा, जब पलटते देखा किश्ती को।
साहिब जलदी से कूद पड़ो, बोला विद्वान से माँझी वो।।
घबराये बहुत ये सुन करके, विद्वान महोदय दिल ही दिल।
बोले-कै कूदूँ भैया, हमें तैरना आता नहीं बिल्कुल।
विद्वान की पहली बातों से, वो माँझी था झल्लाया हुआ।

अब सुना जो उनका उत्तर यह, तो झट से ऐसा बोल उठा।।
तैरना यदि नहीं आता है, तो ऐ विद्वान महोदय जी।
फिर तो निश्चय ही समझ लो यह, हो गया गर्क सब जीवन ही।।
अपनी सारी विद्याओं को, अब दिल में अपने दोहराईये।
अपनी अन्तिम यात्रा के लिए, ऐ महोदय तत्पर हो जाईये।।
इतना कह करके माँझी वो, झट तैर नदी के पार हुआ।
मँझधार में डूब गए लेकिन, अभिमान जिन्हें था विद्या का।।
किस्सा यह सुना करके तब, श्री परमहंस दयाल जी ने फरमाया।
विद्वान ने पढ़ पढ़ सारी उमर, विद्या से लाभ उठाया क्या।।
विद्या का था अभिमान उसमे, अपने को बड़ा समझता था।
श्रेष्ठता अपनी सिद्ध करने को, किस कदर वो बातें करता था।।
उस गरीब बेचारे केवट पर, वो रोब जमाना चाहता था।
मैं कितना अधिक हूँ पढ़ा लिखा, उसको यह बताना चाहता था।।
इसमें सन्देह नहीं कुछ भी, विद्वान बहुत था पढ़ा लिखा।
पर अमल नहीं था राई भी, कथनी ही कथनी करता था।।
विद्या के गर्व में भरे हुए, जो केवल बातें करते हैं।
निश्चय ही डूबते भव-निधि में, हरगिज़ हरगिज़ नहीं तरते हैं।।
इसलिये गर्व का त्याग करो, चतुराई चालाकी छोड़ो।
और मान के सतपुरुषों के वचन, ऐ प्राणी उन पर अमल करो।।
पढ़ लो तुम जितनी भी ज्यादा, संसार की विद्या ऐ प्राणी।
बिन अमल नहीं कुछ बनने का, नहीं होती सफल यह ज़िन्दगानी।।
सन्तों के वचनों पर जो भी, श्रद्धा रख करके अमल करता।
चाहे वो बिल्कुल अनपढ़ हो, वो निश्चय भव से है तरता।।
इतिहास उठा कर देख लो तुम, मौजूद मिसालें कितनी ही।
जिन अमल किया प्रभु को पाया, बातों वाले रह गये सभी।।

सन्तों के वचन पे अमल करके, अनपढ़ भी जग में महान बने।
जग अन्दर फैला यश उनका, चरणों में उनके सभी झुके।।
इसलिए ऐ दासनदास गहो, तुम पूरन सतपुरुषों की शरण।
और वचन पे उनके अमल करके,करो सफल सकारथ यह जीवन।।

तीन प्रकार के श्रोता

एक नगर में एक सेठ जी, रहते थे बड़ी शान से।
लड़के थे तीन सेठ जी के, और तीनों ही जवान थे।।
चावल मिल थी सेठजी की, चारों ही वहाँ जाते थे।
प्रबन्ध के कार्य में लड़के भी,उस सेठ का हाथ बँटाते थे।।
इक दिन सेठ जी के मन में, बात उभर इक आई है।
लड़कों की परीक्षा लेने की, योजना उसने बनाई है।।
लड़कों को बुलवाया उसने, चल दिया साथ लेकर उनको।
जहाँ धान का ढेर था पड़ा हुआ, जा पहुँचे सब उस जगह पे वो।
इक इक मुट्ठी धान सेठ ने, तीनों को ही पकड़ाया है।
जब मैं माँगूँ वापिस देना, ये तीनों को समझाया है।।
कुछ दिन के लिए काम मिल का, तुम तीनों ही सँभाल लेना।
मैं काम दूसरे देखूँगा, तुम मिल के काम मे ध्यान देना।।
इतना कह करके लड़कों को, वो सेठ तो अपने घर को गए।
उस मुट्ठी धान के बारे में, तीनों लड़के अब सोच रहे।।
बड़े लड़के ने वो मुट्ठी धान, पुनः उसी ढेर में डाल दिया।
यहाँ धान की कमी तो रहती नहीं,उसने मनमें ये विचार किया।।
जब धान पिता जी माँगेंगे, मैं यहीं से उठा के दे दूँगा।
किसलिए सेठ ने धान दिया, यह भेद नहीं वो समझा था।।
दूसरा लड़का वो मुट्ठी धान, ले गया कार्यालय में अपने।
फिर बाँध के उसको कपड़े में, रखा अलमारी में उसने।।
कभी कभी धान की पोटली को, देख लिया करता था वो।
किस लिये सेठ ने धान दिया, भेद असली नहीं समझा था वो।।
था बुद्धिमान छोटा लड़का, मन ही मन उसने विचार किया।
क्यों धान दिया यह पिताजी ने,इसमेंअवश्य कुछ राज़ भरा।।

सोचते सोचते उसके मन में, एक विचार उभर आया।
उस विचार को फिर उसने, तुरन्त अमली जामा पहनाया।।
चावल मिलके इक कोने में, कुछ जगह को उसने साफ किया।
और वह मुट्ठी धान उसने, उस साफ जगह में बो दिया।।
समय आने पर उस स्थान से, उसे काफी धन प्राप्त हुआ।
तब फिरउस छोटे लड़के ने,कुछऔर जगह को साफ किया।।
और वह सारा धान उस ने, फिर पूरे खेत में बो दिया।
ऐसा करते करते उसके, पास धान का ढेर हुआ।।
इक दिन फिर उन सेठ जी ने, तीनों लड़कों को बुलवाया।
जो मुट्ठी भर था धान दिया, वह तीनों से फिर मंगवाया।।
मुट्ठी भर धान बड़े लड़के ने, झट लाकर आगे रख दिया।
बेटा यह ते वह धान नहीं, सेठ ने उस लड़के से कहा।।
लड़का बोला अपने पिता से, मैंने मन में विचार किया।
यहाँ धान की कमी नहीं रहती, जब माँगोगे तब दे दूँगा।।
मैने धान ढेर में डाल दिया, मन में ऐसा विचार करके।
अब आपने माँगा तो मैंने, झट लाकर दे दिया ढेरी से।।
उत्तर सुन कर उस लड़के का, सेठ जी बहुत नाराज़ हुए।
दूसरे लड़के की ओर देख, उसको फिर वे यूँ कहने लगे।।
उस धान का क्या किया तुमने, ज़रा तुम भी लाकर दिखलाओ।
तुम्हरे दिमाग में क्या आया, वह भी ज़रा मुझको समझाओ।।
उस धान को बाँध के पोटली में, मैंने अलमारी में है रखा।
झट अपने कमरे में जाकर, वह धान की पोटली ले आया।।
जब सेठ ने खोल के देखा उसे, सब धान था काला पड़ा हुआ।
उस धान की ऐसी दशा देख, उसको भी सेठ नाराज़ हुआ।।
कहा तीसरे लड़के से उसने, फिर मुट्ठी धान दिखलाने को।

हे पिता श्री, लड़का बोला, नहीं धान यहाँ आ सकेगा वो।।
आप मेरे साथ चलें यदि तो, तब ही वह धान दिखाऊँ मैं।
अपनी सारी मेहनत का फल, है पिता श्री दिखलाऊँ मैं।।
सब ने जा करके देखा फिर, धान जो उसने बोये थे।
एक शेड के नीचे चावल भी, रखे बोरों में भरे हुए।।
फिर सेठ से बोला वह लड़का, इक मुट्ठी धान यह है सारा।
क्या मतलब सेठ जी ने पूछा, सब खोल के करो ब्यान ज़रा।।
तब उसने अपनी मेहनत का, सब खोल के हाल सुनाया है।
कैसे यह धान बढ़ा इतना, सब भेद उन्हें बतलाया है।।
यह सब देख के सेठ बहुत, प्रसन्न हुए उस लड़के पर।
हैरान हुए दोनों भाई, सब कुछ देखकर और सुन कर।।
बस इसी तरही ही तीन तरह, के होते सतसंग वाले।
अपनी अपनी समझ मुताबिक, सतसंग का लाभ लेने वाले।।
सुन करके वहीं छोड़ देते, हैं पहली तरह के श्रोता जो।
इक कान से सुन करके सतसंग, दूजे निकाल देते हैं वो।।
दूसरी तरह के श्रोता जो, वचनों को ध्यान से सुनते हैं।
सुन करके व अनमोल वचन, हिरदे में धारण करते हैं।
इन वचनों को वे कभी कभी, बस दिल में याद कर लेते हैं।
जग के धन्धों में उलझ के फिर, इन वचनों को भुला देते हैं।।
पर तीसरी तरह के श्रोता जो, वे सबसे उत्तम होते हैं।
सतसंग में सुन कर सदवचन, उन पर अमल वे करते हैं।।
ऐसे श्रोता सही अर्थों में, सतसंग का लाभ उठाते हैं।
वचनों में ढाल कर जीवन को, वे जन्म सफल कर जाते हैं।।
उनका जीवन ही ऐ दासा, इस जग में धन्य कहलाता है।
जिन का सतगुरु के वचनों पर, दृढ़ विश्वास हो जाता है।।

शहनशाह सिकन्दर और आबे हयात

शहनशाह सिकन्दर की कहानी हमें, आज याद हो आई है।
किस तरह उसने मन के हाथों, देखो मुँह की खाई है।।
हज़रते खिज़र की सिकन्दर से, एक दफा जब भेंट हुई।
बातों बातों में सतपुरुषों से, आबे-हयात की भनक पड़ी।।
आबे-हयात को पीने से, इन्सान अमर हो जाता है।
फिर जब तक दुनियाँ रहे कायम, तब तक वो ज़िन्दा रहता है।।
बस फिर क्या था सिकन्दर के मन, यह इच्छा हुई अति भारी।
इसे पीकर अमर हो जाऊं मैं, करूँ राज फिर सृष्टि पर सारी।।
यह सोच के शाह सिकन्दर ने, फिर हज़रत खिज़र से यह पूछा।
यह आबे-हयात मिलेगा कहाँ, रहमत कर बतलाइये रस्ता।।
हज़रत ने शाह सिकन्दर को, उस जगह का रस्ता समझाया।
जिधर किया इशारा हज़रत ने, उसी राह पे पग उसने बढ़ाया।।
रस्ता था बहुत ही खतरनाक, बड़ी ऊबड़ खाबड़ थी घाटी।
लेकिन था सिकन्दर शेर दिल, था बड़ा ही दिल का वो साहसी।।
आबे-हयात के चश्मे पर, शाह सिकन्दर आखिर पहुँच गया।
अमृत का चश्मा देख के वो, मन ही मन बहुत प्रसन्न हुआ।।
ज्यों ही झुक कर वो हाथों से, अमृत का घूँट था भरने लगा।।
त्यों ही इक फड़फड़ाता कौआ, सिकन्दर के आगे आन गिरा।।
बोला सिकन्दर, इसे मत पीना, पहले मेरी तरफ तो देख ज़रा।
था घूँट भरा इक मैंने भी, तू मेरी हालत पेख ज़रा।।
अब न जीने के काबिल हूँ, और न ही अब मैं मरता हूँ।
ऐ सिकन्दर इस अमृत को पी, अब फकत तड़पता फिरता हूँ।।
कौए की बात को सुन करके, सिकन्दर ने इरादा बदल दिया।
वो आबे-हयात को पिये बिना, उसी राह पे वापिस लौट गया।।

इस तरह हाथ में आया हुआ, खोया उसने यूँ ही मौका।
नहीं मान के महापुरुषों का वचन, कौए पे उसने यकीन किया।।
इस कथा को गौर से पढ़ करके, करो इसपे भला विचार ज़रा।
है सिकन्दर कौन, कौन कौआ, और अमृत वास्तव में है क्या।।
है जीव सिकन्दर और कौआ मन, आबे-हयात सत्तनाम का है।
सतपुरुषों से ही पता चलता, कहाँ पे अमृत का चश्मा है।।
पर मन मूज़ी रूपी कौआ, इस जीव को सदा भरमाता है।
यह जीव धोखे में मन के आ, नाम अमृत पी नहीं पाता है।।
जब भक्ति-पथ पर चलता प्राणी, कुछ कठिनाईयाँ तो आती हैं।
लोक-लाज इज़्ज़त और रूतबा, ये सब ही दिल भरमाती हैं।।
फिर भी कोशिश करके प्राणी, मन्ज़िल जब तय कर लेता है।
नाम-अमृत का कुण्ड देख करके, प्राणी अनायास यह कहता है।
जी भर के पिऊँगा मैं अमृत, और सारी तुषा बुझाऊँगा।
नाम रूपी अमृत पी करके, मैं सदा अमर हो जाऊँगा।।
पर मन रूपी कौआ उसको, तब ऐसे बोल सुनाता है।
अमृत के पीने से पहले, कई संशय सामने लाता है।।
जिससे यह जीव भरम करके, कर देता नाम अमृत का त्याग।
सुनकर कहते हैं महापुरुष, हैं प्राणी तेरे मन्द भाग।।
चिरकाल के बाद मिला था यह, तुझको स्वर्णिम अवसर प्यारा।
मन पापी के कहने पर प्राणी, तूने खेल बिगाड़ दिया सारा।।
तुझे बार बार यह चाँस मिले, ऐसा होना आसान नहीं।
पर बिन नर तन के अमृत का, हरगिज़ कर सकता पान नहीं।।
अब भी अवसर है ऐ प्राणी, अवसर से लाभ उठा लो तुम।
करके एकाग्र सुरति अपनी, दशम द्वार पहुँचा लो तुम।।
रहो सावधान मन मूज़ी से, इसकी चालों में न आओ तुम।

जितने भी रंग दिखाये यह, बिल्कुल भी न भरमाओ तुम।।
तुम वचन मान सतपुरुषों के, दास अपने भाग जगाओ जी।
नाम अमृत का रस पान करो, और सदा अमर हो जाओ जी।।

इब्राहीम अधम और फरिश्ता

हज़रत इब्राहीम अधम सो रहे थे एक1शब।
2ख्वाब से चौंके तो 3मंज़र कुछ नज़र आया 4अजब।।
देखते क्या हैं कि 5नूर-अफशाँ है 6माहे-पुर ज़िया।
और 7मिस्ले-गुल 8शिगुफ्ता इक फरिश्ता है खड़ा।।
लिख रहा है कुछ 9किताबें-ज़र में वह 10कुदसी सिफात।
11हिम्मत-अफ्ज़ा देख कर उसकी 12निगाहे-इल्तिफात।।
बोले अधम आप क्या लिखते हैं यह है क्या किताब।
मुसकरा कर यूँ 13लताफत से दिया उसने जवाब।।
14आशिकाने-हक के नामों की यह है 15 फहरिस्ते-आम।
पूछा अधम ने कि इस में है कहीं मेरा भी नाम।।
आप का 16इस्मे-गरामी तो जनाब इस में नहीं।
सुन के यह कहने लगे अधम 17बा-आवाज़े-हज़ीं।।
18आशिके-यज़्दां अगर बनने के 19लायक मैं नहीं।
उसके बन्दों से तो है मुझको मुहब्बत 20 बिलयकीं।।
आप इन्सानों के हमदर्दों में लिख लें मेरा नाम।
21खिदमते-खल्के-खुदा मेरा है इक 22मरगूब काम।।
23 इस्बे-इस्तिदआ फरिश्ता नाम लिखकर चल दिया।
दूसरी शब फिर बड़ी इक शान से हाज़िर हुआ।।
और इक फहरिस्त इब्राहीम के हाथों में दी।
चाहता है खुद खुदा जिनको यह उन लोगों की थी।।
देखते ही हज़रत अधम की बाछें खिल गईं।
क्योंकि उसमें था उन्हीं का नाम सबसे 24अव्वलीं।।

1-रात 2-स्वप्न 3-दृश्य 4-अनोखा 5-प्रकाशमान 6-प्रकाश से पूर्णचन्द्रमा 7-पुष्प के सदृश 8-खिला हुआ 9-स्वर्ण की पुस्तक 10-दैवी गुण 11-साहस बढाने वाली 12 दयादृष्टि 13नर्मी से 14-प्रभु प्रेमियों, 15-सूची 16-नाम 17-दुःखपूर्ण वाणी 18-प्रभु प्रेमी 19-योग्य 20-निश्चित रुप से 21-ईश्वर द्वारा उत्पन्न प्राणियों की सेवा करना 22-प्रिय मन पसन्द 23-प्रार्थना के अनुसार 24-प्रथम